ॐ

।। श्री सीमन्धरतीर्थंकराय नमः।।

श्री वीतराग पूजा मंजरी

संपादन
पण्डित संजय शास्त्री
सर्वोदय अहिंसा जयपुर

प्रकाशक

श्री कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट
देवनगर कॉलोनी, इटावा रोड, भिण्ड (म.प्र.) 477001
फोन : 98266 46644, 98264 72529

कृति : श्री वीतराग पूजा मंजरी

प्रथम संस्करण : 4000 प्रतियाँ
प्रकाशन तिथि : 7 मई 2017

द्वितीय संस्करण : 1000 प्रतियाँ
प्रकाशन तिथि : 26 जनवरी, 2023
शुभ प्रसंग : पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव : ढाईद्वीप जिनायतन, इन्दौर

तृतीय संस्करण : 2000 प्रतियाँ
शुभ प्रसंग : पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव : ढाईद्वीप जिनायतन, इन्दौर

सहयोग राशि : 60/-

प्राप्ति स्थान : **श्री कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट**
देवनगर कॉलोनी, इटावा रोड,
भिण्ड (म.प्र.) 477001
फोन : 98266 46644, 98264 72529

सुखी होने का उपाय

अनादि निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नहीं हैं, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होतीं।

– मोक्षमार्ग प्रकाशक, छठवाँ अधिकार, पृष्ठ 52

टंकण-मुद्रण

प्री ऐलविल सन (संजय शास्त्री), सर्वोदय अहिंसा, जयपुर 9509232733

प्रकाशकीय

अहो! देव-गुरु-धर्म तो सर्वोत्कृष्ट पदार्थ हैं, इनके आधार से धर्म है, इनमें शिथिलता रखने से अन्य धर्म किस प्रकार सधेगा। – मोक्षमार्गप्रकाशक

आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी का उक्त वाक्य विचारणीय तो है ही, अनुकरणीय भी है। देव-शास्त्र-गुरु की पूजा, भक्ति, सेवा, वैयावृत्ति, प्रभावना से ही हमारा जीवन सफल है। भव्यजीव भगवन्तों की पूजन, दर्शन आदि से विषय-कषायादि भावों को तत्त्वचिन्तन व भक्ति-भावना के बल से घटाते एवं मिटाते हैं। तथा मोक्षमार्गस्वरूप सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की ओर बढ़ते हैं।

प्रस्तुत प्रकाशन **श्री वीतराग पूजा मंजरी** में प्राचीन एवं **आदरणीय बाल ब्र. रवीन्द्र जी 'आत्मन्'** द्वारा रचित अध्यात्मरस से ओत-प्रोत अधिकांश पूजनों का समावेश तो है ही। साथ ही पूर्व में प्रचलित सभी पूजनें भी सम्मिलित की गई हैं, जिससे यह संस्करण सर्वोपयोगी बन गया है।

सभी साधर्मी पूजनों में आये भावों का चिन्तन-मनन करते हुए देव-गुरु-धर्म के प्रति बहुमान-भाव हृदय में जागृत करें, आनन्दित होकर आत्मकल्याण की ओर बढ़ें। – यही भावना है।

ट्रस्ट प्रकाशन हेतु अर्थ-सहयोगियों, ट्रस्टियों, साधर्मी जनों एवं प्रत्यक्ष-परोक्ष सभी सहयोगियों का आभार व्यक्त करता है।

संपादन एवं मुद्रण व्यवस्था सँभालने हेतु पण्डित संजय शास्त्री (सर्वोदय अहिंसा), जयपुर के भी आभारी हैं।

अध्यक्ष

सुरेश जैन

श्री कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट

देवनगर, भिण्ड

अनुक्रमणिका

विषय वस्तु	रचयिता	पृष्ठ
1. मंगल प्रभात-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	8
2. मंगल प्रभात-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	8
3. देव-दर्शन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	9
4. दर्शन स्तुति-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	9
5. दर्शन स्तुति-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	10
6. जिनदर्शन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	11
7. नवदेव भक्ति	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	11
8. मंगलाष्टक	–	12
9. मंगलाष्टक (भाषा)	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	14
10. जिनप्रतिमा प्रक्षाल पाठ-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	15
11. प्रतिमा प्रक्षाल पाठ-2	पंडित अभयकुमारजी	16
12. लघु प्रक्षाल पाठ		20
13. विनय पाठ-1	पंडित नाथूरामजी	21
14. पूजा पीठिका (संस्कृत)		23
15. पूजा पीठिका (भाषा)-1		27
16. विनय पाठ-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	32
17. पूजा पीठिका (भाषा)-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	33
18. श्री समुच्च्य पूजन	ब्र. सरदारमलजी	36
19. श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन-1	श्री बाबू 'युगल' जी	39
20. श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	44
21. श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन-3	डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल	47
22. श्री सिद्ध पूजन-1	श्री बाबू 'युगल' जी	52
23. श्री सिद्ध पूजन-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	57
24. श्री सिद्ध पूजन-3	डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल	60
25. श्री पंच परमेष्ठी पूजन	श्री राजमलजी पवैया	65
26. श्री सीमन्धर पूजन-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	68

27. श्री सीमन्धर पूजन-2	डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल	72
28. श्री आदिनाथ पूजन	पंडित जिनेश्वरदासजी	76
29. श्री महावीर पूजन	डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल	80
30. श्री बाहुबली पूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	84
31. श्री पंच बालयति जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	87
32. श्री नवदेवता पूजन	श्री राजमलजी पवैया	92
33. श्री वर्तमान चौबीसी पूजन 1	श्री वृन्दावनदासजी	96
34. श्री वर्तमान चौबीसी पूजन 2	श्री कुमरेशजी	99
35. श्री विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन	कविवर द्यानतरायजी	103
36. श्री विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	106
37. श्री तीस चौबीसी पूजन	कवि भानमलजी	109
38. श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म पूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	116
39. श्री वीतराग पूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	120
40. श्री जिनवाणी पूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	125
41. श्री मुनिराज पूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	129
42. श्री आदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वर	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	132
43. श्री शान्ति-कुन्थु-अरनाथ पूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	136
44. श्री आदीश्वर-महावीर-सीमंधर	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	140
45. श्री निर्वाणक्षेत्र पूजन-1	पंडित द्यानतरायजी	144
46. श्री निर्वाणक्षेत्र पूजन-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	147
47. श्री नन्दीश्वरद्वीप पूजन-1	पंडित द्यानतरायजी	150
48. श्री नन्दीश्वरद्वीप पूजन-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	154
49. श्री पंचमेरु पूजन-1	पंडित द्यानतरायजी	157
50. श्री पंचमेरु पूजन-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	160
51. श्री सोलहकारण पूजन-1	पंडित द्यानतरायजी	163
52. श्री सोलहकारण पूजन-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	167
53. श्री दशलक्षण धर्म पूजन-1	पंडित द्यानतरायजी	170
54. श्री दशलक्षण धर्म पूजन-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	176

55. श्री सम्यक् रत्नत्रयधर्म पूजन-1	पंडित द्यानतरायजी	182
56. श्री रत्नत्रय पूजन-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	190
57. श्री क्षमावाणी पूजन-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	194
58. श्री क्षमावाणी पूजन-2	कवि राजमलजी पवैया	197
59. श्री अक्षय तृतीया पूजन-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	203
60. श्री अक्षय तृतीया पूजन-2	कवि राजमलजी पवैया	207
61. श्री श्रुतपंचमी पूजन-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	211
62. श्री श्रुतपंचमी पूजन-2	कवि राजमलजी पवैया	214
63. श्री वीरशासन जयंती पूजन-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	218
64. श्री वीरशासन जयंती पूजन-2	कवि राजमलजी पवैया	221
65. श्री रक्षाबन्धन पर्व पूजन-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	226
66. श्री रक्षाबन्धन पर्व पूजन-2	कवि राजमलजी पवैया	230
67. श्री दीपमालिका पर्व पूजन	कवि राजमलजी पवैया	235
श्री चौबीस तीर्थंकर पूजन एवं विधान : पीठिका		241
1. श्री चौबीस तीर्थंकर पूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	246
2. श्री ऋषभदेव जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी ' आत्मन्'	250
3. श्री अजितनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	256
4. श्री सम्भवनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	260
5. श्री अभिनन्दननाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	264
6. श्री सुमतिनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	268
7. श्री पद्मप्रभ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	271
8. श्री सुपार्श्वनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	276
9. श्री चन्द्रप्रभ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	279
10. श्री पुष्पदन्त जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	283
11. श्री शीतलनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	287
12. श्री श्रेयांसनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	290
13. श्री वासुपूज्य जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	294
14. श्री विमलनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	298
15. श्री अनन्तनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	302
16. श्री धर्मनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	305

17. श्री शान्तिनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	310
18. श्री कुन्थुनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	314
19. श्री अरनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	318
20 .श्री मल्लिनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	322
21. श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	326
22. श्री नमिनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	330
23. श्री नेमिनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	333
24. श्री पार्श्वनाथ जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	337
25. श्री महावीर जिनपूजन	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	341
समुच्चय जयमाला	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	345
अर्घ्यावली		
तीस चौबीसी का अर्घ्य		346
अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घ्य		346
श्री चौबीस तीर्थंकरों को अर्घ्य-1	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	347
श्री चौबीस तीर्थंकरों को अर्घ्य-2	विविध	350
श्री पंचबालयति, 24तीर्थंकर, सीमंधर, विद्यमान 20तीर्थंकर के अर्घ्य		357
श्री देव-शास्त्र-गुरु, पंच परमेष्ठी, सिद्ध परमेष्ठी के अर्घ्य		358
श्री बाहुबली, सप्तर्षि, जिनवाणी, पंचमेरु के अर्घ्य		359
श्री नन्दीश्वर, सोलहकारण, दशलक्षण, रत्नत्रय के अर्घ्य		360
श्री मानस्तंभ, समवशरण, निर्वाणक्षेत्र, तीर्थक्षेत्र, अष्टापद के अर्घ्य		361
श्री सम्मेदशिखर, चम्पापुर, गिरनार, पावापुर के अर्घ्य		362
समुच्चय महार्घ्य-1		363
शान्ति पाठ-1		364
समुच्चय महार्घ्य-2		364
शान्ति पाठ-2	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	366
क्षमापना	ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'	366
शान्ति पाठ-3		367
निर्वाणकाण्ड (भाषा)	भैया भगवतीदासजी	370
देव स्तुति	कवि बुधजनजी	373

मंगल-प्रभात-1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

है ज्ञान-सूर्य का उदय जहाँ, मंगल प्रभात कहलाता है।
मिथ्यात्व महातम हो विनष्ट, सम्यक्त्व कमल विकसाता है।।1।।
वस्तु का रूप यथार्थ दिखे, नहिं इष्ट-अनिष्ट दिखाता है।
है भिन्न चतुष्टयवान द्रव्य, पर लक्ष्य नहीं हो पाता है।।2।।
अतएव विकारी भाव रहित, निज सुख अनुभूति होती है।
फिर स्वयं तृप्त उस ज्ञानी के, इच्छा पिशाचनी भगती है।।3।।
तत्क्षण संवरमय भावों से, नव बंध-पद्धति रुकती है।
झड़ते हैं स्वयं कर्म बंधन, शिवरमणी उसको वरती है।।4।।

मंगल-प्रभात-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

शोभे समवशरण सुखकार, प्रभु का समवशरण सुखकार।।टेक।।
अन्तरीक्ष जिनराज विराजे, अपने ही आधार।
मानो कहते हैं हम सबसे, पर-आश्रय दुखकार।।1।।
प्रभु-चरणों में इन्द्रादिक के, मुकुट झुके अविकार।
मानों दर्शावें हम सबको, जग का विभव असार।।2।।
ढुरते चौंसठ चमर कहत हैं, जिनपद ही है सार।
जो अपने प्रभुवर को झुकते, वे होते भवपार।।3।।
अनन्त-चतुष्टय-युत प्रभुवर की, महिमा अपरम्पार।
दर्शावें निज शुद्धातम की, ध्रुव प्रभुता अविकार।।4।।
शुद्धातम ही श्री जिनवर की, दिव्यध्वनि का सार।
अहो! अनुभवें आनन्दित हों, सहज नमन अविकार।।5।।

देव-दर्शन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

तीन भुवन के स्वामी मेरे, आया सुखद सबेरा।
आनन्द उर न समाये, प्रभुवर दर्शन पाया तेरा।।टेक।।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, हम सुनी नहीं जिनवाणी।
कर्ता-धर्ता तुमको माना, कर बैठा नादानी।।
तुम तो साक्षीभूत जगत के, दूर हुआ भ्रम मेरा।।1।।
कण-कण है स्वाधीन जगत का तुमने प्रभु बतलाया।
निज-पर के कर्तापन का भ्रम जिनवर दूर भगाया।।
सर्व विकल्प शून्य आनन्दमय, जिनवर दर्शन तेरा।।2।।
तन-मन कर्म रंग-रागादिक देते भिन्न दिखाई।
सम्यग्ज्ञान कला उर जागी, निज प्रभुता मैं पाई।।
मुक्त स्वरूप अहो प्रकटा अब, सफल हुआ भव मेरा।।3।।
सम्यक् हुई प्रतीति प्रभुवर, तुम सम ही प्रभु मैं हूँ।
हूँ गुणधाम सहज अभिराम, सु आनन्द धाम सदा हूँ।।
निज में ही रम जाऊँ विभुवर, अभिनन्दन है तेरा।।4।।

दर्शन-स्तुति-1

(तर्ज-निरखी निरखी मनहर मूरति...)

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

लखी-लखी प्रभु वीतराग छवि, आज मैं जिनेन्द्रा।
भूली-भूली निज निधि पाई, आज मैं जिनेन्द्रा।।टेक।।
तुम्हें देखकर अब तो मैंने, निज को निज से जान के।
निज का शाश्वत वैभव पाया, आपा स्वयं पिछान के।।
पर आश्रय के सब दुख विनशे, आज हो जिनेन्द्रा।।लखी.. 1।।

आतम सुखमय सुख का कारण, आज स्वयं ही देखा है।
आतम के आश्रय से जिनवर, मिटे करम की रेखा है।।
अपने में स्थिरता पाऊँ, चाहूँ यही जिनेन्द्रा।।
लखी-लखी प्रभु वीतराग छवि, आज मैं जिनेन्द्रा।।लखी..2।।

तुझ-सी ही प्रभुता है निज में, नहीं मुझे कुछ करना है।
'है' की मात्र प्रतीति अनुभव, थिरता से शिव होना है।।
सब सकल्प-विकल्परहित हो, निज ध्याऊँ जिनेन्द्रा।।लखी..3।।

दर्शन-स्तुति-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

नाथ तुम्हारे दर्शन से, निज दर्शन मैंने पाया।
तुम जैसी प्रभुता निज में लख, चित मेरा हर्षाया।।टेक।।

तुम बिन जाने निज से च्युत हो, भव-भव में भटका हूँ।
निज का वैभव निज में शाश्वत, अब मैं समझ सका हूँ।।
निज प्रभुता में मगन होऊँ, मैं भोगूँ निज की माया।।नाथ.।।

पर्याय में पामरता, तब भी द्रव्य सुखमयी राजे।
लक्ष्य तजूँ पर्यायों का, निजभाव लखूँ सुख काजे।।
पर्यायों में अटक-भटक कर, मैं बहु दुःख उठाया।।नाथ.।।

पद्मासन थिर मुद्रा, स्थिरता का पाठ पढ़ाती।
निजभाव लखे से सुख होता, नासादृष्टी सिखलाती।।
कर पर कर ने कर्तृत्व रहित, सुखमय शिवपंथ सुझाया।।नाथ.।।

यही भावना अब तो भगवन, निज में ही रम जाऊँ।
आधि-व्याधि-उपाधि रहित, मैं परमसमाधि पाऊँ।
ज्ञानानन्दमय ध्रुव स्वभाव ही, अब मेरे मन भाया।।नाथ.।।

जिन-दर्शन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

आज अद्भुत छवि निज निहारी, भाव दूर भगे सब विकारी।
पूर्ण प्रभुता प्रभु सी लखाई, दीनता आज सारी पलाई।।टेक।।

मैं स्वयं ही सहज सुख सागर, चेतनादिक गुणों का हूँ आगर।
शक्ति शाश्वत अपरिमित सु-धारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।1।।

निज प्रदेशत्व रूपी किला है, जो कभी न किसी से भिदा है।
कर्म रागादि भी रहते बाहर, पैठ पायें कदापि न अन्दर।
अन्तरंग में सदा अविकारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।2।।

भूल से हीन मैंने था माना, आज देखा स्वयं का निधाना।
अहा! वैभव अगुरुलघु ही पाया, द्रव्यपन ज्यों का त्यों ही लखाया।
अब जरूरत सभी की विसारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।3।।

जागी सम्यग्ज्ञान कला है, दूर भागी मिथ्यात्व बला है।
मुक्ति मुझको तो मुझमें ही दिखती, दृष्टि बाहर कहीं भी न टिकती।
होवे थिरता प्रभो सुखकारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।4।।

धन्य अवसर प्रभो आज पाया, मुझे निज का माहात्म्य दिखाया।
निज ही सर्वोत्कृष्ट सही है, कामना अब नहीं कुछ रही है।
मैं तो मंगलमय चिन्मूर्तिधारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।5।।

नवदेव-भक्ति

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

द्रव्य नमन हो भाव नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।
मन-वच-काया से करूँ नमन।।टेक।।

तीर्थ-प्रणेता श्री तीर्थंकर, वीतराग सर्वज्ञ हितंकर।
अरहंतों को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।1।।

सर्व कर्ममल से वर्जित प्रभु, ज्ञानशरीरी अशरीरी विभु।
सिद्ध प्रभु को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।2।।
पंचाचार परायण ज्ञायक, साधु संघ के सुखमय नायक।
आचार्यों को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।3।।
शास्त्र पढ़ाने के अधिकारी, तत्त्वज्ञान देते अविकारी।
उपाध्याय को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।4।।
निज स्वभाव के उत्तम साधक, रत्नत्रय के जो हैं धारक।
निर्ग्रन्थों को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।5।।
समवसरण-सम श्रीजिनमंदिर, जिन-सम जिनप्रतिमा है सुन्दर।
भक्ति भाव से करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।6।।
तरण-तारणी श्री जिनवाणी, पढ़ें-पढ़ावें नित ही ज्ञानी।
हर्षित होकर करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।7।।
अनेकांतमय शाश्वत दर्शन, परम अहिंसामयी आचरण।
जैनधर्म को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।8।।
इनसे सम्बन्धित सुखकारी, धर्म आयतन मंगलकारी।
यथायोग्य मैं करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।9।।

मंगलाष्टक

(शार्दूलविक्रीडित)

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः।
श्रीसिद्धान्तसुपाठकाः मुनिवराः रत्नत्रयाराधकाः
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मंगलम्।।1।।

श्रीमन्नम्र - सुरासुरेन्द्र - मुकुट - प्रद्योत - रत्नप्रभा
भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिनसिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्च गुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।2।।
सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्री नगराधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्रयालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम्।।3।।
नाभेयादि-जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णुप्रतिविष्णु-लाङ्गलधराः सप्तोत्तरा विंशतिः,
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।4।।
ये सर्वौषध-ऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगता पञ्च ये,
ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशला येऽष्टाविधाश्चारणाः।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धि-ऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।5।।
कैलाशे वृषभस्य निर्वृति-मही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।6।।
ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बूशाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रौप्याद्रिषु।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।7।।

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा सम्पादितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मंगलम्।।8।।

इत्थं श्री जिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्पत्प्रदम्,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणां मुखात्।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रियते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि।।9।।

मंगलाष्टक–भाषा

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

वीतराग–सर्वज्ञ हितकर, त्रिभुवन स्वामी जो सुखकार।
भक्ति सहित हम करें स्मरण, श्री अरहंत हो मंगलकार।।1।।

ज्ञानशरीरी अशरीरी प्रभु, मुक्त स्वरूप नित्य सुखकार।
भक्ति सहित हम करे स्मरण, सिद्ध प्रभु हो मंगलकार।।2।।

पंचाचार परायण गुरुवर, सकल संघ नायक सुखकार।
भक्ति सहित हम करे स्मरण, श्री आचार्य हों मंगलकार।।3।।

साधु संघ में अधिकारी हो, धर्म–ज्ञान देते सुखकार।
भक्ति सहित हम करें स्मरण, उपाध्याय हों मंगलकार।।4।।

विषयाशा–आरंभ रहित हैं, ज्ञानी मुनिवर जो सुखकार।
भक्ति सहित हम करें स्मरण, साधु सर्व हों मंगलकार।।5।।

जिनवाणी जिनतीर्थ चैत्य, चैत्यालय जग में जो सुखकार।
भक्ति सहित हम करें स्मरण, हम सबको हों मंगलकार।।6।।

सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चरितमय, धर्म अहिंसा शिव सुखकार।
भक्ति सहित हम करें स्मरण, दशलक्षण हो मंगलकार।।7।।

पंचकल्याणक तीर्थेश्वर के, दर्शाये सुरगण सुखकार।
भक्ति सहित हम करें स्मरण, हम सबको हों मंगलकार।।8।।

धर्म महोत्सव आज मनावें, लें जिन नाम परम सुखकार।
नित परिणाम पवित्र हमारे, हम सबको हो मंगलकार।।10।।

जिनप्रतिमा प्रक्षाल पाठ–1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(दोहा)

धन्य दिवस है आज का, धन्य घड़ी है आज।
करें प्रभो प्रक्षाल हम, भाव विशुद्धि काज।।1।।

(तर्ज – तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

परम पावन अहो जिनवर, जगत की कलुषता हरते।
स्वयं रागादि मल हरने, प्रभो! प्रक्षाल हम करते।।2।।

स्वयं की साधना करके, त्रिजग की पूज्यता पाई।
पूज्यता स्वयं की लखकर, प्रभो पूजा सहज करते।।3।।

निहारें शान्त मुद्रा जब, नेत्र पावन सहज होते।
हाथ होते सहज पावन, चरण–स्पर्श जब करते।।4।।

करें गुणगान भक्ति से, होय रसना तभी पावन।
सहज ही चित्त हो पावन, प्रभु का ध्यान जब धरते।।5।।

जन्म कल्याण में स्वामी, किया अभिषेक इन्द्रों ने।
लगाया था सु गंधोदक, शीश जय–जय ध्वनि करते।।6।।

किन्तु स्नान ही त्यागा, धरी निर्ग्रंथ दीक्षा जब।
ध्यान धारा सहज वर्ते, प्रभु सब कर्म मल हरते।।7।।

पूर्ण निर्दोष निर्मल हो, तीर्थ प्रभु आप प्रगटाया।
बहायी ज्ञानमय गंगा, भव्य स्नान शुभ करते।।8।।

अहो कैसा समय होगा, लक्ष्य कर हर्ष उमगाता।
महा आनंद से हम भी, अर्चना नाथ की करते।।9।।

धन्य जिनबिम्ब है जग में, अहो चिद्‌बिम्ब दर्शाते।
नीर प्रासुक ही लेकर हम, प्रभो प्रक्षाल शुभ करते।।10।।

यत्न से करते परिमार्जन, प्रभो! रोमांच तन में हो।
आत्मप्रभुता दिखाती है, अर्घ्य चरणों में जब धरते।।11।।

संजोए भावना स्वामी, होंय हम भी प्रभु के सम।
लगावें शीश गंधोदक, अहो जिन-रूप उर धरते।।12।।

(दोहा)

लोकोत्तम मंगलमयी, अनन्य शरण जिननाथ।
प्रभु चरणों में शीश धर, हम भी हुए सनाथ।।13।।

प्रतिमा प्रक्षाल पाठ-2

(पंडित अभयकुमारजी जैन, देवलाली कृत)

(दोहा)

परिणामों की स्वच्छता, के निमित्त जिनबिम्ब।
इसीलिए मैं निरखता, इनमें निज प्रतिबिम्ब।।
पंच प्रभु के चरण में, वन्दन करूँ त्रिकाल।
निर्मल जल से कर रहा, प्रतिमा का प्रक्षाल।।

अथ पौर्वाह्निकदेववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा-स्तवनवन्दनासमेतं श्री पंचमहागुरुभक्तिपूर्वककायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़ें)

(छप्पय)

तीन लोक के कृत्रिम और अकृत्रिम सारे।
जिनबिम्बों को नित प्रति अगणित नमन हमारे।।

श्री जिनवर की अन्तर्मुख छवि उर में धारूँ।
जिन में निज का निज में जिन-प्रतिबिम्ब निहारूँ।।
मैं करूँ आज संकल्प शुभ, जिन प्रतिमा प्रक्षाल का।
यह भाव सुमन अर्पण करूँ, फल चाहूँ गुणमाल का।।

ॐ ह्रीं प्रक्षालप्रतिज्ञायै पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(प्रक्षाल की प्रतिज्ञा हेतु पुष्प क्षेपण करें)

(रोला)

अन्तरंग बहिरंग सुलक्ष्मी से जो शोभित।
जिनकी मंगल वाणी पर है त्रिभुवन मोहित।।
श्री जिनवर सेवा से क्षय मोहादि विपत्ति।
हे जिन! श्री लिख पाऊँगा निज-गुण सम्पत्ति।।

(थाली की चौकी पर केशर से श्री लिखें)

(दोहा)

अन्तर्मुख मुद्रा सहित, शोभित श्री जिनराज।
प्रतिमा प्रक्षालन करूँ, धरूँ पीठ यह आज।।

ॐ ह्रीं श्री पीठस्थापनं करोमि।

(प्रक्षाल हेतु थाली स्थापित करें)

(रोला)

भक्ति रत्न से जड़ित आज मंगल सिंहासन।
भेद-ज्ञान जल से क्षालित भावों का आसन।।
स्वागत है जिनराज! तुम्हारा सिंहासन पर।
हे जिनदेव! पधारो श्रद्धा के आसन पर।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मतीर्थाधिनाथ-भगवन्निह सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ।

(थाली में जिनबिम्ब विराजमान करें)

क्षीरोदधि के जल से भरे कलश ले आया।
दृग-सुख-वीरज ज्ञानस्वरूपी आतम पाया।।

मंगल कलश विराजित करता हूँ जिनराजा।
परिणामों के प्रक्षालन से सुधरें काजा।।

ॐ ह्रीं अर्हं कलशस्थापनं करोमि।

(चारों कोनों में निर्मल जल से भरे कलश स्थापित करें)

जल-फल आठों द्रव्य मिलाकर अर्घ्य बनाया।
अष्ट अंग युत मानो सम्यग्दर्शन पाया।।
श्री जिनवर के चरणों में यह अर्घ्य समर्पित।
करूँ आज रागादि विकारी भाव विसर्जित।।

ॐ ह्रीं श्री स्नपनपीठस्थिताय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पीठ-स्थित जिनप्रतिमा को अर्घ्य चढ़ायें)

मैं रागादि विभावों से कलुषित हे जिनवर।
और आप परिपूर्ण वीतरागी हो प्रभुवर।।
कैसे हो प्रक्षाल, जगत के अघ-क्षालक का।
क्या दरिद्र होगा पालक! त्रिभुवन-पालक का।।
भक्ति भाव के निर्मल जल से अघ-मल धोता।
है किसका अभिषेक भ्रान्त चित खाता गोता।।
नाथ! भक्तिवश जिन बिम्बों का करूँ न्हवन मैं।
आज करूँ साक्षात् जिनेश्वर का पर्शन मैं।।

(चारों कलशों से अभिषेक करें, वादित्र नाद करायें एवं जय-जय शब्दोच्चारण करें।)

(दोहा)

क्षीरोदधि-सम नीर से, करूँ बिम्ब प्रक्षाल।
श्री जिनवर की भक्ति से, जानूँ निज पर चाल।।

तीर्थंकर का न्हवन शुभ, सुरपति करें महान।
पंचमेरु भी हो गये, महातीर्थ सुखदान।।

करता हूँ शुभ भाव से, प्रतिमा का अभिषेक।
बचूँ शुभाशुभ भाव से, यही कामना एक।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादिमहावीरपर्यन्तं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-परमदेवमाद्यानामाद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे.....नाम्निनगरे मासानामुत्तमे ......मासे.....पक्षे.....दिने मुन्यार्यिकाश्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामि। *(प्रक्षाल करते हुए वादित्रनाद एवं जय जयकार करें)*

जल-फलादि वसु द्रव्य ले, मैं पूजूँ जिनराज।
हुआ बिम्ब अभिषेक अब, पाऊँ निज पदराज।।

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादिवीरान्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवर का धवल यश, त्रिभुवन में है व्याप्त।
शान्ति करें मम चित्त में, हे परमेश्वर आप्त।।

(पुष्पांजलि क्षेपण करें)

(रोला)

जिन प्रतिमा पर अमृतसम जल-कण अति शोभित।
आत्म-गगन में गुण अनन्त तारे भवि मोहित।।
हो अभेद का लक्ष्य भेद का करता वर्जन।
शुद्ध वस्त्र से जल-कण का करता परिमार्जन।।

(प्रतिमा को शुद्ध वस्त्र से पोंछे)

(दोहा)

श्री जिनवर की भक्ति से, दूर होय भव-भार।
उर-सिंहासन थापिये, प्रिय चैतन्य कुमार।।

(जिनप्रतिमा को सिंहासन पर विराजमान करके निम्न छंद बोलकर अर्घ्य चढ़ायें।)

जल-गन्धादिक द्रव्य से, पूजूँ श्री जिनराज।
पूर्ण अर्घ्य अर्पित करूँ, पाऊँ चेतनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पीठस्थितजिनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन संस्पर्शित नीर यह, गन्धोदक गुण खान।
मस्तक पर धारूँ सदा, बनूँ स्वयं भगवान।।

(मस्तक पर गंधोदक चढ़ायें। अन्य किसी अंग से गंधोदक का स्पर्श वर्जित है।)

लघु प्रक्षाल पाठ

मैं परम पूज्य जिनेन्द्र प्रभु को, भाव से वन्दन करूँ।
मन वचन काय, त्रियोग पूर्वक, शीश चरणों में धरूँ।।1।।
सर्वज्ञ केवलज्ञान-धारी की सुछवि उर में धरूँ।
निर्ग्रन्थ पावन वीतराग, महान की जय उच्चरूँ।।2।।
उज्ज्वल दिगम्बर वेश दर्शन, कर हृदय आनन्द भरूँ।
अति विनय पूर्वक न्हवन करके, सफल यह नरभव करूँ।।3।।
मैं शुद्ध जल के कलश प्रभु के, पूज्य मस्तक पर ढरूँ।
जल धार देकर हर्ष से, अभिषेक प्रभुजी का करूँ।।4।।
मैं न्हवन प्रभु का भाव से कर, सकल भव पातक हरूँ।
प्रभु चरण-कमल पखारकर, सम्यक्त्व की सम्पति वरूँ।।5।।

*****

जिनेन्द्र अभिषेक स्तुति

मैंने प्रभुजी के चरण पखारे, मैंने प्रभुजी के चरण पखारे।।
जनम-जनम के संचित पातक, तत्क्षण ही निरवारे।
मैंने प्रभु जी के चरण पखारे।।1।।टेक।।
प्रासुक जल के कलश, श्री जिनप्रतिमा ऊपर ढारे।
वीतराग अरिहंत देव के, गूँजे जय-जय कारे।।
मैंने प्रभु जी के चरण पखारे।।2।।
चरणाम्बुज स्पर्श करत ही, छाये हर्ष अपारे।
पावन तन-मन-नयन भये सब, दूर भये अँधियारे।।
मैंने प्रभु जी के चरण पखारे।।3।।

विनय पाठ-1

(पंडित नाथूरामजी कृत)

(दोहा)

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढ़ै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ।।1।।
अनन्त चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सरताज।
मुक्ति-वधू के कंत तुम, तीन भुवन के राज।।2।।
तिहुँ जग की पीड़ा हरन, भवदधि-शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिव-सुख के करतार।।3।।
हर्ता अघ अँधियार के, कर्ता धर्म-प्रकाश।
थिरता-पद दातार हो, धर्ता निजगुण रास।।4।।
धर्मामृत उर जलधि सौं, ज्ञान-भानु तुम रूप।
तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहुँ-जग भूप।।5।।
मैं वन्दौं जिनदेव को, करि अति निरमल भाव।
कर्म-बन्ध के छेदने, और न कछु उपाव।।6।।
भविजन कौं भव-कूप तैं, तुम ही काढ़नहार।
दीन-दयाल अनाथ-पति, आतम गुण भंडार।।7।।
चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्म-रज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिव-गैल।।8।।
तुम पद-पंकज पूजतैं, विघ्न-रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय।।9।।
चक्री सुर खग इन्द्र पद, मिलैं आप तैं आप।
अनुक्रम करि शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप।।10।।

तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल-बिन मीन।
जन्म-जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन।।11।।

पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव।।12।।

थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव।।13।।

राग सहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यौ अबै, मेटो राग कुटेव।।14।।

कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अजान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान।।15।।

तुमको पूजैं सुरपती, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव।।16।।

अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार।
मैं डूबत भव-सिन्धु में, खेव लगाओ पार।।17।।

इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारि कै, कीजे आप-समान।।18।।

तुम्हरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार।
हा हा डूब्यो जात हौं, नेक निहार निकार।।19।।

जो मैं कहहूँ और सौं, तो न मिटै उर-झार।
मेरी तो तोसौं बनी, यातैं करौं पुकार।।20।।

वंदौ पाँचों परम गुरु, सुर-गुरु वंदत जास।
विघन-हरन मंगल-करन, पूरन परम प्रकाश।।21।।

चौबीसौं जिन-पद नमों, नमों शारदा माय।
शिव-मग साधक साधु नमि, रच्यौ पाठ सुखदाय।।22।।

मंगल पाठ

(दोहा)

मंगल मूर्ति परम पद, पंच धरो नित ध्यान।
हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान।।1।।

मंगल जिनवर पद नमों, मंगल अरहन्तदेव।
मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दूँ स्वयमेव।।2।।

मंगल आचारज मुनि, मंगल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मंगल करो, वन्दूँ मन-वच-काय।।3।।

मंगल सरस्वती मात का, मंगल जिनवर धर्म।
मंगलमय मंगल करण, हरो असाता कर्म।।4।।

या विधि मंगल करनतैं, जग में मंगल होत।
मंगल नाथूराम यह, भवसागर दृढ़ पोत।।5।।

पूजा पीठिका (संस्कृत)

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।।

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

चत्तारि मंगलं, अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि,
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,
केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

मंगल विधान

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पञ्च-नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।1 ।।
अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ।।2 ।।
अपराजित-मन्त्रोऽयं, सर्व-विघ्न-विनाशनः।
मङ्गलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मङ्गलं मतः ।।3 ।।
एसो पंच णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होई मंगलं ।।4 ।।
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म-,वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्‌बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम् ।।5 ।।
कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं, मोक्ष-लक्ष्मी निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ।।6 ।।
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत-पन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे ।।7 ।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

पंचकल्याणक अर्घ्य

उदक-चन्दन-तन्दुलपुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिन-गृहे कल्याणमहं यजे ।।

ॐ ह्रीं श्रीभगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण-पंचकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचपरमेष्ठी अर्घ्य

उदक-चन्दन-तन्दुलपुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिन-गृहे जिन-इष्टमहं यजे ।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हन्तसिद्धाचार्योपाध्यायसाधु-पंचपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

जिनवाणी अर्घ्य

उदक-चन्दन-तन्दुलपुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिन-गृहे जिनसूत्रमहं यजे ।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्‌भूत-जिनसूत्रेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनसहस्रनाम अर्घ्य

उदक-चन्दन-तन्दुलपुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिन-गृहे जिननाम अहं यजे ।।

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वाद-नायकमनन्त-चतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघ-सुदृशां सुकृतैकहेतु-
जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष मयाऽभ्यधायि ।।1 ।।

स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुङ्गवाय,
स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्ज्जितदृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्‌भुत-वैभवाय ।।2 ।।

स्वस्त्युच्छलद्विमल-बोधसुधाप्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोकविततैक-चिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय ।।3 ।।

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम् ।।4 ।।

अर्हत् पुराणपुरुषोत्तम पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिञ्ज्वलद्विमल-केवल-बोधवह्नौ,
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ।।5।।

ॐ यज्ञविधिप्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

स्वस्ति मंगलपाठ

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः।
श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः।
श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः।
श्रीश्रेयांसः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः।
श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः।
श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः।
श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्धमानः।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

परमर्षि स्वस्ति मंगलपाठ

(प्रत्येक श्लोक के बाद पुष्प क्षेपण करें)

नित्याप्रकम्पाद्भुत-केवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्यय-शुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञान-बलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।1।।

कोष्ठस्थ-धान्योपममेकबीजं, संभिन्न-संश्रोतृ-पदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।2।।

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि।
दिव्यान्मतिज्ञान-बलाद्वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।3।।

प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टाङ्गनिमित्तविज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।4।।

जङ्घावलि-श्रेणि-फलाम्बु-तन्तु, प्रसून-बीजांकुर-चारणाह्वाः।
नभोऽङ्गणस्वैर-विहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।5।।

अणिम्निदक्षाः कुशलामहिम्नि, लघिम्निशक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।6।।

सकामरूपित्व-वशित्वमैश्यं, प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।7।।

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोर गुणाश्चरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।8।।

आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशीर्विषं-विषा दृष्टिविषं विषाश्च।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।9।।

क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो, मधुस्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः।
अक्षीणसंवास-महानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।10।।

इति परमर्षि-स्वस्तिमङ्गलविधानं, पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

पूजा पीठिका (भाषा-1)

ॐ जय-जय-जय, नमोऽस्तु-नमोऽस्तु-नमोऽस्तु।
अरहंतों को नमस्कार है, सिद्धों को सादर वन्दन।
आचार्यों को नमस्कार है, उपाध्याय को है वन्दन।।

और लोक के सर्व साधुओं, को है विनय सहित वन्दन।
पंच परम परमेष्ठी प्रभु को, बार-बार मेरा वन्दन।।

ॐ ह्रीं श्रीअनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः। पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

(वीरछन्द)

मंगल चार, चार हैं उत्तम, चार शरण में जाऊँ मैं।
मन-वच-काय त्रियोग पूर्वक, शुद्ध भावना भाऊँ मैं।।
श्री अरहंत देव मंगल हैं, श्री सिद्ध प्रभु हैं मंगल।
श्री साधु मुनि मंगल हैं, है केवलि कथित धर्म मंगल।।

श्री अरहंत लोक में उत्तम, सिद्ध लोक में हैं उत्तम।
साधु लोक में उत्तम हैं, है केवलि कथित धर्म उत्तम।।
श्री अरहंत शरण में जाऊँ, सिद्धशरण में मैं जाऊँ।
साधु शरण में जाऊँ, केवलिकथित धर्म शरणा जाऊँ।।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

मंगल विधान

अपवित्र हो या पवित्र, जो णमोकार को ध्याता है।
चाहे सुस्थित हो या दुःस्थित, पाप-मुक्त हो जाता है।।1।।

हो पवित्र-अपवित्र दशा, कैसी भी क्यों नहिं हो जन की।
परमातम का ध्यान किये, हो अन्तर-बाहर शुचि उनकी।।2।।

है अजेय विघ्नों का हर्ता, णमोकार यह मंत्र महा।
सब मंगल में प्रथम सुमंगल, श्री जिनवर ने एम कहा।।3।।

सब पापों का है क्षयकारक, मंगल में सबसे पहला।
नमस्कार या णमोकार यह, मन्त्र जिनागम में पहला।।4।।

अर्हं ऐसे परं ब्रह्म-वाचक, अक्षर का ध्यान करूँ।
सिद्धचक्र का सद्‌बीजाक्षर, मन-वच-काय प्रणाम करूँ।।5।।

अष्टकर्म से रहित मुक्ति-लक्ष्मी के घर श्री सिद्ध नमूँ।
सम्यक्त्वादि गुणों से संयुत, तिन्हें ध्यान धर कर्म वमूँ।।6।।

जिनवर की भक्ति से होते, विघ्न समूह अन्त जानो।
भूत शाकिनी सर्प शांत हों, विष निर्विष होता मानो।।7।।

इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

जिनसहस्रनाम अर्घ्य

मैं प्रशस्त मंगल गानों से, युक्त जिनालय माहिं यजूँ।
जल चंदन अक्षत प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ्य सजूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

(ताटंक)

स्याद्वाद वाणी के नायक, श्री जिन को मैं नमन कराय।
चार अनंत चतुष्टयधारी, तीन जगत के ईश मनाय।।
मूलसंघ के सम्यग्दृष्टि, उनके पुण्य कमावन काज।
करूँ जिनेश्वर की यह पूजा, धन्य भाग्य है मेरा आज।।1।।

तीन लोक के गुरु जिन-पुंगव, महिमा सुन्दर उदित हुई।
सहज प्रकाशमयी दृग्-ज्योति, जग-जन के हित मुदित हुई।।
समवशरण का अद्‌भुत वैभव, ललित प्रसन्न करी शोभा।
जग-जन का कल्याण करे अरु, क्षेम कुशल हो मन लोभा।।2।।

निर्मल बोध सुधा-सम प्रकटा, स्व-पर विवेक करावनहार।
तीन लोक में प्रथित हुआ जो, वस्तु त्रिजग प्रकटावनहार।।
ऐसा केवलज्ञान करे, कल्याण सभी जगतीतल का।
उसकी पूजा रचूँ आज मैं, कर्म बोझ करने हलका।।3।।

द्रव्यशुद्धि अरु भाव-शुद्धि, दोनों विधि का अवलंबन कर।
करूँ यथार्थ पुरुष की पूजा, मन-वच-तन एकत्रित कर।।

पुरुष-पुराण जिनेश्वर अर्हन्, एकमात्र वस्तु का स्थान।
उसकी केवलज्ञान वह्नि में, करूँ समस्त पुण्य आह्वान।।4।।

ॐ यज्ञविधिप्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे इति पुष्पांजलिं क्षिपामि।

स्वस्ति मंगलपाठ

(चौपाई)

ऋषभदेव कल्याणकराय, अजित जिनेश्वर निर्मल थाय।
स्वस्ति करें संभव जिनराय, अभिनंदन के पूजों पाय।।1।।
स्वस्ति करें श्री सुमति जिनेश, पद्मप्रभ पद-पद्म विशेष।
श्री सुपार्श्व स्वस्ति के हेतु, चन्द्रप्रभ जन तारन सेतु।।2।।
पुष्पदंत कल्याण सहाय, शीतल शीतलता प्रकटाय।
श्री श्रेयांस स्वस्ति के श्वेत, वासुपूज्य शिवसाधन हेत।।3।।
विमलनाथ पद विमल कराय, श्री अनंत आनंद बताय।
धर्मनाथ शिव शर्म कराय, शांति विश्व में शांति कराय।।4।।
कुंथु और अरजिन सुखरास, शिवमग में मंगलमय आश।
मल्लि और मुनिसुव्रत देव, सकल कर्मक्षय कारण एव।।5।।
श्री नमि और नेमि जिनराज, करें सुमंगलमय सब काज।
पार्श्वनाथ तेवीसम ईश, महावीर वंदों जगदीश।।6।।
ये सब चौबीसों महाराज, करें भव्यजन मंगल काज।
मैं आयो पूजन के काज, राखो श्री जिन मेरी लाज।।7।।

इति पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

परमर्षि स्वस्ति मंगल पाठ

(गीतिका)

नित्य अद्भुत अचल, केवलज्ञानधारी जे मुनी।
मनःपर्यय ज्ञान-धारक, यती तपसी वा गुणी।।

दिव्य अवधिज्ञान धारक, श्री ऋषीश्वर को नमूँ।
कल्याणकारी लोक में, कर पूज वसु विधि को वमूँ।।1।।

कोष्ठस्थ धान्योपम कही, अरु एक बीज कही प्रभो।
संभिन्न संश्रोतृ पदानुसारी, बुद्धि ऋद्धि कही विभो।।
ये चार ऋद्धीधर यतीश्वर, जगत जन मंगल करें।
अज्ञान-तिमिर विनाश कर, कैवल्य में लाकर धरें।।2।।

दिव्य मति के बल ग्रहण, करते स्पर्शन घ्राण को।
श्रवण आस्वादन करें, अवलोकते कर त्राण को।।
पंच इंद्री की विजय, धारण करें जो ऋषिवरा।
स्व-पर का कल्याण कर, पायें शिवालय ते त्वरा।।3।।

प्रज्ञा प्रधाना श्रमण अरु, प्रत्येक बुद्धि जो कही।
अभिन्न दश पूर्वी चतुर्दश-पूर्व प्रकृष्ट वादी सही।।
अष्टांग महा निमित्त विज्ञा, जगत का मंगल करें।
उनके चरण में अहर्निश, यह दास अपना शिर धरे।।4।।

जंघावलि अरु श्रेणि तंतु, फलांबु बीजांकुर प्रसून।
ऋद्धि चारण धार के मुनि, करत आकाशी गमन।।
स्वच्छंद करत विहार नभ में, भव्यजन के पीर हर।
कल्याण मेरा भी करें, मैं शरण आया हूँ प्रभुवर।।5।।

अणिमा जु महिमा और गरिमा, में कुशल श्री मुनिवरा।
ऋद्धि लघिमा वे धरें, मन-वचन-तन से ऋषिवरा।।
हैं यद्यपि ये ऋद्धिधारी, पर नहीं मद झलकता।
उनके चरण के यजन हित, इस दास का मन ललकता।।6।।

ईशत्व और वशित्व, अन्तर्धान आप्ति जिन कही।
कामरूपी और अप्रतिघात, ऋषि पुंगव लही।।

इन ऋद्धि-धारक मुनिजनों को, सतत वंदन मैं करूँ।
कल्याणकारी जो जगत में, सेय शिव-तिय को वरूँ।।7।।

दीप्ति तप्ता महा घोरा, उग्र घोर पराक्रमा।
ब्रह्मचारी ऋद्धिधारी, वनविहारी अघ वमा।।
ये घोर तपधारी परम गुरु, सर्वदा मंगल करें।
भव डूबते इस अज्ञजन को, तार तीरहिं ले धरें।।8।।

आमर्ष औषधि आषि विष, अरु दृष्टि विष सर्वौषधि।
खिल्ल औषधि जल्ल औषधि, विडौषधि मल्लौषधि।।
ये ऋद्धिधारी महा मुनिवर, सकल संघ मंगल करें।
जिनके प्रभाव सभी सुखी हों, और भव-जलनिधि तरें।।9।।

क्षीरस्रावी मधुस्रावी, घृतस्रावी मुनि यशी।
अमृतस्रावी ऋद्धिवर, अक्षीण संवास महानसी।।
ये ऋद्धिधारी सब मुनीश्वर, पाप मल को परिहरें।
पूजा विधि के प्रथम अवसर, आ सफल पूजा करें।।10।।

कर जोड़ दास 'गुलाब' करता, विनय चरणन में खड़ा।
सम्यक्त्व दरशन-ज्ञान-चारित्र, दीजिए सबसे बड़ा।।
जबतक न हो संसार पूरा, चरण में रत नित रहें।
वसुकर्म क्षयकर शिव लहें, बस और कुछ नहिं यह चहें।।11।।

(इति परमर्षि-स्वस्ति मंगल-विधानं पुष्पांजलिं क्षिपामि।)

विनय पाठ-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

छंद-दोहा

सफल जनम मेरा हुआ, प्रभु दर्शन से आज।
भव-समुद्र नहीं दीखता, पूर्ण हुए सब काज।।1।।

दुर्निवार सब कर्म अरु, मोहादिक परिणाम।
स्वयं दूर मुझसे हुए, देखत तुम्हें ललाम।।2।।

संवर कर्मों का हुआ, शान्त हुए गृह-जाल।
हुआ सौख्य सम्पन्न मैं, नहिं आये मम काल।।3।।

भव-कारण मिथ्यात्व का, नाशक ज्ञान-सुभानु।
उदित हुआ मुझमें प्रभो, दीखे आप समान।।4।।

मेरा आत्मस्वरूप जो, ज्ञान सौख्य की खान।
आज हुआ प्रत्यक्ष-सम, दर्शन से भगवान।।5।।

दीन भावना मिट गई, चिन्ता मिटी अशेष।
निज प्रभुता पाई प्रभो, रहा न दुख का लेश।।6।।

शरण रहा था खोजता, इस संसार मँझार।
निज आतम मुझको शरण, तुमसे सीखा आज।।7।।

निज स्वरूप में मगन हो, पाऊँ शिव अभिराम।
इसी हेतु मैं आपको, करता कोटि प्रणाम।।8।।

मैं वन्दों जिनराज को, धर उर समता भाव।
तन-धन-जन जगजाल से, धरि विरागता भाव।।9।।

यही भावना है प्रभो, मेरी परिणति माहिं।
राग-द्वेष की कल्पना, किंचित् उपजै नाहिं।।10।।

पूजा पीठिका (भाषा-2)

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(छन्द-सखी)

अरहन्त सिद्ध सूरि नामा, उवझाय साधु गुणधामा।
परमेष्ठी पद सुखकारी, पूजन करिहों दुखहारी।।

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः, पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

(छन्द-झूलना)

चार मंगल शरण श्रेष्ठ हैं लोक में,
आप्त अरु सिद्ध साधु दयामय धरम।
अन्य में ढूँढना सुख दुखकार है,
वे स्वयं सुख रहित सुख न उनका मरम।।
हे प्रभो! आपको लख ये निश्चय हुआ,
शरण अपनी से कटते स्वयं सब करम।
बाह्य दृष्टि तजूँ अब निजातम भजूँ,
लीन निज में हुए से मिले पद परम।।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

मंगल विधान (भाषा)

हूँ द्रव्यदृष्टि से अति पवित्र, परिणति ही मात्र अपावन है।
चिर से ही पर में भ्रमित रही, शुचिकारी तव आराधन है।।
हे प्रभो! शांत नासाग्र दृष्टि, थिर मुद्रा हमें बताती है।
शांति शुचिता अंतर में है, बाहर से कभी न आती है।।
है रूप हमारा मंगलमय, आराध्य हमारे मंगलमय।
रागादि विकारी भाव भगें, परिणति भी होवे मंगलमय।।
तुम नाम मंत्र है मंगलमय, हे कर्ममुक्त! तुम मंगलमय।
सम्यक्त्व आदि गुण युक्त सिद्ध मैं नमन करूँ हे मंगलमय।।
हों दु:ख सभी तत्क्षण विनष्ट, स्मरण किये तुम-सम निजरूप।
डाकिनि, भूत पिशाच, नागगद, सभी दूर हों हे शिवभूप।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री जिनसहस्रनाम अर्घ्य

गुण अनंत हैं प्रभु आपके, मेरी है सामर्थ्य कहाँ।
सहस्रनाम से अर्चन करके, अर्घ्य चढ़ाऊँ आज यहाँ।।

ॐ ह्रीं भगवज्जिनस्याऽष्टाधिकसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

(तर्ज - इंसाफ की डगर पे...)

जो तीन लोक स्वामी, मुक्ति रमापति हैं।
हैं स्याद्वाद नायक, सानन्त चार जो हैं।।
कर वंदना उन्हीं की, पूजा विधि करूँगा।
जो भव्य प्राणियों को, हैं पुण्य बंध हेतु।।
निज आत्मरूप महिमा, जिनने प्रकट दिखाई।
ऐसे त्रिलोक गुरु, पुंगव स्वस्ति दायक।।
उन पूर्ण ज्ञान दर्शन, आनंद वीर्य वैभव।
दें प्रेरणा सतत, मुक्ति हेतु मुझको।।
निज भाव द्रव्यदृष्टि से शुद्ध जाना।
पर्याय शुद्धि हेतु, अवलंब मैंने लीना।।
बहु युक्तियों से अब तो रागादि कर विनष्ट।
भूतार्थ यज्ञ द्वारा, मैं भी प्रभु बनूँगा।।
अर्हत् पुराण पुरुषोत्तम, जगत-हितंकर।
सब वस्तुएँ तजूँगा, निज पूर्ण ज्ञान हेतु।।
नित पुण्य-पाप द्वारा, परिणति हुई विकारी।
मैं पाप तो तजा है, अब पुण्य भी तजूँगा।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

स्वस्ति मंगल पाठ

(मत्तसवैया)

श्री ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति सुमतिप्रदायक हैं।
श्री पद्मप्रभ अरु श्री सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ स्वस्ति दायक हैं।।

श्री पुष्पदंत शीतल श्रेयांस, श्री वासुपूज्य और विमल प्रभु।
श्री अनंत धर्म और शांति कुन्थु, मंगलमय मुक्ति विधायक हैं।।
अरनाथ मल्लि मुनिसुव्रत जी, नमिनाथ नेमि अरु पार्श्व प्रभो।
श्री वर्धमान जिनसुख वर्धक, निज पर विवेक प्रकटायक हैं।।
इन सम ही जड़ वैभव तजकर, सम्यक्त्वी इच्छामुक्त बनें।
निज का पुरुषार्थ मूल कारण, ये ही व्यवहार सहायक हैं।।
हो जिनवाणी अभ्यास सदा, तत्त्वों का सम्यक् निर्णय हो।
रागादि विकारी भाव भगें, जिनवाणी स्वस्ति दायक हो।।
द्रव्यानुयोग चरणानुयोग से, सत श्रद्धा चारित्र धरें।
प्रथमानुयोग करणानुयोग, दृग-ज्ञान-वृत्ति दृढ़ स्वच्छ करें।।
हैं बुद्धि ऋद्धियाँ प्रकट जिन्हें, पर लक्ष्य नहीं उन पर जिनका।
तप घोर करें, आकाश चलें, है पार नहीं जिनके बल का।।
मन-वांछित रूप बना सकते, भारी हल्का, लंबा छोटा।
जो सर्वौषधियों की निधि हैं, ऋद्धि अक्षीण से ना टोटा।।
पर नहीं प्रयोग करें इनका, निज ख्याति-लाभ-पूजा हेतु।
उन-सम जड़ वैभव ठुकराऊँ, तब होवें वे मुक्ति-सेतु।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री समुच्चय पूजन

(श्री देव-शास्त्र-गुरु, विदेह क्षेत्र स्थित बीस तीर्थंकर तथा सिद्ध परमेष्ठी)

(ब्र. सरदारमलजी 'सच्चिदानन्द' कृत)

(दोहा)

देव-शास्त्र-गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूँ चित्त हुलसाय।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकर समूह!

श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठी समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

अनादिकाल से जग में स्वामिन, जल से शुचिता को माना।
शुद्ध निजातम सम्यक् रत्नत्रय, निधि को नहीं पहचाना।।
अब निर्मल रत्नत्रय जल ले, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है।
अनजाने में अबतक मैंने, पर में की झूठी ममता है।।
चन्दन-सम शीतलता पाने, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तान्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद बिन फिरा, जगत की लख चौरासी योनी में।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिंग लाया मैं।।
अक्षयनिधि निज की पाने अब, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है।
मन्मथ बाणों से बिंध करके, चहुँगति दुख उपजाया है।।
स्थिरता निज में पाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तान्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शांत हुई।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई।।
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरु भ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़दीप विनश्वर को अबतक, समझा था मैंने उजियारा।
निज गुण दरशायक ज्ञान-दीप से, मिटा मोह का अँधियारा।।
ये दीप समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।
निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग-द्वेष नशायेगी।।
उस शक्ति दहन प्रकटाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बदाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिंग मैं ले आया।
आतमरस भीने निज गुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया।
अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निज गुण प्रकट किये।।

ये अर्घ्य समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु भगवान।
अब वरणूँ जयमालिका, करूँ स्तवन गुणगान।।

नशे घातिया कर्म अरहंत देवा, करें सुर-असुर-नर-मुनि नित्य सेवा।
दरशज्ञान सुखबल अनंत के स्वामी, छियालिस गुणयुत महाईशनामी।।
तेरी दिव्यवाणी सदा भव्य मानी, महामोह विध्वंसिनी मोक्ष-दानी।
अनेकांतमय द्वादशांगी बखानी, नमो लोक माता श्री जैनवाणी।।
विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश-ज्ञान भण्डार समता अराधू।
नगन वेशधारी सु एका विहारी, निजानंद मंडित मुकति पथ प्रचारी।।
विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर बीस राजें, विहरमान वंदूँ सभी पाप भाजें।
नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः अनन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालामहार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध हृदय बिच धर ले रे।
पूजन ध्यान गान गुण करके, भवसागर जिय तर ले रे।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन-1

(बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' कृत)

केवल-रवि-किरणों से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर।
उस श्री जिन-वाणी में होता, तत्त्वों का सुन्दरतम दर्शन।।

सद्‌दर्शन-बोध-चरण पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण।
उन देव परम-आगम गुरु को, शत-शत वन्दन, शत-शत वन्दन।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

इन्द्रिय के भोग मधुर विष-सम, लावण्यमयी कंचन काया।
यह सब कुछ जड़ की क्रीड़ा है, मैं अबतक जान नहीं पाया।।
मैं भूल स्वयं निज वैभव को, पर-ममता में अटकाया हूँ।
अब निर्मल सम्यक्-नीर लिये, मिथ्यामल धोने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जड़-चेतन की सब परिणति प्रभु! अपने-अपने में होती है।
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ती है।।
प्रतिकूल संयोगों में क्रोधित, होकर संसार बढ़ाया है।
सन्तप्त हृदय प्रभु! चन्दन सम, शीतलता पाने आया है।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

उज्ज्वल हूँ कुन्द-धवल हूँ प्रभु! पर से न लगा हूँ किंचित् भी।
फिर भी अनुकूल लगें, उन पर, करता अभिमान निरन्तर ही।।
जड़ पर झुक-झुक जाता चेतन, की मार्दव की खण्डित काया।
निज शाश्वत अक्षत-निधि पाने, अब दास चरण-रज में आया।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन में माया कुछ शेष नहीं।
निज अन्तर का प्रभु! भेद कहूँ, उसमें ऋजुता का लेश नहीं।।
चिंतन कुछ फिर संभाषण कुछ, वृत्ति कुछ की कुछ होती है।
स्थिरता निज में प्रभु पाऊँ जो, अन्तर-कालुष धोती है।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अबतक अगणित जड़ द्रव्यों से, प्रभु! भूख न मेरी शान्त हुई।
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही।।
युग-युग से इच्छा सागर में, प्रभु! गोते खाता आया हूँ।
चरणों में व्यंजन अर्पित कर, अनुपम रस पीने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरे चैतन्य सदन में प्रभु! चिर व्याप्त भयंकर अँधियारा।
श्रुत-दीप बुझा हे करुणानिधि! बीती नहिं कष्टों की कारा।।
अतएव प्रभो! यह ज्ञान-प्रतीक, समर्पित करने आया हूँ।
तेरी अन्तर लौ से निज अन्तर-दीप जलाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

जड़ कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी।
मैं रागी-द्वेषी हो लेता, जब परिणति होती है जड़ की।।
यों भाव-करम या भाव-मरण, सदियों से करता आया हूँ।
निज अनुपम गंध-अनल से प्रभु, पर-गंध जलाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है।
मैं आकुल-व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है।।
मैं शान्त निराकुल चेतन हूँ, है मुक्ति-रमा सहचर मेरी।
यह मोह तड़क कर टूट पड़े, प्रभु! सार्थक फल पूजा तेरी।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षणभर निज-रस को पी चेतन, मिथ्या-मल को धो देता है।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द-अमृत पीता है।।
अनुपम सुख तब विलसित होता, केवल-रवि जगमग करता है।
दर्शन बल पूर्ण प्रकट होता, यह ही अरहन्त अवस्था है।।

यह अर्घ्य समर्पण करके प्रभु! निज गुण का अर्घ्य बनाऊँगा।
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु! अरहन्त अवस्था पाऊँगा।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(ताटंक)

भववन में जी-भर घूम चुका, कण-कण को जी भर-भर देखा।
मृग-सम मृग-तृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा।।

(बारह भावना)

झूठे जग के सपने सारे, झूठीं मन की सब आशायें।
तन-जीवन-यौवन अस्थिर है, क्षण-भंगुर पल में मुरझायें।।

सम्राट महाबल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या?
अशरण मृत-काया में हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या?

संसार महा दुख-सागर के, प्रभु दुखमय सुख-आभासों में।
मुझको न मिला सुख क्षणभर भी, कंचन-कामिनी प्रासादों में।।

मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते।
तन-धन को साथी समझा था, पर ये भी छोड़ चले जाते।।

मेरे न हुए ये, मैं इनसे, अति भिन्न अखण्ड निराला हूँ।।
निज में पर से अन्यत्व लिये, निज समरस पीनेवाला हूँ।

जिसके श्रृंगारों में मेरा, यह महँगा जीवन घुल जाता।
अत्यन्त अशुचि जड़-काया से, इस चेतन का कैसा नाता।।

दिन-रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता।
मानस, वाणी और काया से, आस्रव का द्वार खुला रहता।।

शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्तल।
शीतल समकित किरणें फूटें, संवर से जागे अन्तर्बल।।

फिर तप की शोधक वह्नि जगे, कर्मों की कड़ियाँ टूट पड़ें।
सर्वांग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के निर्झर फूट पड़ें।।

हम छोड़ चलें यह लोक तभी, लोकान्त विराजें क्षण में जा।
निज लोक हमारा वासा हो, शोकांत बने फिर हमको क्या।।

जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो! दुर्नय-तम सत्वर टल जाये।
बस ज्ञाता-द्रष्टा रह जाऊँ, मद-मत्सर-मोह विनश जाये।।

चिर रक्षक धर्म हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी।
जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहें जग के साथी।।

(देव-स्तवन)

चरणों में आया हूँ प्रभुवर! शीतलता मुझको मिल जाये।
मुरझाई ज्ञान-लता मेरी, निज अन्तर्बल से खिल जाये।

सोचा करता हूँ भोगों से, बुझ जायेगी इच्छा-ज्वाला।
परिणाम निकलता है लेकिन, मानो पावक में घी डाला।।

तेरे चरणों की पूजा से, इन्द्रिय सुख को ही अभिलाषा।
अबतक न समझ ही पाया प्रभु! सच्चे सुख की भी परिभाषा।।

तुम तो अविकारी हो प्रभुवर! जग में रहते जग से न्यारे।
अतएव झुके तव चरणों में, जग के माणिक-मोती सारे।।

(शास्त्र-स्तवन)

स्याद्वादमयी तेरी वाणी, शुभ नय के झरने झरते हैं।
उस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं।।

(गुरु-स्तवन)

हे गुरुवर! शाश्वत सुखदर्शक, यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है।
जग की नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्शन करनेवाला है।।

जब जग विषयों में रच-पच कर, गाफिल निद्रा में सोता हो।
अथवा वह शिव के निष्कंटक, पथ में विषकंटक बोता हो।।
हो अर्ध-निशा का सन्नाटा, वन में वनचारी चरते हों।
तब शान्त निराकुल मानस तुम, तत्त्वों का चिंतन करते हो।।

करते तप शैल नदी-तट पर, तरु-तल वर्षा की झड़ियों में।
समता-रसपान किया करते, सुख-दुख दोनों की घड़ियों में।।
अन्तर्ज्वाला हरती वाणी, मानो झड़ती हों फुलझड़ियाँ।
भव-बन्धन तड़-तड़ टूट पड़ें, खिल जायें अन्तर की कलियाँ।।

तुम-सा दानी क्या कोई हो, जग को दे दीं जग की निधियाँ।
दिन-रात लुटाया करते हो, सम-शम की अविनश्वर मणियाँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे निर्मल देव! तुम्हें प्रमाण, हे ज्ञान-दीप आगम! प्रणाम।
हे शान्ति-त्याग के मूर्तिमान, शिव-पथ-पंथी गुरुवर! प्रणाम।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(दोहा)

देव-शास्त्र-गुरुवर अहो, मम स्वरूप दर्शाय।
किया परम उपकार मैं, नमन करूँ हरषाय।।
जब मैं आता आप ढिंग, निज स्मरण सु आय।
निज प्रभुता मुझमें प्रभो, प्रत्यक्ष देय दिखाय।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(वीरछन्द)

जब से स्व-सन्मुख दृष्टि हुई, अविनाशी ज्ञायकरूप लखा।
शाश्वत अस्तित्व स्वयं का लखकर जन्म-मरण भय दूर हुआ।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज परम तत्त्व जब से देखा, अद्भुत शीतलता पायी है।
आकुलतामय संतप्त परिणति, सहज नहीं उपजायी है।।श्री देव.।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अक्षय प्रभु के दर्शन से ही, अक्षयसुख विकसाया है।
क्षत-भावों में एकत्वपने का, सर्व विमोह पलाया है।।श्री देव.।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम परम ज्ञायक प्रभुवर, जब से दृष्टि में आया है।
विभु ब्रह्मचर्यरस प्रकट हुआ, दुर्दान्त काम विनशाया है।।श्री देव.।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हुआ निमग्न तृप्ति-सागर में, तृष्णा-ज्वाल बुझाई है।
क्षुधा आदि सब दोष नशे, वह सहज तृप्ति उपजाई है।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान-भानु का उदय हुआ, आलोक सहज ही छाया है।
चिर मोहमहातम हे स्वामी! क्षणभर में सहज विलाया है।।श्री देव.।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-भाव-नोकर्म-शून्य चैतन्य प्रभू जब से देखा।
शुद्ध परिणति प्रकट हुई, मिटती पर-भावों की रेखा।।श्री देव.।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो! पूर्ण निज वैभव देखा, नहीं कामना शेष रही।
निर्वांछक हो गया सहज मैं, निज में ही अब मुक्ति दिखी।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज से उत्तम दिखे न कुछ भी, पाई निज अनर्घ्य माया।
निज में ही अब हुआ समर्पण, ज्ञानानन्द प्रकट पाया।।श्री देव.।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

ज्ञान-मात्र परमात्मा, परम प्रसिद्ध कराय।
धन्य आज मैं हो गया, निजस्वरूप को पाय।।

(हरिगीतिका)

चैतन्य में ही मग्न हो, चैतन्य दर्शाते अहो।
निर्दोष श्री सर्वज्ञ प्रभुवर! जगत-साक्षी हो विभो।।

सच्चे प्रणेता धर्म के, शिवमार्ग प्रकटाया प्रभो।
कल्याण वांछक भविजनों के, आप ही आदर्श हो।।

शिवमार्ग पाया आप से, भवि पा रहे अरु पायेंगे।
स्वाराधना से आप-सम ही, हुए, हो रहे, होयेंगे।।
तब दिव्यध्वनि में दिव्य-आत्मिक, भाव उद्घोषित हुए।
गणधर गुरु आम्नाय में, शुभ शास्त्र तब निर्मित हुए।।

निर्ग्रन्थ गुरु के ग्रन्थ, ये नित प्रेरणाएँ दे रहे।
निजभाव अरु परभाव का, शुभ भेदज्ञान जगा रहे।।

इस दुषम भीषण काल में, जिनदेव का जब हो विरह।
तब मात-सम उपकार करते, शास्त्र ही आधार हैं।।

जग से उदास रहें स्वयं में, वास जो नित ही करें।
स्वानुभवमय सहज जीवन, मूलगुण परिपूर्ण हैं।।

नाम लेते ही जिन्हों का, हर्षमय रोमांच हो।
संसार भोगों की व्यथा, मिटती परम आनन्द हो।।

परभाव सब निस्सार दिखते, मात्र दर्शन ही किये।
निजभाव की महिमा जगे, जिनके सहज उपदेश से।।

उन देव-शास्त्र-गुरु प्रति, आता सहज बहुमान है।
आराध्य यद्यपि एक ज्ञायक, भाव निश्चय ज्ञान है।।
प्रभु! अर्चना के काल में भी, भावना ये ही रहे।
धन्य होगी वह घड़ी जब, परिणति निज में रहे।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

अहो! कहाँ तक मैं कहूँ, महिमा अपरम्पार।
निज स्वभाव में मग्न हो, पाऊँ पद अविकार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन-3

(डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल कृत)

(दोहा)

शुद्धब्रह्म परमात्मा, शब्दब्रह्म जिनवाणि।
शुद्धातम साधकदशा, नमौं जोड़ जुगपाणि।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

आशा की प्यास बुझाने को, अबतक मृगतृष्णा में भटका।
जल समझ विषय-विष भोगों को, उनकी ममता में था अटका।।
लख सौम्य दृष्टि तेरी प्रभुवर, समता-रस पीने आया हूँ।
इस जल ने प्यास बुझाई ना, इसको लौटाने लाया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

क्रोधानल से जब जला हृदय, चन्दन ने कोई न काम किया।
तन को तो शान्त किया इसने, मन को न मगर आराम दिया।।
संसार-ताप से तप्त हृदय, सन्ताप मिटाने आया हूँ।
चरणों में चन्दन अर्पण कर, शीतलता पाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अभिमान किया अबतक जड़ पर, अक्षयनिधि को ना पहचाना।
मैं जड़ का हूँ जड़ मेरा है, यह सोच बना था मस्ताना।।
क्षत में विश्वास किया अबतक, अक्षत को प्रभुवर ना जाना।
अभिमान की आन मिटाने को, अक्षयनिधि तुम को पहचाना।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

दिन-रात वासना में रहकर, मेरे मन ने प्रभु सुख माना।
पुरुषत्व गँवाया पर प्रभुवर, उसके छल को ना पहचाना।।
माया ने डाला जाल प्रथम, कामुकता ने फिर बाँध लिया।
उसका प्रमाण यह पुष्प-बाण, लाकर के प्रभुवर भेंट किया।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

पर पुद्गल का भक्षण करके, यह भूख मिटानी चाही थी।
इस नागिन से बचने को प्रभु, हर चीज बनाकर खाई थी।।
मिष्टान्न अनेक बनाये थे, दिन-रात भखे न मिटी प्रभुवर।
अब संयम-भाव जगाने को, लाया हूँ ये सब थाली भर।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

पहले अज्ञान मिटाने को, दीपक था जग में उजियाला।
उससे न हुआ कुछ तब युग ने, बिजली का बल्ब जला डाला।।
प्रभु! भेदज्ञान की आँख न थी, क्या कर सकती थी यह ज्वाला।
यह ज्ञान है कि अज्ञान कहो, तुमको भी दीप दिखा डाला।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

शुभ-कर्म कमाऊँ सुख होगा, अब तक मैंने यह माना था।
पाप कर्म को त्याग पुण्य को, चाह रहा अपनाना था।।
किन्तु समझ कर शत्रु कर्म को, आज जलाने आया हूँ।
लेकर दशांग यह धूप, कर्म की धूम उड़ाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भोगों को अमृत-फल जाना, विषयों में निश-दिन मस्त रहा।
उनके संग्रह में हे प्रभुवर! मैं व्यस्त-त्रस्त-अभ्यस्त रहा।।
शुद्धात्मप्रभा जो अनुपम फल, मैं उसे खोजने आया हूँ।
प्रभु सरस सुवासित ये जड़-फल, मैं तुम्हें चढ़ाने लाया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुमूल्य जगत का वैभव यह, क्या हमको सुखी बना सकता।
अरे! पूर्णता पाने में, इसकी क्या है आवश्यकता।।
मैं स्वयं पूर्ण हूँ अपने में, प्रभु है अनर्घ्य मेरी माया।
बहुमूल्य द्रव्यमय अर्घ्य लिये, अर्पण के हेतु चला आया।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

समयसार जिनदेव हैं, जिन-प्रवचन जिनवाणी।
नियमसार निर्ग्रन्थ गुरु, करें कर्म की हानि।।

(वीरछन्द)

हे वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, तुमको ना अब तक पहिचाना।
अतएव पड़ रहे हैं प्रभुवर, चौरासी के चक्कर खाना।।
करुणानिधि तुमको समझ नाथ, भगवान भरोसे पड़ा रहा।
भरपूर सुखी कर दोगे तुम, यह सोचे सन्मुख खड़ा रहा।।

तुम वीतराग हो लीन स्वयं में, कभी न मैंने यह जाना।
तुम हो निरीह जग से कृत-कृत, इतना ना मैंने पहिचाना।।
प्रभु वीतराग की वाणी में, जैसा जो तत्त्व दिखाया है।
जो होना है सो निश्चित है, केवलज्ञानी ने गाया है।।

उस पर तो श्रद्धा ला न सका, परिवर्तन का अभिमान किया।
बनकर पर का कर्ता अब तक, सत् का न प्रभो सम्मान किया।।
भगवान तुम्हारी वाणी में, जैसा जो तत्त्व दिखाया है।
स्याद्वाद-नय, अनेकान्त-मय, समयसार समझाया है।।

उस पर तो ध्यान दिया न प्रभो, विकथा में समय गँवाया है।
शुद्धात्म-रुचि न हुई मन में, ना मन को उधर लगाया है।।
मैं समझ न पाया था अबतक, जिनवाणी किसको कहते हैं।
प्रभु वीतराग की वाणी में, कैसे क्या तत्त्व निकलते हैं।।

राग धर्ममय धर्म रागमय, अबतक ऐसा जाना था।
शुभ-कर्म कमाते सुख होगा, बस अबतक ऐसा माना था।।
पर आज समझ में आया है, कि वीतरागता धर्म अहा।
राग-भाव में धर्म मानना, जिनमत में मिथ्यात्व कहा।।

वीतरागता की पोषक ही, जिनवाणी कहलाती है।
यह है मुक्ति का मार्ग निरन्तर, हम को जो दिखलाती है।।
उस वाणी के अन्तर्तम को, जिन गुरुओं ने पहचाना है।
उन गुरुवर्यों के चरणों में, मस्तक बस हमें झुकाना है।।

दिन-रात आत्मा का चिन्तन, मृदु सम्भाषण में वही कथन।
निर्वस्त्र दिगम्बर काया से भी, प्रकट हो रहा अन्तर्मन।।
निर्ग्रन्थ दिगम्बर सद्ज्ञानी, स्वातम में सदा विचरते जो।
ज्ञानी-ध्यानी-समरससानी, द्वादश विधि तप नित करते जो।।

चलते-फिरते सिद्धों-से गुरु-चरणों में शीश झुकाते हैं।
हम चलें आपके कदमों पर, नित यही भावना भाते हैं।।
हो नमस्कार शुद्धातम को, हो नमस्कार जिनवर वाणी।
हो नमस्कार उन गुरुओं को, जिनकी चर्या समरससानी।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

दर्शन दाता देव हैं, आगम सम्यग्ज्ञान।
गुरु चारित्र की खानि हैं, मैं वंदौं धरि ध्यान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

चिंतन कणिका

कल का दिन किसने देखा, आज का दिन हम खोवें क्यों?
जिन घड़ियों में हँस सकते हैं, उन घड़ियों में रोवें क्यों।

***

वस्तु स्वातंत्र्य व अकर्तृत्व, यह ही सिद्धान्त हमारा है,
जानो देखो सुख रूप रहो, यह ही पुरुषार्थ निराला है।।
सहज रूप रहना ही धर्म, नहीं है वह जड़ किरिया रूप,
सामान्य-अभेद-नित्य-एक में कर द्रवदृष्टि बनो शिव भूप।।

श्री सिद्ध पूजन–1

(बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' कृत)

(हरिगीतिका)

निज वज्र पौरुष से प्रभो! अन्तर-कलुष सब हर लिये।
प्रांजल[1] प्रदेश-प्रदेश में, पीयूष निर्झर झर गये।।
सर्वोच्च हो अतएव बसते, लोक के उस शिखर रे!
तुम को हृदय में स्थाप, मणि-मुक्ता चरण को चूमते।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीरछन्द)

शुद्धातम-सा परिशुद्ध प्रभो! यह निर्मल नीर चरण लाया।
मैं पीड़ित निर्मम ममता से, अब इसका अंतिम दिन आया।।
तुम तो प्रभु अंतर्लीन हुए, तोड़े कृत्रिम सम्बन्ध सभी।
मेरे जीवन-धन तुमको पा, मेरी पहली अनुभूति जगी।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि.।

मेरे चैतन्य-सदन में प्रभु! धू-धू क्रोधानल जलता है।
अज्ञान-अमा[2] के अंचल में, जो छिपकर पल-पल पलता है।।
प्रभु! जहाँ क्रोध का स्पर्श नहीं, तुम बसो मलय की महकों में।
मैं इसीलिए मलयज लाया, क्रोधासुर भागे पलकों में।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि.।

अधिपति प्रभु! धवल भवन[3] के हो, और धवल तुम्हारा अंतस्तल।
अंतर के क्षत सब विक्षत कर, उभरा स्वर्णिम सौंदर्य विमल।।

1. शुद्ध 2. अमावस्या 3. सिद्धशिला

मैं महामान से क्षत-विक्षत, हूँ खंड-खंड लोकांत-विभो!
मेरे मिट्टी के जीवन में, प्रभु! अक्षत की गरिमा भर दो।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

चैतन्य-सुरभि की पुष्प-वाटिका, में विहार नित करते हो।
माया की छाया रंच नहीं, हर बिन्दु सुधा की पीते हो।।
निष्काम प्रवाहित हर हिलोर, क्या काम काम की ज्वाला से।
प्रत्येक प्रदेश प्रमत्त हुआ, पाताल-मधु-मधुशाला[1] से।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

यह क्षुधा देह का धर्म प्रभो! इसकी पहिचान कभी न हुई।
हर पल तन में ही तन्मयता, क्षुत्-तृष्णा अविरल पीन[2] हुई।।
आक्रमण क्षुधा का सह्य नहीं, अतएव लिये हैं व्यंजन ये।
सत्वर तृष्णा को तोड़ प्रभो! लो, हम आनंद-भवन पहुँचे।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

विज्ञान नगर के वैज्ञानिक, तेरी प्रयोगशाला विस्मय।
कैवल्य-कला में उमड़ पड़ा, सम्पूर्ण विश्व का ही वैभव।।
पर तुम तो उससे अति विरक्त, नित निरखा करते निज निधियाँ।
अतएव प्रतीक प्रदीप लिये, मैं मना रहा दीपावलियाँ[4]।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

तेरा प्रासाद महकता प्रभु! अति दिव्य दशांगी[5] धूपों से।
अतएव निकट नहिं आ पाते, कर्मों के कीट-पतंग अरे!
यह धूप सुरभि-निर्झरणी, मेरा पर्यावरण[6] विशुद्ध हुआ।
छक गया योग-निद्रा[7] में प्रभु! सर्वांग अमी[8] है बरस रहा।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

1. शुद्ध अन्तस्तत्त्व का आनंदभवन 2. पुष्ट 3. अविलम्ब 4. महोत्सव 5. दशधर्मों की 6. अंतरंग प्रदूषण 7. आनन्द-समाधि 8. अमृत

निज लीन परम स्वाधीन बसो, प्रभु! तुम सुरम्य शिव-नगरी में।
प्रतिपल बरसात गगन[1] से हो, रसपान करो शिव-गगरी में।।
ये सुर-तरुओं के फल साक्षी, यह भव-संतति का अंतिम क्षण।
प्रभु! मेरे मंडप में आओ, है आज मुक्ति का उद्घाटन।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

तेरे विकीर्ण[2] गुण सारे प्रभु! मुक्ता-मोदक से सघन हुए।
अतएव रसास्वादन करते, रे! घनीभूत अनुभूति लिये।।
हे नाथ! मुझे भी अब प्रतिक्षण, निज अंतर-वैभव की मस्ती।
है आज अर्घ्य की सार्थकता, तेरी अस्ति मेरी बस्ती।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

चिन्मय हो, चिद्रूप प्रभु! ज्ञाता मात्र चिदेश।
शोध-प्रबंध चिदात्म[3] के, स्रष्टा तुम ही एक।।

(रेखता)

जगाया तुमने कितनी बार! हुआ नहिं चिर-निद्रा का अन्त।
मदिर[4] सम्मोहन ममता का, अरे! बेचेत पड़ा मैं सन्त।।
घोर तम छाया चारों ओर, नहीं निज सत्ता की पहिचान।
निखिल जड़ता दिखती सप्राण, चेतना अपने से अनजान।।
ज्ञान की प्रतिपल उठे तरंग, झाँकता उसमें आतमराम।
अरे! आबाल सभी गोपाल, सुलभ सबको चिन्मय अभिराम।।
किन्तु पर सत्ता में प्रतिबद्ध, कीर-मर्कट-सी[5] गहल अनन्त।
अरे! पाकर खोया भगवान, न देखा मैंने कभी बसंत।।

1. शून्य चैतन्य 2. बिखरे हुए 3. आत्मा के शुद्धि-विधान की शोध 4. मादक 5. तोता और बंदर जैसी

नहीं देखा निज शाश्वत देव, रही क्षणिका पर्यय की प्रीति।
क्षम्य कैसे हों ये अपराध? प्रकृति की यही सनातन रीति।।
अतः जड़-कर्मों की जंजीर, पड़ी मेरे सर्वात्म प्रदेश।
और फिर नरक-निगोदों बीच, हुए सब निर्णय हे सर्वेश!।
घटा घन विपदा की बरसी, कि टूटी शंपा[1] मेरे शीश।
नरक में पारद-सा तन टूक, निगोदों मध्य अनंती मीच[2]।।
करें क्या स्वर्ग सुखों की बात, वहाँ की कैसी अद्भुत टेव!
अंत में बिलखे छह-छह मास, कहें हम कैसे उसको देव!।
दशा चारों गति की दयनीय, दया का किन्तु न यहाँ विधान।
शरण जो अपराधी को दे, अरे! अपराधी वह भगवान।।
''अरे! मिट्टी की काया बीच, महकता चिन्मय भिन्न अतीव।
शुभाशुभ की जड़ता तो दूर, पराया ज्ञान वहाँ परकीय।।
अहो 'चित्' परम अकर्तानाथ, अरे! वह निष्क्रिय तत्त्व विशेष।
अपरिमित अक्षय वैभव-कोष'', सभी ज्ञानी का यह परिवेश[3]।।
बताये मर्म अरे! यह कौन, तुम्हारे बिन वैदेही नाथ।
विधाता शिव-पथ के तुम एक, पड़ा मैं तस्कर दल के हाथ।।
किया तुमने जीवन का शिल्प[4], खिरे सब मोहकर्म और गात[5]।
तुम्हारा पौरुष झंझावात[6], झड़ गये पीले-पीले पात।।
नहीं प्रज्ञा-आवर्तन[7] शेष, हुए सब आवागमन अशेष।
अरे प्रभु! चिर-समाधि में लीन, एक में बसते आप अनेक।।

1. बिजली 2. मृत्यु 3. अनुभूति 4. सुन्दर रचना 5. शरीर 6. तूफान 7. ज्ञप्ति परिवर्तन

तुम्हारा चित्-प्रकाश कैवल्य, कहें तुम ज्ञायक लोकालोक।
अहो! बस ज्ञान जहाँ हो लीन, वही है ज्ञेय, वही है भोग।।
योग-चांचल्य[1] हुआ अवरुद्ध, सकल चैतन्य निकल निष्कंप।
अरे! ओ योग रहित योगीश! रहो यों काल अनंतानंत।।
जीव कारण-परमात्म त्रिकाल, वही है अंतस्तत्त्व अखंड।
तुम्हें प्रभु! रहा वही अवलंब, कार्य परमात्म हुए निर्बन्ध।।
अहो! निखरा कांचन चैतन्य, खिले सब आठों कमल[2] पुनीत।
अतीन्द्रिय सौख्य चिरंतन भोग करो तुम धवल महल के बीच।।
उछलता मेरा पौरुष आज, त्वरित टूटेंगे बंधन नाथ!
अरे! तेरी सुख-शय्या बीच, होगा मेरा प्रथम प्रभात।।
प्रभो! बीती विभावरी[3] आज, हुआ अरुणोदय शीतल छाँव।
झूमते शांति-लता के कुंज, चलें प्रभु! अब अपने उस गाँव।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

चिर-विलास चिद्ब्रह्म में, चिर-निमग्न भगवंत।
द्रव्य[4]-भाव[5] स्तुति से प्रभो!, वंदन तुम्हें अनंत।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

1. आत्मप्रदेशों का कम्पन 2. आठ गुण 3. रात 4. उत्कृष्ट भक्ति परिणाम 5. निज शुद्धात्म-संवेदन।

अपने जीवन को दोषों से बचाना ही सच्ची दया है।
धर्म की प्रभावना वचनों से नहीं जीवन से होती है।
चैतन्य का लक्ष्य हो तो समभाव सहज होता है।

श्री सिद्ध पूजन-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(दोहा)

सर्व कर्म बन्धन रहित, नित्य निरामय जान।
परम सूक्ष्म सिद्धात्मा, चित्स्वरूप पहिचान।।
पूजूँ भक्ति भाव से, करूँ भेद विज्ञान।
निश्चय से मैं भी अहो, शाश्वत सिद्ध समान।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(बसन्ततिलका)

भव-वास दुखमय तज निज में बसे जो।
निर्मल गुणाकार हुए शिव में बसे जो।।
जल-सम पवित्र होकर मैं सिद्ध ध्याऊँ।
जन्मादि दोष क्षण में प्रभु-सम नशाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिने जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्त्व आदि गुण युत जगपूज्य हैं जो।
निरखेद तृप्त निज में अविचल रहें जो।।
चन्दन समान शीतल हो सिद्ध ध्याऊँ।
संताप रूप भव में फिर ना भ्रमाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिने भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तिम शरीर से जो कुछ न्यून राजें।
अशरीर ज्ञानमय जो अक्षय विराजें।।

ले भाव अक्षत सहज मैं सिद्ध ध्याऊँ।
क्षत रूप जग विभव अब किंचित् न चाहूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपातीति स्वाहा।

स्वाधीन मग्न निज में निश्चल हुए जो।
कामादि दोष नाशे सुखमय हुए जो।।
निष्काम भावमय हो मैं सिद्ध ध्याऊँ।
हो ब्रह्मरूप शाश्वत आनन्द पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपातीति स्वाहा।

हे आत्मनिष्ठ योगीश्वर! ध्यान गम्य।
प्रभुवर! करूँ सुभक्ति वाणी अगम्य।।
निज में ही तृप्त हो प्रभु पूजा रचाऊँ।
दुखमय क्षुधादि नाशें प्रभुता सु पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपातीति स्वाहा।

हे चित्प्रकाशमय परमेश्वर! अलौकिक।
निज में निमग्न रहते तिहुँ जग के ज्ञायक।।
निर्मोह ज्ञानमय हो मैं सिद्ध ध्याऊँ।
ज्ञायक स्वरूप सहजहिं ज्ञायक रहाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपातीति स्वाहा।

ध्रुव ध्येय रूप शुद्धातम सुखकारी।
दर्शाय देव कीना उपकार भारी।।
हो मग्न ध्येय माहीं पूजा रचाऊँ।
दुष्टाष्ट कर्म-बन्धन सहजहिं नशाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

अक्षय अनंत अविकारी मुक्ति-नाथ।
वांछा न शेष पाया चैतन्य नाथ।।
आननद विभोर हो प्रभु पूजा रचाऊँ।
अनुपम अचल सु शाश्वत गति शीघ्र पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

त्रैलोक्य चूड़ामणि प्रभुवर! हुए हैं।
साक्षात् शुद्ध आत्मा विभु आप ही हैं।।
भावार्घ्य लेय सुखमय पूजा रचाऊँ।
अविचल अनर्घ्य अक्षय प्रभुता सु पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

अविकल परमानन्दमय, अविनाशी गुणखान।
भक्ति भाव पूरित हृदय, सहज करूँ गुणगान।।

(चौपाई)

स्वयं सिद्ध परमातम ध्याया, कर्म कलंक समूल नशाया।
प्रकटे गुण अनन्त अविकारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।

जय जय क्षायिक सम्यग्दर्शन, केवलज्ञान सु केवलदर्शन।
हुए अनन्त सु वीरजधारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।

अगुरुलघु सूक्ष्मत्व अवगाहन, अव्याबाध प्रकट भयो पावन।
बिन्मूरति चिन्मूरति धारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।

गुणस्थान चौदह के पार, नित्य निरामय ध्रुव अविकार।
परमानन्द दशा विस्तारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।

तीर्थंकर जब दीक्षा धारें, सिद्ध प्रभु का नाम उचारें।
अचल अनूपम पदवी धारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।

आत्माराधन का फल पाया, पंचम भाव प्रत्यक्ष दिखाया।
महिमावंत ध्येय सुखकारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।
एक क्षेत्र में प्रभू अनन्ते, सत्ता भिन्न-भिन्न विलसन्ते।
अहो! सु अद्भुत प्रभुता धारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।
सिद्धालय ज्यों सिद्ध विराजे, देह माहिं त्यों आतम राजे।
ज्ञायक रूप परम अविकारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।
भेदज्ञान करके पहिचाना, द्रव्यदृष्टि धरि सहज प्रमाना।
होऊँ निश्चय शिवमगचारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।
सहज रहूँ प्रभु जाननहार, परभावों का हो परिहार।
कटें कर्मबन्धन दुखकारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।
अपने में संतुष्ट रहाऊँ, अपने में ही तृप्त रहाऊँ।
हुई नि:शेष कामना सारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

निश्चल सिद्धस्वरूप, ज्ञानस्वभावी आत्मा।
सहज शुद्ध चिद्रूप, अनुभव करि आनन्द भयो।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री सिद्ध पूजन-3

(डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल कृत)

(दोहा)

चिदानन्द स्वातमरसी, सत् शिव सुन्दर जान।
ज्ञाता-दृष्टा लोक के, परम सिद्ध भगवान।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

ज्यों-ज्यों प्रभुवर जलपान किया, त्यों-त्यों तृष्णा की आग जली।
थी आश कि प्यास बुझेगी अब, पर यह सब मृगतृष्णा निकली।।
आशा-तृष्णा से जला हृदय, जल लेकर चरणों में आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

तन का उपचार किया अबतक, उस पर चंदन का लेप किया।
मल-मल कर खूब नहा करके, तन के मल का विक्षेप किया।।
अब आतम के उपचार हेतु, तुमको चन्दन-सम है पाया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सचमुच तुम अक्षत हो प्रभुवर! तुम ही अखण्ड अविनाशी हो।
तुम निराकार अविचल निर्मल, स्वाधीन सफल संन्यासी हो।।
ले शालि-कणों का अवलम्बन, अक्षय-पद! तुमको अपनाया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि.।

जो शत्रु जगत का प्रबल काम, तुमने प्रभुवर उसको जीता।
हो हार जगत के वैरी की, क्यों नहिं आनन्द बढ़े सब का।।
प्रमुदित मन विकसित सुमन नाथ, मनसिज को ठुकराने आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं समझ रहा था अब तक प्रभु, भोजन से जीवन चलता है।
भोजन बिन नरकों में जीवन, भरपेट मनुज क्यों मरता है।।
तुम भोजन बिन अक्षय सुखमय, यह समझ त्यागने हूँ आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आलोक ज्ञान का कारण है, इन्द्रिय से ज्ञान उपजता है।
यह मान रहा था पर क्यों कर, जड़-चेतन-सर्जन करता है।।
मेरा स्वभाव है ज्ञानमयी, यह भेद-ज्ञान पा हरषाया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरा स्वभाव चेतनमय है, इसमें जड़ की कुछ गंध नहीं।
मैं हूँ अखण्ड चित्पिण्ड चण्ड, पर से कुछ भी सम्बन्ध नहीं।।
यह धूप नहीं, जड़-कर्मों की रज आज उड़ाने मैं आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ-कर्मों का फल विषय-भोग, भोगों में मानस रमा रहा।
नित नई लालसायें जागीं, तन्मय हो उनमें समा रहा।।
रागादि विभाव किये जितने, आकुलता उनका फल पाया।
होकर निराश सब जगभर से, अब सिद्ध-शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल पिया और चन्दन चरचा, मालायें सुरभित सुमनों की।
पहनीं, तन्दुल सेये व्यंजन, दीपावलियाँ की रत्नों की।।

सुरभी धूपायन की फैली, शुभ-कर्मों का सब फल पाया।
आकुलता फिर भी बनी रही, क्या कारण जान नहीं पाया।।
जब दृष्टि पड़ी प्रभुजी तुम पर, मुझको स्वभाव का भान हुआ।
सुख नहीं विषय-भोगों में है, तुम को लख यह सद्ज्ञान हुआ।।
जल से फल तक का वैभव यह, मैं आज त्यागने हूँ आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

आलोकित हो लोक में, प्रभु परमात्मप्रकाश।
आनन्दामृत पानकर, मिटे सभी की प्यास।।

(पद्धरि)

जय ज्ञान मात्र ज्ञायक स्वरूप, तुम हो अनन्त चैतन्य रूप।
तुम हो अखण्ड आनन्द पिण्ड, मोहारि दलन को तुम प्रचण्ड।।
रागादि विकारी भाव जार, तुम हुए निरामय निर्विकार।
निर्द्वन्द्व निराकुल निराधार, निर्मम निर्मल हो निराकार।।
नित करत रहत आनन्द रास, स्वाभाविक परिणति में विलास।
प्रभु शिव-रमणी के हृदय हार, नित करत रहत निज में विहार।।
प्रभु! भवदधि यह गहरो अपार, बहते जाते सब निराधार।
निज परिणति का सत्यार्थभान, शिवपद दाता जो तत्त्वज्ञान।।
पाया नहिं मैं उसको पिछान, उलटा ही मैंने लिया मान।
चेतन को जड़मय लिया जान, तन में अपनापा लिया मान।।

शुभ-अशुभ राग जो दुःख-खान, उसमें माना आनन्द महान।
प्रभु अशुभ-कर्म को मान हेय, माना पर शुभ को उपादेय।।
जो धर्म-ध्यान आनन्द रूप, उसको जाना मैं दुख स्वरूप।
मनवांछित चाहे नित्य भोग, उनको ही माना है मनोग।।

इच्छा-निरोध की नहीं चाह, कैसे मिटता भव-विषय-दाह।
आकुलतामय संसार-सुख, जो निश्चय से है महा-दुःख।।
उसकी ही निश-दिन करी आश, कैसे कटता संसार-पाश।
भव-दुख का पर को हेतु जान, पर से ही सुख को लिया मान।।

मैं दान दिया अभिमान ठान, उसके फल पर नहिं दिया ध्यान।
पूजा कीनी वरदान माँग, कैसे मिटता संसार स्वांग।।

तेरा स्वरूप लख प्रभु आज, हो गये सफल सम्पूर्ण काज।
मो उर प्रकट्यो प्रभु भेद-ज्ञान, मैंने तुम को लीना पिछान।।

तुम पर के कर्ता नहीं नाथ, ज्ञाता हो सब के एक साथ।
तुम भक्तों को कुछ नहीं देत, अपने समान बस बना लेत।।
यह मैंने तेरी सुनी आन, जो लेवे तुम को बस पिछान।
वह पाता है कैवल्यज्ञान, होता परिपूर्ण कला-निधान।।

विपदामय पर-पद है निकाम, निज-पद ही है आनन्द-धाम।
मेरे मन में बस यही चाह, निजपद को पाऊँ हे जिनाह।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पर का कुछ नहिं चाहता, चाहूँ अपना भाव।
निज-स्वभाव में थिर रहूँ, मेटो सकल विभाव।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री पंच-परमेष्ठी पूजन

(श्री राजमलजी पवैया कृत)

अरहन्त सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय! हे साधु! नमन।
जय पंच परम परमेष्ठी जय, भव-सागर तारणहार नमन।।
मन-वच-काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध हृदय से आह्वानन।
मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन।।
निज आत्मतत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन।
तुम चरणों की पूजन से प्रभु, निज सिद्ध रूप का हो दर्शन।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर-अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ, तिष्ठ, ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ।
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भरकर लाया हूँ।।
मैं जन्म-जरा-मृतु नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार-ताप में जल-जल कर, मैंने अगणित दुख पाये हैं।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाये हैं।।
शीतल चंदन है भेंट तुम्हें, संसार-ताप नाशो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

दुखमय अथाह भवसागर में, मेरी यह नौका भटक रही।
शुभ-अशुभ भाव की भँवरों में, चैतन्य शक्ति निज अटक रही।।

तन्दुल है धवल तुम्हें अर्पित, अक्षय-पद प्राप्त करूँ स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मैं काम-व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किंचित् छाया।
चरणों में पुष्प चढ़ाता हूँ, तुम को पाकर मन हर्षाया।।
मैं काम-भाव विध्वंस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं क्षुधा-रोग से व्याकुल हूँ, चारों गति में भरमाया हूँ।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी, तृप्त नहीं हो पाया हूँ।।
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा-रोग मेटो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्ध महा-अज्ञानी मैं, निज को पर का कर्ता माना।
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्मस्वरूप न पहिचाना।।
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की ज्वाला धधक रही, संसार बढ़ रहा है प्रतिपल।
संवर से आस्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल-पल।।
यह धूप चढ़ाकर अब आठों, कर्मों का हनन करूँ स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्मतत्त्व का मनन करूँ, चिंतवन करूँ निज चेतन का।
दो श्रद्धा-ज्ञान-चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का।।

उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महाफल हो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ।
अब तक के संचित कर्मों का, मैं पुंज जलाने आया हूँ।।
यह अर्घ्य समर्पित करता हूँ, अविचल अनर्घ्य पद दो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(पद्धरि)

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अरहन्त देव को नमस्कार।।1।।
अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरंजन निराकार।
जय अजर अमर हे मुक्तिकंत, भगवंत सिद्ध को नमस्कार।।2।।
छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार।
हे मुक्तिवधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार।।3।।
एकादश अंग पूर्व चौदह के, पाठी गुण पच्चीस धार।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार।।4।।
व्रत समिति गुप्ति चारित्र धर्म, वैराग्य भावना हृदय धार।
हे द्रव्य-भाव संयममय मुनिवर, सर्व साधु को नमस्कार।।5।।
बहु पुण्यसंयोग मिला नरतन, जिनश्रुत जिनदेव चरण दर्शन।
हो सम्यग्दर्शन प्राप्त मुझे, तो सफल बने मानव जीवन।।6।।
निज-पर का भेद जानकर मैं, निज को ही निज में लीन करूँ।
अब भेदज्ञान के द्वारा मैं, निज आत्म स्वयं स्वाधीन करूँ।।7।।

निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ।
पर-परिणति से हो विमुख सदा, निज ज्ञानतत्त्व को ही जानूँ।।8।।
जब ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता विकल्प तज, शुक्लध्यान मैं ध्याऊँगा।
तब चार घातिया क्षय करके, अरहन्त महापद पाऊँगा।।9।।
है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु! कब इसको पाऊँगा।
सम्यक् पूजा फल पाने को, अब निजस्वभाव में आऊँगा।।10।।
अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु, हे प्रभु! मैंने की है पूजन।
तबतक चरणों में ध्यान रहे, जबतक न प्राप्त हो मुक्ति सदन।।11।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूँ।
मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल, नवकार मंत्र का ध्यान करूँ।।12।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री सीमन्धर जिनपूजन-1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(सोरठा)

सीमन्धर जिन नाथ, पूर्व विदेह विराजते।
हृदय विराजो नाथ, भाव सहित पूजा रचों।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(वीरछन्द)

जन्म जरा मृत चक्र नाशने, जिन चरणों में आया हूँ।
तुम हो अक्षय अविनाशी प्रभु, यह लख अति हर्षाया हूँ।।

यह जल लख निस्सार जिनेश्वर! सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-रोगविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

निजानन्द का वेदन करते, भवाताप उत्पन्न न हो।
वर्ते निज में तृप्त परिणति, कर्मोदय से खिन्न न हो।।
चन्दन लख निस्सार जिनेश्वर! सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षय तो अपना ही वैभव, अक्षय तो अपना पद है।
अक्षय तो अपनी ही प्रभुता, पर का तो झूठा मद है।।
क्षत भावों को त्याग जिनेश्वर! अक्षत आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

काम वेदना का उपाय तो, ब्रह्मचर्य का धारण है।
परम ब्रह्म की सहज साधना, ब्रह्मचर्य का साधन है।।
पुष्पों को निस्सार जान प्रभु सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

क्षुधा वेदना नहिं उपजावे, ज्ञानामृत से तृप्त रहे।
भोजन बिन ही अहो जिनेश्वर! सुखमय आप विराज रहे।।
ये नैवेद्य असार जानकर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

ज्ञानोद्योत रहे अन्तर में, वस्तु स्वरूप झलकता है।
सहज प्रवर्ते भेदज्ञान प्रभु, महा मोह-तम नशता है।।

जड़ दीपक निस्सार जानकर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

अहो! अगन्ध आत्मा जाना, धर्म सुगन्धि प्रकट हुई।
घ्राणेन्द्रिय का विषय दुखमय, बाह्य गन्ध से विरति हुई।।
धूप जान निस्सार जिनेश्वर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म फलों से हुई उदासी, मोक्ष महाफल पाऊँगा।
हे जिन स्वामी! अन्तर्मुख हो, निज पुरुषार्थ बढ़ाऊँगा।।
जड़ फल लख निस्सार जिनेश्वर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे अनर्घ्य पद दाता! ज्ञाता-दृष्टा रह निजपद ध्याऊँ।
निश्चय ही तुम सम हे स्वामी, ध्रुव अनर्घ्य जिनपद पाऊँ।।
द्रव्य-भावमय अर्घ्य जिनेश्वर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमन्धर स्वामी! आत्म-भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

गुण अनन्त मंगलमयी, कैसे करूँ बखान।
भक्तिवश वाचाल हो, करूँ अल्प गुणगान।।

(वीरछन्द)

समवसरण में नाथ विराजे, चतुर्मुखी अन्तर्मुख हो।
भक्ति उर में सहज उमड़ती, जब परिणति प्रभु सन्मुख हो।।
आगम से प्रभु महिमा सुन, प्रत्यक्ष लखूँ ऐसा मन हो।
जिनवर तुम ही प्राण हमारे, तुम ही तो जीवनधन हो।।

धर्म-तीर्थ के परम प्रणेता, धर्म-पिता सर्वज्ञ महान।
अष्टादश दोषों से न्यारे, तिहुँ जग-भूषण हे भगवान।।
दिव्यध्वनि से वर्षाते प्रभु, धर्मामृत परमानन्ददाय।
जिसको पीते-पीते स्वामी, जन्म-जरा-मृत रोग नशाय।।

अहो अलौकिक वस्तुस्वरूप, दिखाया प्रभुवर नित अविकार।
हेय-रूप पर-भाव बताये, उपादेय शुद्धातम सार।।
अन्य न कोई दुख का कारण, भूल स्वयं को है हैरान।
इसीलिए प्रभु कहा आपने, श्रेय मूल है सम्यग्ज्ञान।।

निज अक्षय प्रभुता दर्शायी, किया अनन्त परम उपकार।
हो निर्ग्रन्थ आत्मपद साधूँ, निश्चय होऊँ भव से पार।।
रहे देह में फिर भी न्यारा, अन्तर माहिं विदेही नाथ।
सहज स्मरण हो आता है, तुम्हें पूजते हे जिननाथ।।

यद्यपि आप दूरवर्ती हैं, किन्तु भाव में सदा समीप।
ज्ञान माहिं प्रत्यक्षवत् निरखूँ, जले स्वयं अन्तर का दीप।।
निर्मम हुआ शान्त चित प्रभुवर, परम प्रभू का ध्यान रहे।
निर्मल साम्यभाव की धारा, सहजपने सुखकार बहे।।

हो निर्ग्रन्थ निमग्न रहूँ नित, सर्व विभाव नशाऊँगा।
हुआ सहज विश्वास शीघ्र ही, तुम-सम ही हो जाऊँगा।।

(त्रिभंगी)

जय-जय सीमंधर, तिहुँ जग सुखकर, नृप श्रेयांससुत अविकारी।
सत्यदेवी नन्दन, करते वन्दन, वृषभ चिह्न मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

सीमंधर भगवान को, जो पूजें चित धार।
निज सीमा पहिचानकर, सहज लहें भव-पार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री सीमन्धर जिनपूजन-2

(डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल कृत)

(कुण्डलिया)

भव-समुद्र सीमित कियो, सीमन्धर भगवान।
कर सीमित निजज्ञान को, प्रकट्यो पूरण ज्ञान।।
प्रकट्यो पूरण ज्ञान-वीर्य-दर्शन सुखकारी,
समयसार अविकार विमल चैतन्य-विहारी।
अंतर्बल से किया प्रबल रिपु-मोह पराभव,
अरे भवान्तक! करो अभय, हर लो मेरा भव।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिन! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिन! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिन! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्।

प्रभुवर! तुम जल-से शीतल हो, जल-से निर्मल अविकारी हो।
मिथ्यामल धोने को जिनवर, तुम ही तो मलपरिहारी हो।।
तुम सम्यग्ज्ञान जलोदधि हो, जलधर अमृत बरसाते हो।
भविजन मन मीन प्राणदायक, भविजन मन-जलज खिलाते हो।।
हे ज्ञान पयोनिधि सीमन्धर! यह ज्ञान प्रतीक समर्पित है।
हो शान्त ज्ञेय-निष्ठा मेरी, जल से चरणाम्बुज चर्चित है।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन-सम चन्द्र-वदन जिनवर, तुम चन्द्रकिरण-से सुखकर हो।
भव-ताप निकंदन हे प्रभुवर! सचमुच तुम ही भव-दुखहर हो।।
जल रहा हमारा अन्तःस्तल, प्रभु इच्छाओं की ज्वाला से।
यह शान्त न होगा हे जिनवर रे! विषयों की मधुशाला से।।
चिर-अंतर्दाह मिटाने को, तुम ही मलयागिरि चंदन हो।
चंदन से चरचूँ चरणांबुज, भव-तप-हर! शत-शत वंदन हो।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु! अक्षतपुर के वासी हो, मैं भी तेरा विश्वासी हूँ।
क्षत-विक्षत में विश्वास नहीं, तेरे पद का प्रत्याशी हूँ।।
अक्षत का अक्षत-संबल ले, अक्षत-साम्राज्य लिया तुमने।
अक्षत-विज्ञान दिया जग को, अक्षत-ब्रह्माण्ड किया तुमने।।
मैं केवल अक्षत-अभिलाषी, अक्षत अत एव चरण लाया।
निर्वाण-शिला के संगम-सा, धवलाक्षत मेरे मन भाया।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

तुम सुरभित ज्ञान-सुमन हो प्रभु, नहिं राग-द्वेष दुर्गन्ध कहीं।
सर्वांग सुकोमल चिन्मय तन, जग से कुछ भी सम्बन्ध नहीं।।
निज अंतर्वास सुवासित हो, शून्यान्तर पर की माया से।
चैतन्य-विपिन के चितरंजन, हो दूर जगत की छाया से।।
सुमनों से मन को राह मिली, प्रभु कल्पबेलि से यह लाया।
इनको पा चहक उठा मन-खग, भर चोंच चरण में ले लाया।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आनंद-रसामृत के द्रह हो, नीरस जड़ता का दान नहीं।
तुम मुक्त-क्षुधा के वेदन से, षट्रस का नाम-निशान नहीं।।
विध-विध व्यंजन के विग्रह से, प्रभु भूख न शांत हुई मेरी।
आनंद-सुधारस-निर्झर तुम, अतएव शरण ली प्रभु तेरी।।
चिर-तृप्ति-प्रदायी व्यंजन से, हों दूर क्षुधा के अंजन ये।
क्षुत्पीड़ा कैसे रह लेगी? जब पाये नाथ निरंजन-से।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिन्मय-विज्ञानभवन अधिपति, तुम लोकालोक-प्रकाशक हो।
कैवल्य किरण से ज्योतित प्रभु! तुम महामोहतम नाशक हो।।
तुम हो प्रकाश के पुंज नाथ! आवरणों की परछाँह नहीं।
प्रतिबिम्बित पूरी ज्ञेयावलि, पर चिन्मयता को आँच नहीं।।
ले आया दीपक चरणों में, रे! अन्तर आलोकित कर दो।
प्रभु! तेरे मेरे अन्तर को, अविलंब निरन्तर से भर दो।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धू-धू जलती दुख की ज्वाला, प्रभु त्रस्त निखिल जगतीतल है।
बेचेत पड़े सब देही हैं, चलता फिर राग प्रभंजन है।।
यह धूम घूमरी खा-खाकर, उड़ रहा गगन की गलियों में।
अज्ञान-तमावृत चेतन ज्यों, चौरासी की रंग-रलियों में।।
संदेश धूप का तात्त्विक प्रभु, तुम हुए ऊर्ध्वगामी जग से।
प्रकटे दशांग प्रभुवर! तुम को, अन्तःदशांग की सौरभ से।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ-अशुभ वृत्ति एकांत दुःख, अत्यंत मलिन संयोगी है।
अज्ञान विधाता है इनका, निश्चित चैतन्य विरोधी है।।
काँटों-सी पैदा हो जाती, चैतन्य-सदन के आँगन में।
चंचल छाया की माया-सी, घटती क्षण में बढ़ती क्षण में।।
तेरी फल-पूजा का फल प्रभु! हों शांत शुभाशुभ ज्वालायें।
मधुकल्प फलों-सी जीवन में, प्रभु! शांति-लतायें छा जायें।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल जल-सा प्रभु निजस्वरूप, पहिचान उसी में लीन हुए।
भव-ताप उतरने लगा तभी, चंदन-सी उठी हिलोर हिये।।
अभिराम भवन प्रभु अक्षत का, सब शक्ति प्रसून लगे खिलने।
क्षुत् तृषा अठारह दोष क्षीण, कैवल्य प्रदीप लगा जलने।।
मिट चली चपलता योगों की, कर्मों के ईंधन ध्वस्त हुए।
फल हुआ प्रभो! ऐसा मधुरिम, तुम धवल निरंजन स्वस्थ हुए।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

वैदही हो देह में, अतः विदेही नाथ।
सीमंधर निज सीम में, शाश्वत करो निवास।।1।।

श्री जिन पूर्व विदेह में, विद्यमान अरहंत।
वीतराग सर्वज्ञ श्री, सीमंधर भगवंत।।2।।

(पद्धरि)

हे ज्ञानस्वभावी सीमंधर! तुम हो असीम आनंदरूप।
अपनी सीमा में सीमित हो, फिर भी हो तुम त्रैलोक्य भूप।।3।।
मोहांधकार के नाश हेतु, तुम ही हो दिनकर अति प्रचंड।
हो स्वयं अखंडित कर्म शत्रु को, किया आपने खंड-खंड।।4।।
गृहवास राग की आग त्याग, धारा तुमने मुनिपद महान।
आतमस्वभाव साधन द्वारा, पाया तुमने परिपूर्ण ज्ञान।।5।।
तुम दर्शन ज्ञान दिवाकर हो, वीरज मंडित आनंदकंद।
तुम हुए स्वयं में स्वयं पूर्ण, तुम ही हो सच्चे पूर्णचन्द।।6।।
पूरब विदेह में हे जिनवर! हो आप आज भी विद्यमान।
हो रहा दिव्य उपदेश, भव्य पा रहे नित्य अध्यात्म ज्ञान।।7।।
श्री कुन्दकुन्द आचार्यदेव को, मिला आपसे दिव्य ज्ञान।
आत्मानुभूति से कर प्रमाण, पाया उनने आनन्द महान।।8।।
पाया था उनने समयसार, अपनाया उनने समयसार।
समझाया उनने समयसार, हो गये स्वयं वे समयसार।।9।।
दे गये हमें वे समयसार, गा रहे आज हम समयसार।
है समयसार बस एक सार, है समयसार बिन सब असार।।10।।
मैं हूँ स्वभाव से समयसार, परिणति हो जाये समयसार।
है यही चाह, है यही राह, जीवन हो जाये समयसार।।11।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपमीति स्वाहा।

(सोरठा)

समयसार है सार, और सार कुछ है नहीं।
महिमा अपरम्पार, समयसारमय आपकी।।12।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री आदिनाथ पूजन

(पण्डित जिनेश्वरदासजी कृत)

नाभिराय मरुदेवि के नन्दन, आदिनाथ स्वामी महाराज।
सर्वार्थसिद्धितैं आप पधारे, मध्यलोक माहिं जिनराज।।
इन्द्रदेव सब मिलकर आये, जन्म महोत्सव करने काज।
आह्वानन सब विधि मिल करके, अपने कर पूजें प्रभु पांय।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

क्षीरोदधि को उज्ज्वल जल ले, श्री जिनवर पद पूजन जाय।
जन्म-जरा-दुख मेटन कारन, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभु के पांय।।
श्री आदिनाथ के चरण-कमल पर, बलि-बलि जाऊँ मन वच काय।
हे करुणानिधि! भव-दुख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पांय।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चन्दन दाह निकन्दन, कंचन झारी में भर ल्याय।
श्रीजी के चरण चढ़ाओ भविजन, भव आताप तुरत मिट जाय।।श्री. ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभशालि अखंडित सौरभमंडित, प्रासुक जलसों धोकर ल्याय।
श्रीजी के चरण चढ़ावो भविजन, अक्षय पद को तुरत उपाय।।श्री. ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतकी बेल चमेली, श्री गुलाब के पुष्प मँगाय।
श्री जी के चरण चढ़ावो भविजन, कामबाण तुरत नसि जाय।।श्री. ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज लीना षट्-रस भीना, श्री जिनवर आगे धरवाय।
थाल भराऊँ क्षुधा नसाऊँ, ल्याऊँ प्रभु के मंगल गाय।।श्री. ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग-जगमग होत दशों दिश, ज्योति रही मन्दिर में छाय।
श्री जी के सन्मुख करत आरती, मोह-तिमिर नासै दुख-दाय।।
श्री आदिनाथ के चरण-कमल पर, बलि-बलि जाऊँ मन वच काय।
हे करुणानिधि! भव-दुःख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पांय।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर कपूर सुगन्ध मनोहर, चन्दन कूट सुगन्ध मिलाय।
श्री जी के सन्मुख खेय धुपायन, कर्म जरे चहुँगति मिटि जाय।।श्री. ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल और बादाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय।
महा-मोक्षफल पावन कारन, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभु के पांय।।श्री. ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि निरमल नीरं गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरू ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ्य सुलेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय।।श्री. ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक

(दोहा)

सर्वारथसिद्धि तैं चये, मरुदेवी उर आय।
दोज असित आषाढ़ की, जजूँ तिहारे पांय।।

ॐ ह्रीं श्री आषाढकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत वदी नौमी दिना, जन्म्या श्री भगवान।
सुरपति उत्सव अति कस्या मैं पूजौं धर ध्यान।।

ॐ ह्रीं श्री चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृणवत् ऋद्धि सब छाँड़ि के, तप धार्यो वन जाय।
नौमी चैत्र असेत की, जजूँ तिहारे पांय।।

ॐ ह्रीं श्री चैत्रकृष्णनवम्यां तपकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फागुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान।
इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजों इह थान।।

ॐ ह्रीं श्री फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माघ चतुर्दशि कृष्ण की, मोक्ष गये भगवान।
भवि जीवों को बोधि के, पहुँचे शिवपुर थान।।

ॐ ह्रीं श्री माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

आदीश्वर महाराज, मैं! विनती तुमसे करूँ।
चारों गति के माहिं, मैं दुख पायो सो सुनो।।
कर्म अष्ट मैं हूँ एकलो, यह दुष्ट महादुख देत हो।
कबहूँ इतर निगोद में मोकूँ, पटकत करत अचेत हो।।
म्हारी दीनतणी सुन वीनती।।टेक।।

प्रभु कबहुँक पटक्यो नरक में, जठै जीव महादुख पाय हो।
नित उठि निरदई नारकी, जठै करत परस्पर घात हो।।म्हारी.।।
प्रभु नरक तणा दुःख अब कहूँ, जठै करें परस्पर घात हो।
कोइयक बाँध्यो खंभसों, पापी दे मुदगर की मार हो।।म्हारी.।।
कोइयक काटें करोतसों, पापी अंगतणी दोय फाड़ हो।
प्रभु यह विधि दुख भुगत्या घणा, फिर गति पाई तिरयंच हो।। म्हारी.।।
हिरणा बकरा बाछला, पशु दीन गरीब अनाथ हो।
प्रभु मैं ऊँट बलद भैंसा भयो, जापै लदियो भार अपार हो।।म्हारी.।।

नहिं चाल्यौ जठै गिर पस्चो, पापी दे सोटन की मार हो।
प्रभु कोइयक पुण्य संजोगसूँ, मैं तो पायो स्वर्ग निवास हो।।म्हारी.।।
देवांगना संग रमि रह्यो, जठै भोगनि को परिताप हो।
प्रभु संग अप्सरा रमि रह्यो, कर-कर अति अनुराग हो।।म्हारी.।।
कबहुँक नंदनवन विषैं प्रभु, कबहुँक वन गृह माहिं हो।
प्रभु यह विधिकाल गमायकैं, फिर माला गई मुरझाय हो।।म्हारी.।।
देव थिती सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो।
सोच करत तन खिर पड्यो, फिर उपज्यो गरभ मैं जाय हो।।म्हारी.।।
प्रभु गर्भतणा दुख अब कहूँ, जठै सकड़ाई की ठौर हो।
हलन-चलन नहिं कर सक्यो, जठै सघन कीच घनघोर हो।।म्हारी.।।
माता खावै चरपरो, फिर लागै तन संताप हो।
प्रभु ज्यों जननी तातो भखै, फिर उपजै तन संताप हो।।म्हारी.।।
औंधे मुख झूल्यो रह्यो, फेर निकसन कौन उपाय हो।
कठिन-कठिनकर नींसर्यो, जैसे निसरै जंत्री में तार हो।।म्हारी.।।
प्रभु फिर निकसत ही धरत्याँ पड्यो, फिर लागी भूख अपार हो।
रोय-रोय बिलख्यो घणो, दुख वेदन को नहिं पार हो।।म्हारी.।।
प्रभु दुख मेटन समरथ धनी, यातैं लागूँ तिहारे पांय हो।
सेवक अरज करै प्रभू मोकूँ, भवदधि पार उतार हो।।म्हारी.।।

(दोहा)

श्रीजी की महिमा अगम है, कोई न पावै पार।
मैं मति अल्प अज्ञान हों, कौन करै विस्तार।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

विनती ऋषभ जिनेश की, जो पढ़सी मन लाय।
सुरगों में संशय नहीं, निहचै शिवपुर जाय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री महावीर पूजन

(डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल कृत)

(स्थापना)

जो मोह माया मान मत्सर, मदन मर्दन वीर हैं।
जो विपुल विघ्नों बीच में भी, ध्यान धारण धीर हैं।।
जो तरण-तारण भव-निवारण, भव-जलधि के तीर हैं।
वे वन्दनीय जिनेश, तीर्थंकर स्वयं महावीर हैं।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

जिनके गुणों का स्तवन पावन करन अम्लान है।
मल-हरन निर्मल-करन भागीरथी नीर-समान है।।
संतप्त-मानस शान्त हों जिनके गुणों के गान में।
वे वर्धमान महान जिन विचरें हमारे ध्यान में।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

लिपटे रहें विषधर तदपि-चन्दन विटप निर्विष रहें।
त्यों शान्त शीतल ही रहो रिपु विघन कितने ही करें।।सन्तप्त.।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख-ज्ञान-दर्शन-वीर जिन अक्षत समान अखंड हैं।
हैं शान्त यद्यपि तदपि जो दिनकर समान प्रचण्ड हैं।।सन्तप्त.।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिभुवनजयी अविजित कुसुम-सर सुभट मारन सूर हैं।
पर-गन्ध से विरहित तदपि निज-गन्ध से भरपूर हैं।।सन्तप्त.।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

यदि भूख हो तो विविध व्यंजन मिष्ट इष्ट प्रतीत हों।
तुम क्षुधा-बाधा रहित जिन! क्यों तुम्हें उनसे प्रीत हो?।।सन्तप्त.।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

युगपद् विशद् सकलार्थ झलकें नित्य केवलज्ञान में।
त्रैलोक्य-दीपक वीर-जिन दीपक चढ़ाऊँ क्या तुम्हें।।सन्तप्त.।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो कर्म ईंधन दहन पावक पुंज पवन समान हैं।
जो हैं अमेय प्रमेय पूरण ज्ञेय ज्ञाता ज्ञान हैं।।सन्तप्त.।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सारा जगत फल भोगता नित पुण्य एवं पाप का।
सब त्याग समरस निरत जिनवर सफल जीवन आपका।।सन्तप्त.।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

इस अर्घ्य का क्या मूल्य है अनर्घ्य पद के सामने।
उस परम-पद को पा लिया हे पतितपावन! आपने।।सन्तप्त.।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(सोरठा)

सित छठवीं आषाढ़, माँ त्रिशला के गर्भ में।
अन्तिम गर्भावास, यही जान प्रणमूँ प्रभो।।

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरस दिन सित चैत, अन्तिम जन्म लियो प्रभू।
नृप सिद्धार्थ निकेत, इन्द्र आय उत्सव कियो।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशमी मगसिर कृष्ण, वर्धमान दीक्षा धरी।
कर्म कालिमा नष्ट, करने आत्मरथी बने।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सित दशमी बैसाख, पायो केवलज्ञान जिन।
अष्ट द्रव्यमय अर्घ्य, प्रभुपद पूजा करें हम।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक मावस श्याम, पायो प्रभु निर्वाण तुम।
पावा तीरथ-धाम, दीपावली मनायँ हम।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्ण-अमावस्यायां मोक्षमंगलमंडिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

यद्यपि युद्ध नहीं कियो, नाहिं रखे असि-तीर।
परम अहिंसक आचरण, तदपि बने महावीर।।

(पद्धरि)

हे मोह-महादलदलन वीर, दुद्धर-तप संयम धरण धीर।
तुम हो अनन्त आनन्दकन्द, तुम रहित सर्व जग दंद-फंद।।
अघकरन करन-मन-हरन-हार, सुखकरन हरन भवदुख अपार।
सिद्धार्थ तनय तनरहित देव, सुर-नर-किन्नर सब करत सेव।।

मतिज्ञान रहित सन्मति जिनेश, तुम राग-द्वेष जीते अशेष।
शुभ-अशुभ राग की आग त्याग, हो गये स्वयं तुम वीतराग।।
षट् द्रव्य और उनके विशेष, तुम जानत हो प्रभुवर अशेष।
सर्वज्ञ-वीतरागी जिनेश, जो तुम को पहचाने विशेष।।

वे पहचानें अपना स्वभाव, वे करें मोह-रिपु का अभाव।
वे प्रकट करें निज-पर विवेक, वे ध्यावें निज शुद्धात्म एक।।
निज आतम में ही रहें लीन, चारित्र-मोह को करें क्षीण।
उनका हो जाये क्षीण राग, वे भी हो जायें वीतराग।।

जो हुए आज तक अरीहंत, सबने अपनाया यही पंथ।
उपदेश दिया इस ही प्रकार, हो सबको मेरा नमस्कार।।
जो तुमको नहिं जाने जिनेश, वे पायें भव-भव-भ्रमण क्लेश।
वे माँगें तुमसे धन-समाज, वैभव पुत्रादिक राज-काज।।

जिनको तुम त्यागे तुच्छ जान, वे उन्हें मानते हैं महान।
उनमें ही निशदिन रहें लीन, वे पुण्य-पाप में ही प्रवीन।।
प्रभु पुण्य-पाप से पार आप, बिन पहिचाने पायें संताप।
संतापहरण सुखकरण सार, शुद्धात्मस्वरूपी समयसार।।

तुम समयसार हम समयसार, सम्पूर्ण आत्मा समयसार।
जो पहचानें अपना स्वरूप, वे हो जायें परमात्मरूप।।
उनको ना कोई रहे चाह, वे अपना लेवें मोक्ष राह।
वे करें आत्मा को प्रसिद्ध, वे अल्पकाल में होंय सिद्ध।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

भूतकाल प्रभु आपका, वह मेरा वर्तमान।
वर्तमान जो आपका, वह भविष्य मम जान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री बाहुबली जिनपूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(हरिगीतिका)

हे बाहुबलि! अद्भुत अलौकिक, ध्यानमुद्रा राजती।
प्रत्यक्ष दिखती आत्मप्रभुता, शीलमहिमा जागती।
तुम भक्तिवश वाचाल हो, गुणगान प्रभुवर मैं करूँ।
निरपेक्ष हो पर से सहज, पूजूँ स्वपद दृष्टि धरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छन्द–चामर : तर्ज – पार्श्वनाथ देव सेव...)

स्वयंसिद्ध सुख निधान आत्म–दृष्टि लाय के,
जन्म–मरण नाशि हों मोह को नशायि के।
बाहुबलि जिनेन्द्र भक्ति से करूँ सु अर्चना,
तृप्त स्वयं में ही रहूँ अन्य हो विकल्प ना।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पना, अनिष्ट–इष्ट की तजूँ अज्ञानमय,
परिणति प्रवाहरूप होय शान्त ज्ञानमय।।
बाहुबलि जिनेन्द्र भक्ति से करूँ सु अर्चना,
तृप्त स्वयं में ही रहूँ अन्य हो विकल्प ना।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

पराभिमान त्याग के, सु भेदज्ञान भाय के,
लहूँ विभव सु अक्षयं, निजात्म में रमाय के।।बाहुबलि...।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

छोड़ भोग रोग सम सु ब्रह्मरूप ध्याऊँगा,
काम हो समूल नष्ट सुख–अनंत पाऊँगा।।
बाहुबलि जिनेन्द्र भक्ति से करूँ सु अर्चना,
तृप्त स्वयं में ही रहूँ अन्य हो विकल्प ना।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तोषसुधा पान करूँ आशा तृष्णा त्याग के,
मग्न स्वयं में ही रहूँ चित्स्वरूप भाय के।।बाहुबलि...।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतना प्रकाश में चित् स्वरूप अनुभवूँ,
पाऊँगा कैवल्यज्योति कर्म घातिया दलूँ।।बाहुबलि...।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मध्यान अग्नि में विभाव सर्व जारिहों,
देव आपके समान सिद्ध रूप धारि हों।।बाहुबलि...।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्र चक्रवर्ति के भी पद अपद नहीं चहूँ,
त्रिकाल मुक्त पद अराध मुक्तपद लहूँ लहूँ।।बाहुबलि...।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अनर्घ्य प्रभुता आपकी सु आप में निहारिके,
नाथ भाव माहिं मैं, अनर्घ्य अर्घ्य धारिके।।बाहुबलि...।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

मोहजयी इन्द्रियजयी, कर्मजयी जिनराज।
भावसहित गुण गावहूँ, भाव विशुद्धि काज।।

(जोगीरासा)

अहो! बाहुबलि स्वामी पाऊँ, सहज आत्मबल ऐसा।
निर्मम होकर साधूँ निजपद, नाथ आप ही जैसा।।
धन्य सुनन्दा के नन्दन प्रभु, स्वाभिमान उर धारा।
चक्री को नहिं शीश झुकाया, यद्यपि अग्रज प्यारा।।

कर्मोदय की अद्भुत लीला, युद्ध प्रसंग पसारा।
युद्ध क्षेत्र में ही विरक्त हो, तुम वैराग्य विचारा।।
कामदेव होकर भी प्रभु, निष्काम तत्त्व आराधा।
प्रचुर विभव, रमणीय भोग भी, कर न सके कुछ बाधा।।

विस्मय से सब रहे देखते, क्षमा भाव उर धारे।
जिनदीक्षा ले शिवपद पाने, वन में आप पधारे।।
वस्त्राभूषण त्यागे लख निस्सार, हुए अविकारी।
केशलोंच कर आत्म-मग्न हो, सहज साधुव्रत धारी।।

हुए आत्म-योगीश्वर अद्भुत, आसन अचल लगाया।
नहिं आहार-विहार सम्बन्धी, कुछ विकल्प उपजाया।।
चरणों में बन गई बाँमि, चढ़ गई सु तन पर बेलें।
तदपि मुनीश्वर आनन्दित हो, मुक्तिमार्ग में खेलें।।

नित्य मुक्त निर्ग्रन्थ ज्ञान-आनन्दमयी शुद्धातम।
अखिल विश्व में ध्येय एक ही, निज शाश्वत परमातम।
निजानन्द ही भोग नित्य, अविनाशी वैभव अपना।
सारभूत है, व्यर्थ ही मोही, देखे झूठा सपना।।

यों ही चिन्तन चले हृदय में, आप वर्तते ज्ञाता।
क्षण-क्षण बढ़ती भाव-विशुद्धि, उपशमरस छलकाता।।
एक वर्ष छद्मस्थ रहे प्रभु, हुआ न श्रेणी रोहण।
चक्री शीश नवाया तत्क्षण, हुआ सहज आरोहण।।

नष्ट हुआ अवशेष राग भी, केवल-लक्ष्मी पाई।
अहो! अलौकिक प्रभुता निज की, सब जग को दरशाई।।

हुए अयोगी अल्प समय में, शेष कर्म विनशाये।
ऋषभदेव से पहले ही प्रभु, सिद्ध शिला तिष्ठाये।।

आप समान आत्मदृष्टि धर, हम अपना पद पावें।
भाव नमन कर प्रभु चरणों में, आवागमन मिटावें।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(सोरठा)

बाहुबली भगवान, दर्शाया जग स्वार्थमय।
जागे आतमज्ञान, शिवानन्द मैं भी लहूँ।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री पंच बालयति जिनपूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(मत्तसवैया)

हे ब्रह्मचर्य के धनी ब्रह्ममय, परमपूज्य त्रिभुवन स्वामी।
हे पंचबालयति तीर्थंकर, तुम-सम परिणति हो जगनामी।।
आनन्दमयी निज परमब्रह्म, मैंने प्रत्यक्ष निहारा है।
उल्लास हृदय में छाया प्रभु, जब मैंने तुम्हें चितारा है।।
ज्यों दर्पण सन्मुख हो जग में, मोही तन-रूप सजाते हैं।
त्यों तुम पूजन कर हे विभुवर, हम अपना भाव बढ़ाते हैं।।

(सोरठा)

वासुपूज्य, मल्लि, नेमि, पार्श्व प्रभु, महावीर जिन।
नमत होय सुख चैन, द्रव्य-दृष्टि धर पूजहूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर-पंचबालयति-तीर्थंकरा:! अत्र अवतरन्तु अवतरन्तु संवौषट् इत्याह्वानम्। अत्र तिष्ठन्तु तिष्ठन्तु ठ: ठ: स्थापनम्। अत्र मम सन्निहिताः भवन्तु भवन्तु वषट् सन्निधिकरणम्।

निज में जुड़ती है दृष्टि जभी, समता का सहज प्रवाह बहे।
आनन्द अपूर्व प्रकट होवे, तब जन्म-जरा-मृत नहीं रहे।।
है जन्म-जरा-मृत रहित प्रभू! मम आज दृष्टि में आया है।
समरस से तृप्त रहूँ विभुवर, मैंने जल यहाँ चढ़ाया है।।
अतिशय है ब्रह्म-भाव मेरा, कामादिक दुर्मति भागी है।
प्रभु ब्रह्मचर्य परमानन्द पा, अतिशय प्रतीति उर जागी है।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं नि.।

निज परम शान्ति शीतलता से, आपूर्ण सरोवर मम प्रभु है।
भवरहित जहाँ भव-ताप नहीं, सर्वोत्कृष्ट सुखमय विभु है।।
जब ताप नहीं तब चन्दन का भी, काम नहीं कुछ शेष रहा।
चन्दन प्रभु यहीं चढ़ाया है, निष्पाप-ताप निजरूप गहा।।अतिशय।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

छिलके से ढका हुआ अक्षत, छिलका हटते ही प्रकट हुआ।
पर्याय दृष्टि हटते ही त्यों, मम अक्षय प्रभु प्रत्यक्ष हुआ।।
निज अक्षय प्रभु के आश्रय से ही, राग-द्वेष का होवे क्षय।
ये अक्षत यहाँ चढ़ाये हैं, मैंने पाया है पद अक्षय।।अतिशय।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम पूर्ण निज वैभव का, मैं तृप्त हो गया दर्शन कर।
संकल्प-विकल्प प्रवेश न हों, रहते सीमा से ही बाहर।।
अद्भुत रहस्य यह पाया है, इच्छाओं की उत्पत्ति नहीं।
बस निजस्वभाव में मग्न रहूँ, ये पुष्प चढ़ाता आज यहीं।।अतिशय।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्य: कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

समरस अमृत का सागर है, क्षुत्-पीड़ा का अस्तित्व नहीं।
त्यागोपादान शून्य पर से, कुछ ग्रहण-त्याग कर्तृत्व नहीं।।
जो निजस्वभाव से च्युत होकर, तन के आश्रय से भूख लगी।
ये नैवेद्य समर्पित यहीं प्रभो! स्वाश्रय से भव की भूख भगी।।अतिशय।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

प्रकाशत्व शक्ति शाश्वत है, सहज प्रकाशित मम स्वभाव।
सब बाह्य प्रकाश अनावश्यक, उसमें नहिं दिखता निजस्वभाव।।
बाहर की दृष्टि छोड़ अहो स्वसन्मुख चिन्मय ज्योति जगे।
ये दीपक यहीं विसर्जित है, अन्तर लौ से तम-मोह भगे।।अतिशय।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

दश-धर्ममयी शाश्वत सुगन्ध चेतन नन्दन में महक रही।
दुर्गन्धित भाव विकारों का, किंचित् भी जहाँ अस्तित्व नहीं।।
यह धूप यहीं प्रभु छोड़ रहा, अब पर से दृष्टि हटाई है।
स्वसन्मुख होकर अब प्रभुसम, स्वधर्म सुरभि शुभ पायी है।।अतिशय।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्म-विध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

प्रभु मुक्त-स्वरूप सहज पाया, आनन्द अपूरव छाया है।
शिवफल की भी वांछा न रही, अन्तर पुरुषार्थ जगाया है।।
ज्ञानी तो फल वांछा त्यागे, पर मूढ़ त्याग का फल चाहे।
फल चढ़ा रहा हूँ हे जिनवर, बस ये विकल्प भी नहिं आये।।अतिशय।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु सर्वविशुद्ध स्वतत्त्व लखा, अब दृष्टि न पल भी हटती है।
होता उपयोग जभी बाहर, एकाग्र भावना जगती है।।
एकाग्र रहे उपयोग सदा, यह ही निश्चय से अर्घ्य कहा।
जिससे अविचल अनर्घ्यपद हो, प्रभु बाह्य अर्घ्य इसलिए तज।।अतिशय।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

वासुपूज्य श्री मल्लिजिन, नेमि पार्श्व महावीर।
बाल ब्रह्मचारी सुजिन, नमत मिटै भव-पीर।।

(पद्धरि)

जय वासुपूज्य देवाधिदेव, मंगलमय मंगलकरन एव।
जय चिदानन्द चिद्रूप सार, धारी निज महिमा निर्विकार।
पूरवभव में तुमने स्वामी, सुन युगमंधर प्रभु की वाणी।
नित आत्मभावना भाई थी, तीर्थंकर प्रकृति बँधाई थी।
तप कर महाशुक्र विमान गये, चय नृप वसुपूज्य के पुत्र भये।
कल्याणक देव मनाये थे, पर निज में आप समाये थे।
भोगों को नहिं स्वीकार किया, दूरहि से प्रभुवर छोड़ दिया।
हो बालयति दीक्षा धारी, प्रकटाया निजपद सुखकारी।

कर रहा अर्चना मल्लिनाथ, भवि दर्शन कर होते सनाथ।
वट वृक्ष विशाल गिरा लख कर, पूरब भव में दीक्षा धरकर।
तीर्थंकर पद का बन्ध किया, अपराजित स्वर्ग प्रयाण किया।
तहँतैं चयकर अवतार लिया, शादी के समय वैराग लिया।
छह दिन छद्मस्थ रहे स्वामी, नव-लब्धि पायीं जगनामी।
भव्यों को शिवपथ दर्शाया, सम्मेदशिखर से शिव पाया।

जय नेमीश्वर महिमा महान, सुन पशु क्रन्दन वैराग्य ठान।
छोड़े पशु अरु राजुल छोड़ी, भवबन्धन की कड़ियाँ तोड़ीं।
जग को अनुपम आदर्श दिया, प्रभु धर्म अहिंसा प्रकट किया।
गिरनार शिखर से शिव पाया, प्रभु चरणों में हम सिर नाया।

जय पार्श्वनाथ तव गुण अपार, गणधर भी पावें नहीं पार।

इक दिवस सभा में विराज रहे, साकेत नरेश की भेंट लिये।
इक दूत वहाँ पर आया था, साकेत विभव दरशाया था।
ऋषभादि प्रभु स्मरण हुआ, वैराग्य हृदय में जाग उठा।
दीक्षा ले निज में मग्न हुए, तब कमठ घोर उपसर्ग किए।
अप्रभावित अचल रहे जिनवर, परमात्मदशा प्रकटी सत्वर।
ऐसी स्थिरता प्रभु पाऊँ, बस परमब्रह्म में रम जाऊँ।

हे महावीर विभु परम धीर, महिमा सागर से भी गंभीर।
शादी प्रसंग जब आया था, प्रभुवर तुमने ठुकराया था।
दीक्षा ले द्वादश वर्ष प्रभो, दुर्धर तप धारा आप विभो।
निज ध्यान अग्नि द्वारा जिनेश, कर्मों को ध्वस्त किया अशेष।
अन्तिम तीर्थंकर अभिरामी, मैं करूँ वन्दना जगनामी।
तव दर्शन करके हे स्वामी, मैंने निज महिमा पहिचानी।
प्रभु प्रबल पराक्रम प्रकटाऊँ, रागादिभाव पर जय पाऊँ।
जो तीर्थ आपने प्रकटाया, वह भी स्वामी मुझको भाया।
कीचड़ लपेट तन धोना क्या, अरु कूद अग्नि में रोना क्या?।
श्रद्धान परम जागा मन में, सुख शांति सदा है अन्तर में।
परमाणु मात्र भी नहीं पर में, मेरा सर्वस्व सदा मुझ में।
उपयोग नहीं पर में भागे, अतिचार नहीं किंचित् लागे।
प्रभुवर! निज में ही रम जाऊँ, निज परम ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम ब्रह्म आनन्दमय, चित् स्वभाव अविकार।
समयसार में लीन हो, होऊँ भव से पार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री नवदेवता पूजन

(कवि श्री राजमलजी पवैया)

(वीरछन्द)

श्री अरहन्त सिद्ध, आचार्योपाध्याय, मुनि, साधु महान।
जिनवाणी, जिनमन्दिर, जिनप्रतिमा, जिनधर्मदेव नव ज्ञान।।
ये नवदेव परम हितकारी, रत्नत्रय के दाता हैं।
विघ्न विनाशक संकटहर्ता, तीन लोक विख्याता हैं।।
जल फलादि वसु द्रव्य सजाकर, हे प्रभु! नित्य करूँ पूजन।
मंगलोत्तम शरण प्राप्त कर, मैं पाऊँ सम्यग्दर्शन।।
आत्मतत्त्व का अवलम्बन ले, पूर्ण अतीन्द्रिय सुख पाऊँ।
नवदेवों की पूजन करके, फिर न लौट भव में आऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवता समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री नवदेवता समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री नवदेवता समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(वीरोदय)

परम भाव जल की धारा से जन्म-मरण का नाश करूँ।
मिथ्यातम का गर्व चूर कर रवि सम्यक्त्व प्रकाश करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

परम भाव चन्दन के बल से भाव आताप का नाश करूँ।
अन्धकार अज्ञान मिटाऊँ सम्यग्ज्ञान प्रकाश करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

परम भाव अक्षत के द्वारा अक्षय पद को प्राप्त करूँ।
मोह क्षोभ से रहित बनूँ मैं सम्यक्चारित्र प्राप्त करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

परम भाव पुष्पों से दुर्धर काम भाव को नाश करूँ।
तप संयम की महाशक्ति से निर्मल आत्मप्रकाश करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परम भाव नैवेद्य प्राप्त कर क्षुधा व्याधि का नाश करूँ।
पंचाचार आचरण करके परम तृप्त शिववास करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम भावमय दिव्य ज्योति से पूर्ण मोह का नाश करूँ।
पाप पुण्य आस्रव विनाश कर केवलज्ञान प्रकाश करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

परम भाव मय शुक्ल ध्यान से अष्ट कर्म का नाश करूँ।
नित्य निरंजन शिव पद पाऊँ सिद्धस्वरूप विकास करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

परम भाव सम्पत्ति प्राप्त कर मोक्ष-भवन में वास करूँ।
रत्नत्रय मुक्तिशिला पर सादि अनन्त निवास करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

परम भाव के अर्घ्य चढ़ाऊँ उर अनर्घ्य पद व्याप्त करूँ।
भेदज्ञान-रवि हृदय जगाकर शाश्वत जीवन प्राप्त करूँ।।
पंच परम परमेष्ठी जिनश्रुत जिनगृह जिनप्रतिमा जिनधर्म।
नवदेवों की पूजन करके मैं बन जाऊँ प्रभु! निष्कर्म।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

नवदेवों को नमन कर, करूँ आत्म-कल्याण।
शाश्वत सुख की प्राप्ति, हित करूँ भेद विज्ञान।।

(वीरोदय)

जय जय पंच परम परमेष्ठी जिनवाणी जिनधर्म महान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा नवदेवों को नित वन्दूँ धर करि ध्यान।।
श्री अरहन्त देव मंगलमय मोक्षमार्ग के नेता हैं।
सकल ज्ञेय के ज्ञाता-द्रष्टा कर्म शिखर के भेत्ता हैं।।

हैं लोकाग्र शिखर पर सुस्थित सिद्धशिला पर सिद्ध अनन्त।
अष्टकर्म रज से विहीन प्रभु सकल सिद्धिदाता भगवन्त।।
हैं छत्तीस गुणों शोभित श्री आचार्य देव भगवन्त।
चार संघ के नायक ऋषिवर करते सबको शान्ति प्रदान।।

ग्यारह अंग पूर्व चौदह के ज्ञाता उपाध्याय गुणवन्त।
जिन आगम का पठन और पाठन करते हैं महिमावन्त।।

अट्ठाईस मूलगुण पालक ऋषि मुनि साधु परम गुणवन्त।
मोक्षमार्ग के पथिक श्रमण करते जीवों को करुणादान।।

स्याद्वादमय द्वादशांग जिनवाणी है जग कल्याणी।
जो भी शरण प्राप्त करता है हो जाता केवलज्ञानी।।
जिनमन्दिर जिन समवशरण-सम इसकी महिमा अपरम्पार।
गन्ध-कुटी में नाथ विराजे हैं अरहन्त देव साकार।।

जिनप्रतिमा अरहन्तों की नासाग्र दृष्टि निज ध्यानमयी।
जिन दर्शन से निज दर्शन हो जाता तत्क्षण ज्ञानमयी।।
श्री जिनधर्म महा मंगलमय जीव मात्र को सुखदाता।
इसकी छाया में जो आता हो जाता दृष्टा ज्ञाता।।

ये नव देव परम उपकारी वीतरागता के सागर।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित से भर देते सबकी गागर।।
मुझको भी रत्नत्रय निधि दो मैं कर्मों का भार हरूँ।
क्षीणमोह जितराग जितेन्द्रिय हो भव-सागर पार करूँ।।

सदा-सदा नव देव शरण पा मैं अपना कल्याण करूँ।
जब तक सिद्ध स्वपद ना पाऊँ हे प्रभु! पूजन ध्यान करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री नवदेवताभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मंगलोत्तम शरण हैं नव देवता महान।
भावपूर्ण जिनभक्ति से होता दुख अवसान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

संस्कार बिना सुविधाएँ पतन का कारण हैं।

श्री वर्तमान चौबीसी पूजन–1

(कविवर वृन्दावनदासजी कृत)

वृषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पदम सुपार्श्व जिनराय।
चन्द पुहुप शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज्य पूजित सुरराय।।
विमल अनन्त धर्म जस–उज्ज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वर्धमान पद पुष्प चढ़ाय।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

मुनि–मन–सम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गन्ध भरा।
भरि कनक–कटोरी धीर, दीनी धार धरा।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द–कन्द सही।
पद जजत हरत भव–फन्द, पावत मोक्ष–मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो जन्म–जरा–मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

गोशीर कपूर मिलाय, केशर–रंग भरी।
जिन–चरनन देत चढ़ाय, भव–आताप हरी।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द–कन्द सही।
पद जजत हरत भव–फन्द, पावत मोक्ष–मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्दुल सित सोम–समान, सुन्दर अनियारे।
मुक्ता फल की उनमान, पुंज धरों प्यारे।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द–कन्द सही।
पद जजत हरत भव–फन्द, पावत मोक्ष–मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

वर–कंज कदम्ब कुरण्ड, सुमन सुगन्ध भरे।
जिन–अग्र धरों गुन–मण्ड, काम–कलंक हरे।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द–कन्द सही।
पद जजत हरत भव–फन्द, पावत मोक्ष–मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

मन–मोदन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने।
रस–पूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द–कन्द सही।
पद जजत हरत भव–फन्द, पावत मोक्ष–मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

तम–खण्डन दीप जगाय, धारों तुम आगै।
सब तिमिर मोहक्षय जाय, ज्ञान–कला जागै।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द–कन्द सही।
पद जजत हरत भव–फन्द, पावत मोक्ष–मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

दशगन्ध हुताशन माहिं, हे प्रभु! खेवत हों।
मिस–धूम करम जर जाहिं, तुम पद सेवत हों।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द–कन्द सही।
पद जजत हरत भव–फन्द, पावत मोक्ष–मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि पक्व सुरस फलसार, सब ऋतु के ल्यायो।
देखत दृग–मनको प्यार, पूजत सुख पायो।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द–कन्द सही।
पद जजत हरत भव–फन्द, पावत मोक्ष–मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ्य करों।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द-कन्द सही।
पद जजत हरत भव-फन्द, पावत मोक्ष-मही।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

श्रीमत तीरथनाथ-पद, माथ नाय हित हेत।
गाऊँ गुणमाला अबै, अजर अमर पद देत।।

(त्रिभंगी)

जय भवतम भंजन, जन-मन-कंजन, रंजन दिन-मनि, स्वच्छ करा।
शिव-मग-परकाशक, अरिगण-नाशक, चौबीसों जिनराज वरा।।

(पद्धरि)

जय ऋषभदेव रिषि-गन नमन्त, जय अजित जीत वसु-अरि तुरन्त।
जय सम्भव भव-भय करत चूर, जय अभिनन्दन आनन्द-पूर।।
जय सुमति सुमति-दायक दयाल, जय पद्म पद्म द्युति तनरसाल।
जय जय सुपार्श्व भव-पास नाश, जय चन्द, चन्द-तनद्युति प्रकाश।।
जय पुष्पदन्त द्युति-दन्त-सेत, जय शीतल शीतल-गुननिकेत।
जय श्रेयनाथ नुत-सहसभुज्ज, जय वासव-पूजित वासुपुज्ज।।
जय विमल विमल-पद देनहार, जय जय अनन्त गुन-गण अपार।
जय धर्म धर्म शिव-शर्म देत, जय शान्ति शान्ति पुष्टी करेत।।
जय कुन्थु कुन्थुवादिक रखेय, जय अरजिन वसु-अरि छय करेय।
जय मल्लि मल्ल हत मोहमल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रत-शल्ल-दल्ल।।
जय नमि नित वासव-नुत सपेम, जय नेमिनाथ वृष-चक्र नेम।
जय पारसनाथ अनाथ-नाथ, जय वर्धमान शिव-नगर साथ।।

(त्रिभंगी)

चौबीस जिनन्दा, आनन्द-कन्दा, पाप-निकन्दा, सुखकारी।
तिन पद-जुग-चन्दा, उदय अमन्दा, वासव-वन्दा, हितकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

भुक्ति-मुक्ति दातार, चौबीसों जिनराज-वर।
तिन-पद मन-वच-धार, जो पूजै सो शिव लहै।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री वर्तमान चौबीसी पूजन-2

(श्री कुमरेशजी कृत)

भव-भोगों से होकर विरक्त, प्रभु हुए स्वयं तुम आत्म-मगन।
प्रकटा तब केवलज्ञान सूर्य, फिर रहे नहीं विधि के बन्धन।।
तीर्थंकर हो जग त्राण किया, तुमने पाया नव अभिनन्दन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, शत शत प्रमाण शत शत वंदन।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

भव-भव में भटक रहा भगवन जीवन भारी दुखदाई है।
कर दर्शन नाथ तुम्हारा यह तुझको मेरी सुधि आई है।।
मिट जाये मेरा जन्म मरण जल से करता हूँ मैं अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवताप कहूँ क्या प्रभु तुमसे मुझसे न सहन अब होता है।
इसलिये शरण में आया हूँ तुम पूजन भव दु:ख खोता है।।
जग का सन्ताप मिटे मेरा चन्दन से करता हूँ अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय न यहाँ कुछ वसुधा पर जो कुछ है सब क्षय हो जाता।
इस दुख से बहुत व्यथित व्याकुल मैं त्राण नहीं किंचित् पाता।।
अक्षय पद मैं अब पा जाऊँ अक्षत से करता हूँ अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

यह काम बड़ा बलशाली है तन मन को आकुल कर देता।
विषयों के वश में कर प्राणी उसकी बुद्धि को हर लेता।।
तुम कामजयी हो इसलिये पुष्पों से करता हूँ अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

है क्षुधा जगत में महारोग जिसका न अन्त हो पाया है।
युग-युग से इसके वश होकर मैंने अखाद्य सब खाया है।।
तुम इस पर विजयी हुए नाथ नैवेद्य चढ़ा करता अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुछ सरल बात है नहीं मोह-तम प्राणों से यह कढ़ जाये।
तुम-सा वैरागी बनकर ही अपने स्वरूप को पा जाये।।

तुम वीतराग हो निर्मोही मैं दीपक से करता अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह कर्मों की माया सारी भव-भव में इसने भरमाया।
कुछ शुभ संयोग मिला मुझको मैं शरण तुम्हारी हूँ आया।।
तुमने कर्मों को जीत लिया मैं धूप चढ़ा करता अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

जीवन की उलझन ने मुझको उलझन में इतना उलझाया।
सुलझा न सका उसको अबतक कब शिवफल तुम-सा प्रभु पाया।।
तुम मुक्त हुए इस उलझन से फल से करता हूँ मैं अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

मिट जावे मेरा जन्म मरण संताप न हो अक्षय पद हो।
निष्काम रहूँ न विभुक्षा होना मोह न यह विधि भयप्रद हो।।
बन जाऊँ जीवन मुक्त नाथ यह अर्घ्य चढ़ा करता अर्चन।
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिछन।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(वीरछन्द)

मैं उर में लेकर भक्ति भाव से प्रभुवर करता हूँ प्रणाम।
मिथ्यातम से मैं दूर रहूँ बन जाऊँ सम्यक् ज्योति धाम।।
तुम दर्शन पूजन से भगवान हो जाये निज दर्शन ललाम।
तुम-सा बन जाऊँ इसीलिये करता हूँ मैं सादर प्रणाम।।

हे ऋषभनाथ! हे आदिनाथ! मुझ पर अब तो करुणा कर दो।
प्रभु अजितनाथ! मेरे उर का चिर-संचित सब संशय हर दो।।

संभव जिन! मुझ पर हो दयालु सब काम असंभव बन जावें।
भज अभिनंदन प्रभु! को निशि-दिन नव-जीवन अभिनन्दन पावें।।
श्री सुमति! सुमति मेरी कर दो मिथ्या मति हो न कभी मेरी।
भव-पार करो प्रभु पद्मप्रभ! अब और न हो पावे देरी।।
भगवन सुपार्श्व! मेरे भव के सब पाप नाश कर दो सत्वर।
चन्द्रप्रभ! मेरे इस उर का सब शाप ताप हर लो अघ-हर।।
श्री सुविधिनाथ! दो सुविधि बता मेरे टूटें सब विधि बन्धन।
सन्तप्त हृदय शीतल कर दो शीतल जिन! मेरा सुन क्रन्दन।।
हे श्रेयनाथ! दो मुझे श्रेय भव-बाधा का कर दूँ भंजन।
मेरे उर के दृग खुल जावें हे वासुपूज्य! दो वह अंजन।।
श्री विमल! विमल पद दो मुझको युग-युग से भूला भटका हूँ।
कर दो अनंत! सब कष्ट अंत भव-भव में आ आ अटका हूँ।।
पथ धर्मनाथ! अब बतला दो शाश्वत सुख मुझको मिल जाये।
प्रभु शान्तिनाथ! मेरे उर में आ शान्ति निराकुल छा जाये।।
हे कुन्थनाथ! होकर कृपाल मुझ पर भी तनिक कृपा कर दो।
श्री अरहनाथ! अब तो मेरे वसु अरि का बल विक्रम हर दो।।
मेरे मन में यह मोह मल्ल हे मल्लिनाथ! अब दूर करो।
मुनिसुव्रतनाथ! सुनो विनती तृष्णा मेरी चकचूर करो।।
नमिनाथ! तुम्हारे चरणों में मैं नमन कर रहा दुखियारा।
हे नेमिनाथ! अब बाह गहो, उद्धार करो मैं हूँ हारा।।
तुम नाथ अनाथों के अपने हो पारसनाथ! सुनो मेरी।
शिव-धाम मुझे दो वर्धमान! मेटो मेरी भव-भव फेरी।।
'कुमरेश' तुम्हारा दास प्रभु अब तो मुझ पर करुणा कर दो।
बन जाये यह जीवन सुखमय मुझको प्रभुवर ऐसा वर दो।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विदेह क्षेत्र स्थित विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन-1

(कविवर द्यानतरायजी कृत)

(दोहा)

द्वीप अढ़ाई मेरु पन, अरु तीर्थंकर बीस।
तिन सबकी पूजा करूँ, मन-वच-तन धरि सीस।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकराः! अत्र अवतरन्तु अवतरन्तु, संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकराः! अत्र तिष्ठन्तु तिष्ठन्तु ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकराः। अत्र मम सन्निहिताः भवन्तु भवन्तु वषट्।

इन्द्र-फणीन्द्र-नरेन्द्र-वंद्य पद निर्मल धारी।
शोभनीक संसार सार गुण हैं अविकारी।।
क्षीरोदधि-सम नीर सों (हो) पूजों तृषा निवार।
सीमन्धर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार।।
श्री जिनराज हो भव-तारण-तरण जिहाज।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर-युगमन्धर-बाहु-सुबाहु-संजातक-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-भद्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरसेन-महाभद्र-देवयशोऽजितवीर्येति विद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक के जीव पाप-आताप सताये।
तिनकों साता दाता शीतल वचन सुहाये।।
बावन चंदन सों जजूँ (हो) भ्रमन-तपत निरवार।। सीमं.।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

यह संसार अपार महासागर जिनस्वामी।
तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जगनामी।।
तंदुल अमल सुगंध सों (हों) पूजों तुम गुणसार।। सीमं.।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

भविक-सरोज-विकास निंद्य-तम हर रवि-से हो।
जति-श्रावक आचार कथन को तुम्हीं बड़े हो।।
फूल सुवास अनेक सों (हो) पूजों मदन-प्रहार।
सीमन्धर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार।।
श्रीजिनराज हो भव-तारण-तरण जिहाज।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

काम-नाग विषधाम नाश को गरुड़ कहे हो।
छुधा महा दव-ज्वाल तास को मेघ लहे हो।।
नेवज बहुघृत मिष्ट सों (हों) पूजों भूखविडार।। सीमं.।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

उद्यम होन न देत सर्व जग-माहिं भर्यो है।
मोह-महातम घोर नाश परकाश कर्यो है।।
पूजों दीप प्रकाश सों (हो) ज्ञान-ज्योति करतार।। सीमं.।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

कर्म आठ सब काठ भार विस्तार निहारा।
ध्यान अगनि कर प्रकट सर्व कीनो निरवारा।।
धूप अनूपम खेवतें (हो) दुःख जलैं निरधार।। सीमं.।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

मिथ्यावादी दुष्ट लोभऽहंकार भरे हैं।
सबको छिन में जीत जैन के मेरु खड़े हैं।।
फल अति उत्तम सों जजों (हों) वांछित फलदातार।।सीमं.।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

जल-फल आठों दर्व अरघ कर प्रीति धरी है।
गणधर-इन्द्रनि हू तैं थुति पूरी न करी है।।
'द्यानत' सेवक जानके (हो) जग तैं लेहु निकार।। सीमं.।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

ज्ञान-सुधाकर चन्द, भविक-खेत हित मेघ हो।
भ्रम-तम भान अमन्द, तीर्थंकर बीसों नमों।।

(चौपाई)

सीमन्धर सीमन्धर स्वामी, जुगमन्धर जुगमन्धर नामी।
बाहु बाहु जिन जग-जन तारे, करम सुबाहु बाहुबल दारे।।
जात सुजात केवलज्ञानं, स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं।
ऋषभानन ऋषि भानन दोषं, अनंतवीरज वीरज कोषं।।
सौरीप्रभ सौरी-गुणमालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं।
वज्रधार भव-गिरि वज्जर हैं, चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं।।
भद्रबाहु भद्रनि के करता, श्री भुजंग भुजंगम हरता।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं, नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं।।
वीरसेन वीरं जग जानैं, महाभद्र महाभद्र बखानै।।
नमों जसोधर जसधरकारी, नमों अजित वीरज बलधारी।।
धनुष पाँच-सै काय विराजै, आयु कोटि पूर्व सब छाजै।
समवशरण शोभित जिनराजा, भवजल-तारन-तरन जिहाजा।।
सम्यक् रत्नत्रय-निधि दानी, लोकालोक-प्रकाशक ज्ञानी।
शत-इन्द्रनि करि वंदित सोहैं, सुन-नर-पशु सबके मन मोहैं।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि.।

(दोहा)

तुमको पूजें वंदना, करैं धन्य नर सोय।
'द्यानत' सरधा मन धरैं, सो भी धर्मी होय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन–2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(अडिल्ल)

ढाई द्वीप में पाँच विदेह हैं शाश्वते।
तीर्थंकर जहँ बीस सदा ही राजते।।
भक्ति भाव से करूँ सहज आराधना।
निज पद पाऊँ नाथ यही है भावना।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(चौपाई)

स्वयं सिद्ध शुद्धातम ध्याय, जन्म-जरा-मृत दोष नशाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धर-युगमन्धर-बाहु-सुबाहु-संजातक-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य-सूरिप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चंद्रानन-भद्रबाहु भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र देवयशोऽजितवीर्येतिविद्यमान विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्म जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधादिक दुर्भाव नशाय, क्षमाधार भव ताप मिटाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यः भवाताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय सुख क्षत विक्षत रूप, त्याग लहूँ आनन्द अनूप।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

त्यागूँ प्रभु अब्रह्म दुखदाय, निश्चय परम शील प्रकटाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा वेदनीय उपशम होय, पाऊँ निजानन्द रस सोय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह महातम तुरत नशाय, आत्मज्ञान की ज्योति जगाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जलें कर्म भव दुख विनशाय, निर्मल आत्मध्यान प्रकटाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखमय सम्यक्चारित्र धार, महा मोक्षफल पाऊँ सार।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज भावमय अर्घ्य चढ़ाय, निज अविचल अनर्घ्यपद पाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं श्री विदेहक्षेत्रेषु विद्यमानसीमन्धरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

अहो! विदेहीनाथ के, गुण गाऊँ सुखकार।
देह रहित शुद्धात्मा, ध्याऊँ नित अविकार।।

(वीरछन्द)

श्री सीमंधर श्री युगमंधर श्री, बाहु सुबाहु सु संजातक।
स्वयंप्रभ ऋषभनान वन्दूँ, अनन्तवीर्य नाशें पातक।।
श्री सूर्यप्रभ विशालकीर्ति जी, जजूँ वज्रधर चन्द्रानन।
भद्रबाहु अरु श्री भुजंगम, ईश्वर जिन भव दुख भानन।।
नेमिप्रभ श्री वीरसेन जिन, महाभद्र प्रभु मंगलकार।
श्री देवयश अजितवीर्य को, नमूँ नित्य त्रय योग सँभार।।
बीस तीर्थंकर सदा विदेहों, में शोभें आनन्दकारी।
धनुष पाँच सौ काय विराजे, समवसरण महिमा न्यारी।।
सिंहासन पर अन्तरीक्ष प्रभु, तिष्ठे अपने ही आधार।
चौंसठ चमर छत्र त्रय शोभित, भामण्डल द्युति लसे अपार।।
मोह विजय को सूचित करती, दुंदुभि धुनि संदेश सुनाय।
आओ आओ अहो! जगत जन, सुनो दिव्यध्वनि शिवसुखदाय।।
धर्म तीर्थ तहँ शाश्वत वर्ते, महिमा मुझसे कही न जाय।
धन्य-धन्य जो प्रत्यक्ष देखें, सुनें दिव्यध्वनि बोधि लहाय।।
हो निर्ग्रन्थ रमें निज माहीं, परमातम पद पावें सार।
भवसहित उनका यश गाऊँ, सहज नमन होवे अविकार।।

(घत्ता)

जय जिन गुण सारं मंगलकारं, गाऊँ अति ही हर्षाऊँ।
निज में रम जाऊँ, कर्म नशाऊँ, ऐसे ही गुण प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमान विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

जो जिन पूजें भाव से, धरें नित्य ही ध्यान।
अल्पकाल में वे लहें, अविनाशी निर्वान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री तीस चौबीसी पूजन

(कवि भानमलजी कृत)

(अडिल्ल)

पाँच भरत शुभ क्षेत्र पाँच ऐरावते,
आगत नागत वर्तमान जिन शास्वते।
सो चौबीसी तीस जजौं मन लायके
आह्वानन विधि करूँ बार त्रय गायके।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरा:! अत्र अवतरन्तु अवतरन्तु संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरा:! अत्र तिष्ठन्तु तिष्ठन्तु ठ: ठ: स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरा:! अत्र मम सन्निहिताः भवन्तु भवन्तु वषट् सन्निधिकरणम्।

(रेखता)

नीर दधि क्षीर-सम लायो, कनक के भृंग भरवायो।
जन्म-मृतु रोग नशवायो, अबै तुम चर्ण ढिग आयो।।
द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभिजुत चन्दनं ल्यायो, संग करपूर घसवायो।
धार तुम चरण ढरवायो, भव-आताप नशवायो।।
द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र-सम तंदुलं सारं, किरन मुक्ता जु उनहारं।
पुंज तुम चरणढिग धारं, अखैपद काज के कारं।।
द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प शुभ गंधजुत सोहे, सुगन्धित तास मन मोहे।
जजत तुम मदन छय होवे, मुक्तिपुर पलक में जोवे।।
द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस व्यंजन लिया ताजा, तुरत बनवाइया खाजा।
चरन तुम पूज जिनराजा, क्षुधा-दुख पलक में भाजा।।
द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नेवैद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप-तम नाशकारी है, सरस शुभ ज्योति धारी है।
होय दश दिश उजारी है, धूम्र मिस पाप जारी है।।

द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगन्धित धूप दश अंगी, जराऊँ अग्नि के संगी।
करम की सैन्य चतुरंगी, जजत तुव हो गई भंगी।।
द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मिष्ट उत्कृष्ट फल ल्यायो, अष्ट अरि दुष्ट नशवायो।
श्री जिन भेंट करवायो, कार्य मनवांछितो पायो।।
द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य आठों जु लीना है, अर्घ्य कर में नवीना है।
पूजतैं पाप छीना है, 'भानमल' जोड़ि कीना है।।
द्वीप ढाई सरस राजैं, क्षेत्र दश ता विषैं छाजैं।
सात शत बीस जिनराजैं, पूजते पाप सब भाजैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ पंचमेरुसम्बन्धि भूतानागत-वर्तमान सम्बन्धि सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(प्रत्येक अर्घ्य)

(अडिल्ल)

आदि सुदर्शन मेरु तनी दक्षिण दिशा,
भरतक्षेत्र सुखदाय सरस सुन्दर बसा।

तिहँ चौबीसी तीन तने जिनरायजी,
बहतरि जिन सर्वज्ञ नमों सिरनायजी।।1।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरु की दक्षिणदिशि भरतक्षेत्रसम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ताहि मेरु उत्तर ऐरावत सोहनो,
आगत नागत वर्तमान मनमोहनो।
तिहँ चौबीसी तीन तने जिनरायजी,
बहतरि जिन सर्वज्ञ नमों सिरनायजी।।2।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरु की उत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्रसम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(कुसुमलता)

खंड धातकी विजयमेरु के, दक्षिण दिशा भरत शुभ जान।
तहँ चौबीसी तीन विराजैं, आगत नागत अरु वर्तमान।।
तिनके चरन–कमल को निशदिन अर्घ चढ़ाय करूँ उर ध्यान।
इस संसार भ्रमणतैं तारो, अहो! जिनेश्वर करुणावान।।3।।

ॐ ह्रीं श्री धातकीखण्ड पूर्व दिशा में स्थित विजयमेरु की दक्षिणदिशि भरतक्षेत्रसम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इसी द्वीप की प्रथम शिखर के, उत्तर ऐरावत जु महान।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहतरि सदा सासते जान।।
तिनके चरन–कमल को निशदिन अर्घ चढ़ाय करूँ उर ध्यान।
इस संसार भ्रमणतैं तारो, अहो! जिनेश्वर करुणावान।।4।।

ॐ ह्रीं श्री धातकीखण्ड पूर्व दिशा में स्थित विजयमेरु की उत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्र–सम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चौपाई)

खंड धातु गिर अचल सुमेरु, दक्षिण तास भरत बहु घेरु।
तामें चौबीसी त्रय जान, आगत नागत अरु वर्तमान।।5।।

ॐ ह्रीं श्री धातकीखण्ड पश्चिम दिशा में स्थित अचलमेरु की दक्षिणदिशि भरतक्षेत्रसम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल मेरु उत्तर दिश जाय, ऐरावत शुभ क्षेत्र बताय।
तामें चौबीसी त्रय जान, आगत नागत अरु वर्तमान।।6।।

ॐ ह्रीं श्री धातकीखंड पूर्व दिशा में स्थित अचलमेरु की उत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सुन्दरी)

द्वीप पुष्कर की पूरब दिशा, मंदर मेरु की दक्षिण भरत–सा।
ता विषैं चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजों परवीन जू।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्ध द्वीप की पूर्व दिशा में स्थित मन्दरमेरु की दक्षिणदिशि भरतक्षेत्रसम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गिरि सु मन्दर उत्तर जानियो, क्षेत्र ऐरावत सु बखानियो।
ता विषैं चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजों परवीन जू।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्ध द्वीप की उत्तर दिशा में स्थित मन्दरमेरु की उत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्रसम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पद्धरि)

पश्चिम पुष्करगिरि विद्युन्माल, ता दक्षिण भरत बन्यो रसाल।
तामें चौबीसी हैं जु तीन, वसु द्रव्य लेय पूजों प्रवीन।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्ध द्वीप की उत्तर दिशा में स्थित विद्युन्मीलीमेरु की दक्षिणदिशि ऐरावतक्षेत्रसम्बन्धि–भूतानागत–वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

याही गिर के उत्तर जु ओर, ऐरावत क्षेत्र तनी सु ठौर।
तामें चौबीसी हैं जु तीन, वसु द्रव्य लेय पूजों प्रवीन।।10।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्ध द्वीप की उत्तर दिशा में स्थित विद्युन्मीलीमेरु की उत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्रसम्बन्धि-भूतानागत-वर्तमान तीन चौबीसी सम्बन्धि बहत्तर तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(कुण्डलिया)

द्वीप अढ़ाई के विषैं, पाँच मेरु हित दाय।
दक्षिण उत्तर तासु के, भरत ऐरावत भाय।।
भरत ऐरावत भाय, एक क्षेत्र के माहीं।
चौबीसी हैं तीन-तीन, दश ही के ठाहीं।।
दशों क्षेत्र के तीस, सात सौ बीस जिनेश्वर।
अर्घ लेय कर जोड़ि जजों 'रविमल' मन शुध कर।।11।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावतक्षेत्रस्थ-पंचमेरुसम्बन्धि-भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि सप्तशतविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

चौबीसी तीसों तनी, पूजा परम रसाल।
मन वच तन सों शुद्धकर, अब वरनों जयमाल।।

(पद्धरि)

जय द्वीप अढ़ाई में जु सार, गिरि पंचमेरु उन्नत अपार।
तागिरि पूरव-पश्चिम जु ओर, शुभ क्षेत्र विदेह बसै जु ठौर।।1।।
ता दक्षिण क्षेत्र भरत सु जान, है उत्तर ऐरावत महान।
गिरि पाँच तनैं दश क्षेत्र जोय, ताको वर्णन सुनि भव्य लोय।।2।।
जो भरत तनों वरनन विशाल, तैसो ही ऐरावत रसाल।
इक क्षेत्र बीच विजयार्ध एक, ता ऊपर विद्याधर अनेक।।3।।
इक क्षेत्र तने षट् खंड जानि, तहँ छहों काल बरतैं महान।
जो तीन काल में भोगभूमि, दस जाति कल्पतरु रहे झूमि।।4।।

जब चौथो काल लगै जु आय, तब कर्मभूमि बरते समाय।
तब तीर्थंकर को जन्म होय, सुर लेय जजैं गिर मेरु सोय।।5।।
बहु भक्ति करें सब देव आय, ताथेई थेई थेई थेई तान लाय।
हरि तांडव नृत्य करे अपार, सब जीवन मन आनन्दकार।।6।।
इत्यादि भक्ति करके सुरिंद, निज थान जाय जुत देव वृंद।
या विधि पाँचों कल्याण जोय, हरिभक्ति करै अति हरष होय।।7।।
या कालविषै पुनवंत जीव, नरजन्म धार शिव लह अतीव।
सब त्रेसठ पुरुष प्रवीन जोय, सब याही काल विषैं जु होय।।8।।
जब पंचम काल करै प्रवेश, मुनि धर्म तनों नहिं रहे लेश।
बिरले कोई दक्षिन देश माहिं, जिनधर्मी जन बहुते जु नाहिं।।9।।
अब आवत है षष्टम जु काल, दुख में दुख प्रकटे अति कराल।
तब मांसभक्षी नर सर्व होय, जहँ धर्म नाम नहिं सुने कोय।।10।।
याही विधि से षट्काल जोय, दश क्षेत्रन में इकसार होय।
सब क्षेत्रन में रचना समान, जिनवाणी भाख्यो सो प्रमान।।11।।
चौबीसी है इक क्षेत्र तीन, दश क्षेत्र तीस जानों प्रवीन।
आगत नागत जिन वर्तमान, सब सात शतक अरु बीस जान।।12।।
सबही जिनराज नमों त्रिकाल, मोहि भववारिधितैं ल्यो निकाल।
यह विनय हिये में धारि लेव, मम रक्षा करो जिनेन्द्र देव।।13।।
रविमल की विनती सुनो नाथ! मैं पाँय पड़ूँ जुग जोरि हाथ।
मनवांछित कारज करो पूर, यह अरज हिये में धरि हुजूर।।14।।

(घत्ता)

शत सात जु बीसं, श्री जगदीशं, आगत नागत बरततु हैं।
मन वच तन पूजैं, पातक धूजैं, सुरग-मुक्ति पद परसत हैं।।

ॐ ह्रीं श्री पंचभरतैरावत-क्षेत्रस्थ-पंचमेरुसम्बन्धि-भूतानागत-वर्तमान-सम्बन्धि-सप्तशतविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

सम्वत् सत उन्नीस के, ता ऊपर पुनि आठ।
पौष कृष्ण तृतीया गुरु, पूरन भयो जु पाठ।।
अखर मात्रा की कसर, बुध-जन शुद्ध करेय।
अल्पबुद्धि मोहि जानके, दोष कबहुँ नहिं देय।।
पढ्यो नहीं व्याकरण मैं, पिंगल देख्यो नाहिं।
जिनवाणी परसादतैं, उमंग भई घट माहिं।।
मान बढ़ाई ना चहूँ, चहूँ धर्म को अंग।
नित प्रति पूजा कीजियो, मन में धारि उमंग।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म पूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

स्थापना

(छन्द-अडिल्ल)

क्षमा आदि अन्तर्गर्भित जिसमें अहा,
विषय-कषायों से विरक्ति लक्षण कहा।
आत्मलीनता ब्रह्मचर्य सुखकार है,
पूजूँ-धारूँ सहज भक्ति उर धार है।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् इति सन्निधिकरणम्।

ले समकित जल अविकारी, धोऊँ मिथ्यामल भारी।
भक्ति से पूज रचाऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

ले क्षमाभावमय चन्दन, करता नित ही अभिनन्दन।
पूजन कर क्रोध नशाऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षतरूप विभाव नशाऊँ, अक्षय स्वरूप ही ध्याऊँ।
अक्षत से पूज रचाऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानामृत जल बरसावे, विषयों की चाह नशावे।
भावों के पुष्प चढ़ाऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जब आतम अनुभव आवे, अद्भुत तृप्ति प्रकटावे।
चरु सरस भावमय लाऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहँ सम्यग्ज्ञान विलसता, मिथ्यातम सहज विनशता।
प्रभु अन्तर्दीप जलाऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दुर्ध्यान मिटे दुखकारी, हो आत्मध्यान सुखकारी।
मैं कर्म-कलंक जलाऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

कर्मों के फल नहिं चाहूँ, मैं मुक्ति महाफल पाऊँ।
प्रभु प्रासुक फल ले आऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभुता अनर्घ्य अविकारी, मैंने प्रत्यक्ष निहारी।
भक्तिमय अर्घ्य चढ़ाऊँ, व्रत ब्रह्मचर्य प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवधा शील अर्घ्यावलि

(दोहा)

ब्रह्मचर्य अद्‌भुत निधि, राखो सदा बचाय।
विषयी तस्कर जग फिरे, दृढ़ नव बाढ़ लगाय।।

ॐ ह्रीं श्री नवधाशीलपालनोत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(चौपाई)

स्त्री संग तजो दुखकारी, भजो असंग भाव अविकारी।
सत्संगति में रहकर भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीस्त्रीसहवासवर्जनरूपोत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मंगलमय निज धर्म सम्हारो, नहीं वासना सहित निहारो।
खोटे भाव नहीं हों भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्री स्त्रीमनोहरांगनिरीक्षणवर्जनरूपोत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनसे हो विषयों का पोषण, ऐसे वचनशील के दूषण।
सुनो न बोलो मेरे भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीरागवचनवर्जनरूपोत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करो सदा तत्त्वों का चिन्तन, भोगों का नहिं होय स्मरण।
सावधान नित रह कर भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीपूर्वभोगानुस्मरणवर्जनरूपोत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

करो सदा सात्त्विक आहार, सादा जीवन-श्रेष्ठ विचार।
धर निर्ग्रन्थ भावना भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीवृष्येष्टरसवर्जनरूपोत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर रत्नत्रयमय शृंगार, तजो अध्रुव तन का शृंगार।
शील स्वयं आभूषण भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीस्वशरीरसंस्कारवर्जनरूपोत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नारी की शय्या अरु वस्त्र, करें विकार भाव हों त्रस्त।
विविक्त शय्यासन तप भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीस्त्रीशय्यासनवर्जनरूपोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अति भोजन प्रमाद उपजाय, कामादिक दुर्भाव कराय।
युक्ताहारी होकर भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीउदरपूर्णासनवर्जनरूपोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विकथा त्याग करो स्वाध्याय, आतम अनुभवरस विलसाय।
चेष्टाएँ निर्मल हों भाई, ब्रह्मचर्य पालो सुखदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीकामकथावर्जनरूपोत्तम-ब्रह्मचर्यधर्माय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

अब्रह्म भाव विडार, ब्रह्म-स्वरूप निहारते।
रहें सहज अविकार, तिन गुण चिंतन अघ नशैं।।

(छन्द-पद्धरि)

जिन परम ब्रह्म को पहचाना, अपना सुख अपने में जाना।
अपनी प्रभुता प्रतिभासी हो, उनको नित सहज उदासी हो।।

धनि धन्य जिनेश्वर के नन्दन, करते शुद्धातम अभिनन्दन।
नित तत्त्व-भावना भाते हैं, अपना वैराग्य बढ़ाते हैं।।

ज्ञानानन्द ही जगमाहिं सार, है शिवस्वरूप शिव सुक्खकार।
निजपद ही तृप्तिदायक है, निजपद संतुष्टि प्रदायक है।।

भोगों का चिन्तन, अभिलाषा, संतापकरण दुखमय भासा।
चर्चा अरु चेष्टा महानिंद्य से होय जीव को पापबंध।।

विषयों के वश जो होंय दीन, वे रहें सदा ही पराधीन।
जो विषयों से होवें उदास, उनका सब जग हो जाय दास।।

व्रत ब्रह्मचर्य सबसे महान, अन्तर्गर्भित सब सुगुण जान।
प्रकटाने योग्य सु उपादेय, इससे भवि पावें परम श्रेय।।

अति पुण्योदय अवसर आया, नरभव अरु जिनशासन पाया।
स्वाध्याय करो मंगलकारी, तत्त्वों का निर्णय हितकारी।।

अपने को ध्रुव आतम जानो, देहादिक भिन्न सु पहचानो।
रागादिक जानो दुखदायी, रत्नत्रय ही आनन्ददायी।।

समझो चारों गति ही दुखमय, है मात्र मोक्ष ही मंगलमय।
आतम अनुभव कर श्रद्धा धर, वैराग्य भावना फिर भाकर।।

इंद्रिय विषयों का त्याग करो, अब जगतपूज्य ब्रह्मचर्य धरो।
बाधाओं से नहिं घबराओ, दृढ़ता पूर्वक बढ़ते जाओ।।

लोकोत्तम ज्ञायक आराधो, समदर्शी हो शिवपद साधो।
है यही जगत में एक सार, शाश्वत आनन्दमय समयसार।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

समयसारमय परिणति, नियमसार हो जाय।
यही परम ब्रह्मचर्य है, धारे सो शिव पाय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री वीतराग पूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(दोहा)

शुद्धातम में मगन हो, परमातम पद पाय।
भविजन को शुद्धात्मा, उपादेय दरशाय।।

जाय बसे शिवलोक में, अहो अहो जिनराज।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, आयो पूजन काज।।

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेव! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेव! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेव! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

ज्ञानानुभूति ही परमामृत है, ज्ञानमयी मेरी काया।
है परम पारिणामिक निष्क्रिय, जिसमें कुछ स्वांग न दिखलाया।।
मैं देख स्वयं के वैभव को, प्रभुवर अति ही हर्षाया हूँ।
अपनी स्वाभाविक निर्मलता, अपने अन्तर में पाया हूँ।।
थिर रह न सका उपयोग प्रभो! बहुमान आपका आया है।
समतामय निर्मल जल ही प्रभु, पूजन के योग्य सुहाया है।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय जन्मजरामत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

है सहज अकर्ता ज्ञायक प्रभु, ध्रुव रूप सदा ही रहता है।
सागर की लहरों सम जिसमें, परिणमन सु बाहर होता है।।
हे शान्ति सिन्धु! अवबोधमयी, अद्भुत तृप्ति उपजाई है।
अब चाह दाह प्रभु शमित हुई, शीतलता निज में पाई है।।
विभु अशरण जग में शरण मिले, बहुमान आपका आया है।
चैतन्य सुरभिमय चन्दन ही, पूजन के योग्य सुहाया है।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अब भान हुआ अक्षय पद का, क्षत का अभिमान पलाया है।
प्रभु निष्कलंक निर्मल ज्ञायक, अविचल अखण्ड दिखलाया है।।
जहाँ क्षायिकभाव भी भिन्न दिखे, फिर अन्य भाव की कौन कथा।
अक्षुण्ण आनन्द निज में विलसे, निःशेष हुई अब सर्व व्यथा।।
अक्षय स्वरूप दातार नाथ!, बहुमान आपका आया है।
निरपेक्ष भावमय अक्षत ही, पूजन के योग्य सुहाया है।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

चैतन्य ब्रह्म की अनुभूतिमय, ब्रह्मचर्य रस प्रकटाया।
भोगों की अब मिटी वासना, दुर्विकल्प भी नहिं आया।।
भोगों के तो नाम मात्र से, भी कम्पित मन हो जाता।
मानो आयुध-से लगते हैं, तब त्राण स्वयं में ही पाता।।
हे कामजयी! निज रस में रम जाऊँ, यही भावना मन आनी।
श्रद्धा-सुमन समर्पित जिनवर, काम-बुद्धि सब बिसरानी।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्म-अतीन्द्रिय रस पीकर, तुम तृप्त हुए त्रिभुवन स्वामी।
निज में ही सम्यक् तृप्ति की विधि, तुम से सीखी जगनामी।।
अब कर्ता भोक्ता बुद्धि छोड़, ज्ञाता रह निज-रस पान करूँ।
इन्द्रिय विषयों की चाह मिटी, सर्वांग सहज आनंदित हूँ।।
निज में ही ज्ञानानन्द मिला, बहुमान आपका आया है।
परम तृप्तिमय अकृत बोध ही, पूजन के योग्य सुहाया है।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार में भटका था, सम्यक् प्रकाश निज में पाया।
प्रतिभासित होता हुआ स्वज्ञायक, सहज स्वानुभव में आया।।
अतीन्द्रिय सहज, निरालम्बी प्रभु, सम्यग्ज्ञान ज्योति प्रकटी।
चिर की मोह-अँधेरी जिनवर!, तुम समीप क्षण में विघटी।।
अस्थिरता जन्य दोष भगवन, बहुमान आपका आया है।
अविनाशी केवलज्ञान जगे, प्रभु ज्ञान प्रदीप-जलाया है।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्क्रिय निष्कर्म परम ज्ञायक, ध्रुव ध्येय स्वरूप अहो! पाया।
जब ध्यान-अग्नि प्रज्वलित हुई, विघटी पर परिणति की माया।।
जागी प्रतीति अब स्वयंसिद्ध, भव-भ्रमण भ्रांति सब दूर हुई।
असंयुक्त निर्बन्ध सुनिर्मल, धर्म परिणति प्रकट हुई।।

अस्थिरताजन्य विकार मिटें, मैं शरण आपकी हूँ आया।
बहुमान भावमय धूप धरूँ, निष्कर्म तत्त्व मैंने पाया।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

है परिपूर्ण सहज ही आतम, कमी नहीं कुछ दिखलावे।
गुण अनन्त सम्पन्न प्रभु, जिसकी दृष्टि में आ जावे।।
होय अयाची लक्ष्मीपति, फिर वांछा ही नहिं उपजावे।
स्वात्मोपलब्धिमय मुक्ति दशा का, सत्पुरुषार्थ सु प्रकटावे।।
अफल दृष्टि प्रकटी प्रभुवर!, बहुमान आपका आया है।
निष्काम भावमय पूजन का, विभु परम भाव फल पाया है।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अविचल अनर्घ्य पद पाया, सहज प्रमोद हुआ भारी।
ले भावार्घ्य अर्चना करता, निज अनर्घ्य वैभव धारी।।
चक्री इन्द्रादिक के वैभव भी, नहिं आकर्षित कर सकते।
अखिल विश्व के रम्य भोग भी, मोह नहीं उपजा सकते।।
निजानन्द में तृप्तिमय ही, होवे काल अनन्त प्रभो!।
ध्रुव अनुपम शिव-पदवी प्रकटे, निश्चय ही भगवन्त अहो।।

ॐ ह्रीं श्रीवीतरागदेवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(छन्द - चामर तर्ज - मैं हूँ पूर्ण ज्ञायक....)

प्रभो! आपने एक ज्ञायक बताया।
तिहूँ लोक में नाथ! अनुपम जताया।
यही रूप मेरा मुझे आज भाया।
महानन्द मैंने स्वयं में ही पाया।। टेक ।।
भव-भव भटकते बहुत काल बीता।
रहा आज तक मोह मदिरा ही पीता।।

फिर ढूँढता सुख विषयों के माहीं।
मिली किन्तु उनमें, असह्य वेदना ही।।
महाभाग्य से आपको देव पाया।
तिहूँ लोक में नाथ! अनुपम जताया।।1।।

कहाँ तक कहूँ नाथ महिमा तुम्हारी।
निधि आत्मा की सु दिखलाई भारी।।
निधि प्राप्ति की प्रभु सहज विधि बताई।
अनादि की पामरता बुद्धि पलाई।।
परमभाव मुझको सहज ही दिखाया।
तिहूँ लोक में नाथ! अनुपम जताया।।2।।

विस्मय से प्रभुवर था तुमको निरखता।
महामूढ़ दुखिया स्वयं को समझता।।
स्वयं ही प्रभु हूँ दिखे आज मुझको।
महाहर्ष मानो मिला मोक्ष ही हो।।
मैं चिन्मात्र ज्ञायक हूँ अनुभव में आया।
तिहूँ लोक में नाथ! अनुपम जताया।।3।।

अस्थिरता-जन्य प्रभो दोष भारी।
खटकती है रागादि परिणति विकारी।।
विश्वास है शीघ्र ये भी मिटेगी।
स्वभाव के सन्मुख यह कैसे टिकेगी?।।
नित्य-निरंजन का अवलम्ब पाया।
तिहूँ लोक में नाथ! अनुपम जताया।।4।।

दृष्टि हुई आप-सम ही प्रभो जब।
परिणति भी होगी तुम्हारे ही सम तब।।

नहीं मुझको चिन्ता मैं निर्दोष ज्ञायक।
नहीं पर से सम्बन्ध मैं ही ज्ञेय ज्ञायक।।
हुआ दुर्विकल्पों का जिनवर सफाया।
तिहूँ लोक में नाथ! अनुपम जताया।।5।।

सर्वांग सुखमय स्वयं सिद्ध निर्मल।
शक्ति अनन्तमयी एक अविचल।।
बिन्मूर्ति चिन्मूर्ति भगवान आत्मा।
तिहूँ जग में नमनीय शाश्वत चिदात्मा।।
हो अद्वैत वन्दन प्रभो! हर्ष छाया।
तिहूँ लोक में नाथ! अनुपम जताया।।6।।

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

आपहि ज्ञायक देव है, आप आपका ज्ञेय।
अखिल विश्व में आप ही, ध्येय ज्ञेय श्रद्धेय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री जिनवाणी पूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(वीरछन्द)

अनेकान्तमय तत्त्व बताती, स्याद्वादमय जिनवाणी।
मंगलमय शुद्धात्म दिखाती, नय प्रमाण से जिनवाणी।।
भक्तिभाव से पूजा करते, मन में अति हर्षाता हूँ।
अन्तर्लीन परिणति होवे, यही भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वति-वाग्वादिनि! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(छन्द-रोला)

भेदज्ञानमय जल लेकर मैं पूजा करता।
शाश्वत ज्ञानानन्दमय आतम-दृष्टि धरता।।
जन्म-जरा-मृत दोष सहज विनशावनहारी।
जिनवाणी भव्यों की माता-सम उपकारी।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षमाभावमय चन्दन लेकर जजूँ सदा ही।
क्रोधादिक मम चित्त माहिं उपजें न कदा ही।।
असहनीय भव-ताप सहज विनशावनहारी।
जिनवाणी भव्यों की माता-सम उपकारी।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

निर्मल सरल भाव अक्षत से पूजा करता।
क्षत-विक्षत संयोगी भाव सहज ही तजता।।
अक्षय पद पाऊँ होकर चैतन्य विहारी।।जिनवाणी..।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

परम शीलमय सुमनों से पूजूँ हर्षाऊँ।
महाक्लेशमय कामादिक दुर्भाव नशाऊँ।।
ब्रह्म भावना सदा सभी को मंगलकारी।।
जिनवाणी भव्यों की माता-सम उपकारी।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

ज्ञान शरीरी जड़ शरीर से भिन्न निजातम।
आराधन से अहो! धन्य होते परमातम।।
चरु से पूजूँ भाऊँ आतम तृप्तिकारी।।जिनवाणी..।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

ज्ञानमयी निज शुद्धातम सबको दर्शाती।
जो अनादि का मोह महातम सहज नशाती।।
पूजूँ ज्ञान प्रदीप जलाऊँ मंगलकारी।।जिनवाणी..।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मादिक का दोष ज्ञान में नहीं दिखावें।
ध्याते ज्ञान स्वरूप, सहज ही कर्म नशावें।।
पूजूँ जिनवाणी ध्याऊँ, आतम अविकारी।।जिनवाणी..।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

अहो! ज्ञानघन सहज मुक्त आतम दर्शाया।
जिनवाणी माँ के प्रसाद से शिवपथ पाया।।
फल से पूजूँ त्यागूँ फल वांछा दुखकारी।।जिनवाणी..।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

द्रव्य-भावमय अर्घ्य सजा पूजूँ जिनवाणी।
नित्य-बोधनी तरण-तारिणी शिव सुखदानी।।
हो अनर्घ्य निज आतम प्रभुता मंगलकारी।।
जिनवाणी भव्यों की माता-सम उपकारी।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दिव्यज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

गाऊँ जयमाला अहो, तत्त्व प्रकाशनहार।
जिनवाणी अभ्यास से, जानूँ जाननहार।।

(चौपाई)

जिनवाणी शिवमार्ग बतावे, जिनवाणी निज तत्त्व दिखावे।
जिनवाणी दुर्मोह नशावे, जिनवाणी भव-फन्द छुड़ावे।।

क्रोध-अग्नि को सहज बुझावे, मान महाविष तुरत नशावे।
मृदुता ऋजुता माँ सिखलावे, तोष सुधारस पान करावे।।
जिनवाणी अभ्यास करें जे, निर्भय और निशंक रहें वे।
दोष नशावें गुण प्रकटावें, सहज परम वात्सल्य बढ़ावें।।
निज से अस्ति पर से नास्ति, समझे सो ही पावे स्वस्ति।
हो निष्काम निजातम भावे, हो निर्ग्रंथ परमपद ध्यावे।।
असत् विभावों की नहिं चिंता, निजस्वभाव में सतत रमन्ता।
कर्म कलंक समूल नशावें, ध्रुव अविचल शिवपदवी पावें।।
आदर्शों का ज्ञान कराती, नैमित्तिक व्यवहार सिखाती।
बन्ध-मुक्ति प्रक्रिया बताती, स्वानुभूति की कला सुझाती।।
चार अनुयोगमयी जिनवाणी, माता सम सबको सुखदानी।
भक्ति भाव से करूँ अर्चना, आतमहित की जगी भावना।।
दिव्यतत्त्व दर्शावनहारी, दिव्यज्ञान प्रकटावन हारी।
जयवन्ते जग में जिनवाणी, तत्त्वज्ञान पावें सब प्राणी।।

(दोहा)

जिनवाणी है द्रव्यश्रुत, ज्ञानभाव श्रुतज्ञान।
अभ्यासो नित द्रव्यश्रुत, प्रकटे ज्ञान महान।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

परम प्रीति उरधार, जिनवाणी पूजा रची।
आतम रूप निहार, मोह मिटा आनन्द हुआ।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री मुनिराज पूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(वीरछन्द)

विषयाशा आरम्भ रहित जो, ज्ञान ध्यान तप लीन रहें।
सकल परिग्रह शून्य मुनीश्वर, सहज सदा स्वाधीन रहें।।
प्रचुर स्व-संवेदनमय परिणति, रत्नत्रय अविकारी है।
महा हर्ष से उनको पूजें, नित प्रति धोक हमारी है।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरा:! अत्र अवतर अवतर। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ:। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(अवतार)

मुनिमन सम समता नीर, निज में ही पाया।
नाशें जन्मादिक दोष, शाश्वत पद भाया।।
गुण मूल अठाइस युक्त, मुनिवर को ध्यावें।
अपना निर्ग्रंथ स्वरूप, हम भी प्रकटावें।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन-सम धर्म सुगन्ध, जग में फैलावें।
बैरी भी बैर विसारि, चरणन सिर नावें।।
गुण मूल अठाइस युक्त, मुनिवर को ध्यावें।
अपना निर्ग्रंथ स्वरूप, हम भी प्रकटावें।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

लख तुष समान तन भिन्न, अक्षय शुद्धातम।
आराधें निर्मम होय, कारण परमातम।।गुण मूल..।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्कम्प मेरु-सम चित्त, काम विकार न हो।
लहुँ परम शील निर्दोष, गुरु आदर्श रहो।।
गुण मूल अठाइस युक्त, मुनिवर को ध्यावें।
अपना निर्ग्रंथ स्वरूप, हम भी प्रकटावें।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल निज ज्ञायक भाव, दृष्टि माहिं रहे।
कैसे उपजावे मोह, ज्ञान प्रकाश जगे।।गुण मूल..।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

तज आर्त रौद्र दुर्ध्यान, आतम ध्यान धरें।
उनको पूजें हर्षाय, कर्म-कलंक हरें।।गुण मूल..।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निश्चल निजपद में लीन, मुनि नहिं भरमावें।
निस्पृह निर्वांछक होय, मुक्ति-फल पावें।।गुण मूल..।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्री चरणन शिर नाय, महिमा प्रकट करें।
लेकर बहुमूल्य सु अर्घ्य, हम भी भक्ति करें।।
गुण मूल अठाइस युक्त, मुनिवर को ध्यावें।
अपना निर्ग्रन्थ स्वरूप, हम भी प्रकटावें।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

कामादिक-रिपु जीतकर, रहें सदा निर्द्वन्द्व।
तिनके गुण चिन्तत कटें, सहज कर्म के फन्द।।

(चौपाई)

मुनि-गुण गावत चित हुलसाय, जनम-जनम के क्लेश नशाय।
शुध उपयोग धर्म अवधार, होय विरागी परिग्रह डार।।
तीन कषाय चौकड़ी नाश, निर्ग्रंथ रूप सु कियो प्रकाश।
अन्तर आतम अनुभव लीन, पाप परिणति हुई प्रक्षीण।।
पंच महाव्रत सोहें सार, पंच समिति निज-पर हितकार।
त्रय गुप्ति हैं मंगलकार, संयम पालें बिन अतिचार।।
पंचेन्द्रिय अरु मन वश करे, षट् आवश्यक पालें खरे।
नग्न रूप स्नान सु त्याग, केशलौंच करते तज राग।।
एक बार लें खड़े अहार, तजें दन्त धोवन अघकार।
भूमि माहिं कछु शयन सु करें, निद्रा में भी जाग्रत रहें।।
द्वादश तप दश धर्म सम्हार, निज स्वरूप साधें अविकार।
नहीं भ्रमावें निज उपयोग, धारें निश्चल आतम योग।।
क्रोध नहीं उपसर्गों माहिं, मान न चक्री शीश नवाहिं।
माया शून्य सरल परिणाम, निर्लोभी वृत्ति निष्काम।।
सबके उपकारी वर वीर, आपद माहिं बँधावें धीर।
आत्मधर्म का दें उपदेश, नाशें सर्व जगत के क्लेश।।
जग की नश्वरता दर्शाय, भेदज्ञान की कला बताय।
ज्ञायक की महिमा दिखलाय, भव-बन्धन से लेंय छुड़ाय।।
परम जितेन्द्रिय मंगल रूप, लोकोत्तम है साधु स्वरूप।
अनन्य शरण भव्यों को आप, मेटें चाह दाह भव-ताप।।
धन्य-धन्य वनवासी सन्त, सहज दिखावें भव का अन्त।
अनियतवासी सहज विहार, चन्द्र चाँदनी-सम अविकार।।

रखें नहीं जग से सम्बन्ध, करें नहीं कोई अनुबन्ध।
आतम रूप लखें निर्बन्ध, नशें सहज कर्मों के बन्ध।।
मुनिवर-सम मुनिवर ही जान, वचनातीत स्वरूप महान।
ज्ञान माहिं मुनिरूप निहार, करें वन्दना मंगलकार।।
पाऊँ उनका ही सत्संग, ध्याऊँ अपना रूप असंग।
यही भावना उर में धार, निश्चय ही होवें भव-पार।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य-उपाध्याय-साधु-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

अहो! सदा हृदय बसें, परम गुरु निर्ग्रंथ।
जिनके चरण-प्रसाद से, भव्य लहें शिव-पंथ।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री आदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वर पूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

स्थापना (छन्द-वीर)

भरतक्षेत्र के वर्तमान के, आदि तीर्थंकर ऋषभेश्वर।
आदि मदन पद प्राप्त बाहुबली, चक्री आदि सु भरतेश्वर।।
दर्शन करते अहो जिनेश्वर! भक्ति भाव उर उमगाया।
करूँ समुच्चय पूजन मैं भी, जिनपद पाने ललचाया।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् इति सन्निधिकरणम्।

(छन्द-ताटंक)

जन्म मरण का चक्र मिटाने, आया प्रभुवर जल लेकर।
अविनाशी ध्रुव पद आराधूँ, भाऊँ भावना मंगलकर।।
हे आदीश्वर! हे बाहुबली! हे भरत जिनेश्वर! जगनामी।
भक्तिभाव से करूँ अर्चना, अपनी निधि पाऊँ स्वामी।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन में कुछ शक्ति नहीं है, रागाताप मिटाने की।
उसे चढ़ाकर जगी लालसा, प्रभु शीतलता पाने की।।हे.।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत है केवल निजस्वभाव, स्वाभाविक प्रभुता ही अक्षय।
पूजूँ अक्षत से यही भाव, क्षत-भावों का हो जावे क्षय।।हे.।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ये भोग रोग की खान दिखे, अब यही भाव निष्काम रहूँ।
श्रद्धा के सुमन समर्पित हैं, प्रभु चाह-दाह में नहीं दहूँ।।हे.।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हे अनाहार! हे परम तृप्त! नैवेद्य चढ़ाऊँ भक्ति पगा।
सम-रस पीते निज तृप्त रहूँ, पूजन करते यह भाव जगा।।हे.।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे केवलज्ञान प्रकाशमयी! मैं भी ऐसा प्रकाश पाऊँ।
निर्मोही हो निर्ग्रन्थ रहूँ बस निज स्वभाव में रह जाऊँ।।हे.।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐसा पुरुषार्थ जगे स्वामी, मैं निर्मल आतम ध्यान धरूँ।
निष्कर्म दशा प्रकटे अनुपम, वैभाविक परिणति दूर करूँ।।
हे आदीश्वर! हे बाहुबली! हे भरत जिनेश्वर! जगनामी।
भक्तिभाव से करूँ अर्चना, अपनी निधि पाऊँ स्वामी।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथबाहुबलीभरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

अरे भोगते कर्मों के फल, मैं चिरकाल गँवाया है।
मुक्त-स्वरूप! लहूँ मुक्तिफल भाव यही उर आया है।।हे।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अद्‌भुत आतम वैभव स्वामिन् ! प्रकट दिखाया है तुमने।
ऐसा निज वैभव पाने को यह अर्घ्य चढ़ाया है मैंने।।हे।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-बाहुबली-भरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

कर्मभूमि की आदि में, किया स्व-पर कल्याण।
अद्‌भुत जीवन आपका, पाया पद निर्वाण।।

(तर्ज : अहो! जगत गुरुदेव)

पंचकल्याण पूज्य ऋषभदेव जिनराजा।
साँचे दीनदयाल, तारण-तरण जिहाजा।।
राज्यावस्था माहिं, लोक रीति वर्तायी।
निधन सुरी अवलोक, तत्त्व भावना भायी।।

मुनि दीक्षा अवधार, मार्ग प्रवर्तन कीना।
नृप श्रेयांस कुमार, प्रथमाहार सु दीना।।
सहस्र वर्ष तप कीन, घाति कर्म नशाये।
दर्श ज्ञान सुख वीर्य, प्रभु अनन्त प्रकटाये।।

समवशरण के माहिं, नाथ दिव्यध्वनि द्वारा।
प्रकटा मुक्ति-मार्ग, धर्मतीर्थ सुखकारा।।
पूर्व चौरासी लाख, आयु पूर्ण कर स्वामी।
आतम गुण विलसाय, आप हुए शिवगामी।।

बाहुबली भगवान, अनुपम चरित तुम्हारा।
पढ़ते सुनते देव! भासे जगत असारा।।
युद्ध क्षेत्र के माहिं! तुम वैराग्य विचारा।
अहो! सहज निर्द्वन्द्व, निर्ग्रन्थ पद स्वीकारा।।

नहिं आहार-विहार, आसन अचल लगाया।
माने जग आश्चर्य, चक्री शीश नवाया।।
क्षपकश्रेणि चढ़ आप, अनन्त चतुष्टय लीना।
ऋषभदेव से पूर्व, शिवपुर गमन सु कीना।।

पूजा कर जिनराज, आनन्द उर न समाये।
नाशे मिथ्या मोह, रत्नत्रय प्रकटाये।।
धन्य धन्य भरतेश!, तुम गुण कैसे गाऊँ।
अहो आप सम आप, पूजा कर हर्षाऊँ।।

करी दिग्विजय आप, चक्र सुदर्शन लेकर।
नृपति सहस बत्तीस, मानी आज्ञा सुखकर।।
नव निधि, चौदह रत्न, वैभव अपम्पारा।
हुआ हृदय वैराग्य प्रभु तृण-सम परिहारा।।

दीक्षा दिन ही देव, केवलज्ञान सु पाया।
आतम सुख स्वाधीन, अहो आप दर्शाया।।
कर्म-चक्र वश जीव, भव भव में भरमाये।
धर्मचक्र जिननाथ, सब दुख द्वन्द्व नशाये।।

मिटे चतुर्गति चक्र, परमानन्द विलसावे।
सिद्ध चक्र में जाय, फिर तो अचल रहावे।।
सहज भाव से होय, प्रभु पूजन सुखकारी।
यही भावना ईश! परिणति हो अविकारी।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथबाहुबलीभरतेश्वरजिनेन्द्रेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(छन्द-सोरठा)

जिनपूजा अविकार, भक्तिभाव से जो करें।
वे होवें भवपार, आधि-व्याधि सब ही मिटें।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री शान्ति-कुन्थु-अरनाथ जिनपूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(वीर-छन्द)

हो चक्रवर्ति अरु कामदेव, प्रभु! तीर्थंकर पदवी धारी।
हे शांति-कुन्थु-अरनाथ! सदा, मैं करूँ वंदना अविकारी।।
आकर आप समीप जिनेश्वर! आनन्द उर न समाया है।
तव दर्शन पाकर नाथ! आज, निजदर्शन मैंने पाया है।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्राः! अत्र अवतरन्तु अवतरन्तु संवौषट् इत्याह्वानम्। ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्राः! अत्र तिष्ठन्तु तिष्ठन्तु ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्राः! अत्र मम सन्निहिता भवन्तु भवन्तु वषट् सन्निधिकरणम्।

(अवतार छन्द)

मिथ्यामल धोने आज, सम्यक् जल लाया।
प्रभु जन्म-जरा-मृतु शून्य, ज्ञायक दिखलाया।।

हे शांति-कुन्थु-अरनाथ! चरणन सिर नाऊँ।
है महामहिम निजभाव, प्रभुता प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संताप रहित निज भाव, निज में दरशाया।
भव-ताप नशावन हेतु, चन्दन-सम पाया।।हे शांति.।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शाश्वत अक्षत निजभाव, दृष्टि में आया।
क्षत रागादिक विनशाय, अक्षय-पद ध्याया।।हे शांति.।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम रूप लख देव, काम पलाया है।
सम्यक् श्रद्धा का पुष्प, आज चढ़ाया है।।हे शांति.।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन कर निज में नाथ, तृप्ति पाई है।
भव-भव की क्षुधा जिनेश, आज नशायी है।।हे शांति.।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुँ जग का जाननहार, आज जनाया है।
आलोकित है निज लोक, मोह भगाया है।।हे शांति.।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु आत्मध्यान की अग्नि, अब सुलगाई है।
पर-परिणति की दुर्गन्ध सर्व जलाई है।।

हे शांति-कुन्थु-अरनाथ चरणन शिर नाऊँ।
है महामहिम निजभाव, प्रभुता प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल की अभिलाषा नाहिं, निजपद पाया है।
पूर्णत्व स्वयं में देख, आनन्द छाया है।।
हे शांति-कुन्थु-अरनाथ चरणन शिर नाऊँ।
है महामहिम निजभाव, प्रभुता प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु वीतराग विज्ञान-मय शुभ अर्घ्य लिया।
निज में अनर्घ्य पद नाथ, निज से प्राप्त किया।।हे शांति.।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

जग जड़ वैभव त्याग कर, निज वैभव प्रकटाय।
शांति-कुन्थु-अरनाथ की, नित जयमाला गाय।।

(जोगीरासा)

शांति जिनेश्वर दर्शन कर, निज शान्त स्वरूप लखाया।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।टेक।।

चाह दाह में भटका अब तक, सुख का लेश न पाया।
मंद कषायों द्वारा अंतिम ग्रैवेयक तक हो आया।।
काललब्धि जागी प्रभुवर, मैं पास आपके आया।।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

आत्मा तो स्वभाव से सुखमय, दिव्य रहस्य बताया।
दीन दुखी पामर मैं हूँ, ये भ्रम का रोग मिटाया।।
अन्तर में प्रत्यक्ष देख सुख, अब विश्वास जगाया।।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

निज चैतन्य विभूती देखी, शक्ति अनन्त निहारी।
प्रभु-सम प्रभुता लखकर खुद ही, भाव हुए अविकारी।।
होना नहीं सदा हूँ सुखमय, सम्यग्ज्ञान उपाया।।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

अब तो यही भावना प्रभुवर! निज में ही रम जाऊँ।
स्वानुभूतिमय परिणति में ही, काल अनन्त बिताऊँ।।
निज में ही सन्तुष्ट, कामनाओं का हुआ सफाया।।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

कुन्थुनाथ स्तुति करते, गणधर इन्द्रादिक हारे।
तुम महिमा वर्णन करने में, हम को मंद विचारे।।
निजस्वभाव साधन द्वारा ही, प्रभु मुक्ति-पद पाया।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

कुन्थु आदि सूक्षम जीवों के, प्रति भी दया सिखाई।
परम अहिंसामयी धर्म की, ध्वजा प्रभो! फहराई।।
चलूँ आपके पद-चिह्नों पर, आज यही मन भाया।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

धर्म-चक्र के अर स्वरूप, सार्थक प्रभु नाम तुम्हारा।
प्रभो! आपका दर्शन पाकर, जागा भाग्य हमारा।
भव का फेरा मिटा सहज ही, शिवपथ मैंने पाया।।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

चक्री का साम्राज्य आपने, तृणवत् क्षण में छोड़ा।
हो निर्ग्रन्थ प्रभो! उपयोग सु, निज ज्ञायक में जोड़ा।।
सकल कर्म का नाश किया प्रभु, अविचल शिवपद पाया।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

कहूँ कहाँ तक भाव बहुत हैं, अल्प शक्ति पर मेरी।
तुम-सम ही प्रभुतामय निःस्पृह, परिणति होवे मेरी।।
चाहूँ कुछ नहिं सहजभाव से, सविनय शीश नवाया।।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ-कुन्थनाथ-अरनाथ जिनेन्द्रेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मंगलमय मंगलकरण, आत्मस्वरूप महान।
शुद्धातम में मग्न हो, प्रकटे पद निर्वाण।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री आदीश्वर-महावीर-सीमन्धर पूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

स्थापना (छन्द-रोला)

हे आदीश्वर, महावीर, सीमन्धर स्वामी।
महाभाग्य से दर्शन पाया, त्रिभुवन-नामी।।
करूँ समुच्चय पूजन, जिनवर हृदय विराजो।
ध्याऊँ ध्येय स्वरूप, आप-सम ही है प्रभु जो।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानम्।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छन्द - अवतार)

जल मलहारी पर नाथ, अन्तर्मल न हरे।
तव सम्यक् भक्ति भाव, जन्म जरादि हरे।।
मन में धर ऐसा भाव, पूजूँ आनन्दकर।
प्रभु आदिनाथ महावीर, सीमन्धर जिनवर।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामाति स्वाहा।

चन्दन की शक्ति सु नाहिं, भव आताप हरे।
तव शांतरूप का ध्यान, मन को शांत करे।। मन।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामाति स्वाहा।

जग में अक्षय कहलाय, उसका क्षय होता।
अक्षय प्रभु ज्ञायक भाव, सहज सदा रहता।। मन।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामाति स्वाहा।

प्रभु पंचेन्द्रिय के भोग, भोगत व्यर्थ फँसे।
है ब्रह्मचर्य निर्दोष, काम समूल नशे।। मन।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामाति स्वाहा।

नाना विध व्यंजन देव, नहीं क्षुधादि हरें।
समभावमयी रस श्रेष्ठ, शाश्वत तृप्ति करे।। मन.।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामाति स्वाहा।

दीपक वा अन्य प्रकाश, अन्तर्तम न हरे।
निर्मोह ज्ञान शिवरूप, मार्ग प्रकाश करे।।
मन में धर ऐसा भाव, पूजूँ आनन्दकर।
प्रभु आदिनाथ महावीर, सीमन्धर जिनवर।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामाति स्वाहा।

नहिं धूप-दहन ने नाथ, कर्म-कलंक जरे।
निष्कर्म निराकुल होय, प्रभु-सम ध्यान धरे।। मन.।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामाति स्वाहा।

मुक्तिपथ में आदर्श, प्रभुवर आपहि हो।
तव धर्मतीर्थ अपनाय, जीव स्वयं प्रभु हो।। मन.।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामाति स्वाहा।

यह अर्घ्य अनर्घ्य सु नाहिं, भाव अनर्घ्य धरूँ।
पंचमगति अचल अनूप, विभुवर प्राप्त करूँ।। मन.।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामाति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

भक्ति सहित पूजा रची, गाऊँ अब जयमाल।
द्वन्द्व-फन्द सब तोरि के, होऊँ नाथ निहाल।।

(छन्द-मानव)

मैं महाभाग्य से पाया, जिनदर्शन मंगलकारी।
है यही भावना स्वामिन्! वर्ते समता सुखकारी।।

इस भरत क्षेत्र में जब थी, शुभ कर्मभूमि आने को।
सर्वार्थसिद्धि से आये, मुक्ति-पथ दर्शाने को।।

पितु नाभिराय कुलकर थे, रानी मरुदेवी माता।
कल्याणक देव मनाये, पाई सबने सुख-साता।।

राज्यावस्था में तुमने, लौकिक जीवन सिखलाया।
फिर निधन सुरी का लखकर, निर्ग्रंथ मार्ग अपनाया।।

श्रेयांस नृपति के आँगन, इक्षु रस पान कराया।
अक्षय तृतीया के शुभ दिन, प्रभु दानतीर्थ वर्ताया।।

तुम सहस्र वर्ष तप कीना, फिर घाति-कलंक नशाया।
प्रकटा था अनन्त चतुष्टय, प्रभु धर्मतीर्थ प्रकटाया।।

कैलाश शिखर शिव पाया, आदीश्वर आनन्दकारी।
है यही भावना स्वामिन्! वर्ते समता सुखकारी।।

अन्तिम तीर्थंकर सन्मति, हो सबको सन्मति दाता।
वर्धमान वीर अतिवीर, महावीर नाम विख्याता।।

पर्याय सिंह की स्वामिन्! सम्यग्दर्शन प्रकटाया।
फिर दशवें भव में प्रभुवर! रत्नत्रय पूर्ण कराया।।

हो बालयती हे विभुवर! भव भोगों को ठुकराया।
हे शासननायक! सुखमय, निर्ग्रन्थ मार्ग अपनाया।

पावापुर से शिव पाया, हम नमन करें अविकारी।
है यही भावना स्वामिन्! वर्ते समता सुखकारी।।

हो विद्यमान तीर्थंकर! पूरब विदेह के स्वामी।
मैं भरतक्षेत्र में पूजूँ, तुमको हे अन्तर्यामी।।

हैं यहाँ नहीं तीर्थंकर! चौबीसों मुक्ति पधारे।
स्मरण तुम्हारा आया, प्रभुवर! हो नाथ हमारे।।

सीमन्धर जिन को पूजूँ, अपनी सीमा में आऊँ।
दुखमय परिग्रह को त्यागूँ, निर्ग्रन्थ मार्ग अपनाऊँ।।
वैभाविक कर्म नशावें, होऊँ अक्षय गुणधारी।
है यही भावना स्वामिन्! वर्ते समता सुखकारी।।

(छन्द-घत्ता)

जय जय सुखसागर सुगुण उजागर, चरण शरण सब दुखहारी।
मैं निजपद ध्याऊँ, शिवपद पाऊँ, सफल भावना हो म्हारी।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-महावीर-सीमन्धरजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

तीर्थंकर त्रय पूज, सहजानन्द उर में भयो।
वांछा और न दूज, हो भविष्य प्रभु आप-सम।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री निर्वाणक्षेत्र पूजन-1

(पण्डित द्यानतरायजी कृत)

(सोरठा)

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये।
सिद्धभूमि निश-दीस, मन-वच-तन पूजा करौं।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(गीता)

शुचि क्षीर-दधि-सम नीर निरमल, कनक-झारी में भरौं।
संसार पार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं।।

सम्मेदगढ़ गिरनार चम्पा, पावापुरि कैलास कों।
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाणभूमि-निवास कों।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर कपूर सुगन्ध चन्दन, सलिल शीतल विस्तरौं।
भव-ताप कौ सन्ताप मेटो, जोर कर विनती करौं।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती-समान अखण्ड तंदुल, अमल आनंद धरि तरौं।
औगुन-हरौ गुन करौ हमको, जोर कर विनती करौं।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ फूल-रास सुवास-वासित, खेद सब मन के हरौं।
दुख-धाम काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करौं।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज अनेक प्रकार जोग मनोग धरि भय परिहरौं।
यह भूख-दूखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौं।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक-प्रकाश उजास उज्ज्वल, तिमिरसेती नहिं डरौं।
संशय-विमोह-विभरम-तम-हर, जोर कर विनती करौं।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ-धूप परम-अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।
सब करम पुंज जलाय दीज्यो, जोर-कर विनती करौं।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु फल मँगाय चढ़ाय उत्तम, चार गतिसों निरवरौं।
निहचैं मुकति-फल-देहु मोको, जोर कर विनती करौं।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्ध अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगतसों, जोर कर विनती करौं।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

श्री चौबीस जिनेश, गिरि कैलाशादिक नमों।
तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवाणतैं।।

(चौपाई 16 मात्रा)

नमों ऋषभ कैलासपहारं, नेमिनाथ गिरनार निहारं।
वासुपूज्य चम्पापुर वन्दौं, सन्मति पावापुर अभिनन्दौं।।
वन्दौं अजित अजित-पद-दाता, वन्दौं सम्भव भव-दुख घाता।
वन्दौं अभिनन्दन गण-नायक, वन्दौं सुमति सुमति के दायक।।
वन्दौं पद्म मुकति-पद्माकर, वन्दौं सुपास आश-पास हर।
वन्दौं चन्द्रप्रभ प्रभु चन्दा, वन्दौं सुविधि सुविधि-निधि-कन्दा।।
वन्दौं शीतल अघ-तप-शीतल, वन्दौं श्रेयांस श्रेयांस महीतल।
वन्दौं विमल-विमल उपयोगी, वन्दौं अनन्त-अनन्त सुखभोगी।।
वन्दौं धर्म-धर्म विस्तारा, वन्दौं शान्ति, शान्ति मन धारा।
वन्दौं कुन्थु, कुन्थु रखवालं, वन्दौं अर अरि हर गुणमालं।।
वन्दौं मल्लि काम मल चूरन, वन्दौं मुनिसुव्रत व्रत पूरन।
वन्दौं नमि जिन नमित सुरासुर, वन्दौं पार्श्व-पास भ्रम जगहर।।
बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर, शिखर सम्मेद महागिरि भू पर।
एक बार वन्दै जो कोई, ताहि नरक पशुगति नहिं होई।।
नरपति नृप सुर शक्र कहावै, तिहुँ जग भोग भोगि शिव पावै।
विघन विनाशन मंगलकारी, गुण-विलास वन्दौं भवतारी।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(घत्ता)

जो तीरथ जावै, पाप मिटावै, ध्यावै गावै, भगति करै।
ताको जस कहिये, संपति लहिये, गिरि के गुण को बुध उचरै।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री निर्वाणक्षेत्र पूजन-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(गीतिका)

है तीर्थ शाश्वत आत्मा उसका आराधन जो करें।
वे आत्म-आराधक जगत में चरण पावन जहँ धरें।।
वे तीर्थक्षेत्र कहाय सुखकर भाव से पूजन करूँ।
हो आत्म-साधक रत्नत्रय, परिपूर्ण कर भव से तिरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाणक्षेत्रसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् इति सन्निधिकरणम्।

(अवतार)

मलहारी जल कहलाय, अन्तर्मल न हरे।
अंतर्मल सहज नशाय, सो सम्यक् जल ले।।
सम्मेद शिखर गिरनार, चम्पा पावापुर।
कैलाश आदि सुखकार, पूजत हर्षे उर।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति-तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधादिक अनल समान, दाह करें दुखकर।
करने उनका अवसान, अनुपम चन्दन धर।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति-तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत रूप विभव जगमाहिं, प्रभु-सम ठुकराऊँ।
अक्षय आतम पद ध्याय, अक्षय पद पाऊँ।।
सम्मेद शिखर गिरनार, चम्पा पावापुर।
कैलाश आदि सुखकार, पूजत हर्षे उर।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति-तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय सुख दुख के मूल, विष-सम जान तजूँ।
अमृतमय ब्रह्म स्वरूप, हो निष्काम भजूँ।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति-तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः कामबाणविध्यवंसनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहिं मिटे भोग की भूख, सचमुच भोगों से।
होऊँ निजरस में तृप्त, बस हो भोगों से।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति-तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार में व्यर्थ, भटका दुख पाया।
महिमामय जिनवृष पाय, अनुभव प्रकटाया।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चिनगारी सम्यग्ज्ञान अन्तर में डारी।
प्रज्वलित हो आतमध्यान, शोधक सुखकारी।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति-तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

फल पुण्य पाप के माहिं, भव-भव भटकाया।
शिवफल की प्राप्ति हेतु, अब मन हुलसाया।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति-तीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

ले भाव अर्घ्य सुखकार निज में पागत हों।
प्रभु सर्व विभाव असार, दुखमय त्यागत हों।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

तीर्थ-वास की भावना, सहज होय दिन-रात।
गाऊँ जयमाला सुखद, ज्ञानमयी विख्यात।।

(पद्धरि)

जयवन्तो जग में धर्म तीर्थ, मंगलमय मंगलकरण तीर्थ।
सब पाप नशावें धर्म तीर्थ, शिवपथ दर्शावें धर्म तीर्थ।।
निज शुद्धातम परमार्थ तीर्थ, रत्नत्रय है व्यवहार तीर्थ।
अध्यात्म कथन यह सारभूत, भविजन हित हेतु निमित्त भूत।।

धर्मी से सम्बन्धित जु होय, हो धर्म क्षेत्र जगपूज्य होय।
निर्वाण भूमि तिनमें महान, पूजें विशेष धरि भेदज्ञान।।
कैलाश शिखर प्रभु आदिनाथ, गिरनार शिखर प्रभु नेमिनाथ।
चम्पापुर वासुपूज्य प्रभुवर, पावापुर महावीर जिनवर।।

तीर्थंकर बीस सम्मेदशिखर, पायो निर्वाण अचल सुखकर।
है सर्वक्षेत्र मंगल स्वरूप, जहँ तें भये प्रभुवर! सिद्ध रूप।।
पूजत उपजे आनन्द महान, निज सिद्धरूप का होय ध्यान।
तब देहादिक अतिभिन्न लगे, शिवसाधन में पुरुषार्थ जगे।।

कर्मादि शून्य ज्ञायक स्वरूप, निर्मम अखण्ड आनंद रूप।
मैं सहज मुक्त मैं नित्यमुक्त, निर्दोष निजातम सुगुण युक्त।।
यों हुई प्रतीती सुक्खरूप, भावें न स्वांग जड़ के विरूप।
निर्ग्रन्थ भावना मंगलमय, वर्ते शिव-दाता आनन्दमय।।

साधक हो साधूँ पूर्ण भाव, नाशूँ भव कारण सब विभाव।
यों भाव धार करता प्रणाम, उर बसे परम तीरथ ललाम।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

सिद्धक्षेत्र पूजन करें, सिद्ध रूप को ध्यान।
धरें परम आनन्दमय, होवें सिद्ध समान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

नन्दीश्वर द्वीप-पूजन-1

(कविवर द्यानतरायजी कृत)

(अडिल्ल)

सरब परब में बड़ो अठाई परब है।
नन्दीश्वर सुर जाहिं लेय वसु दरव है।।
हमैं सकति सो नाहिं इहाँ करि थापना।
पूजैं जिनगृह-प्रतिमा है हित आपना।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

(अवतार)

कंचन-मणि-मय भृंगार, तीरथ-नीर भरा।
तिहुँ धार दयी निरवार, जामन मरन जरा।।
नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पुंज करों।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद-भाव धरों।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-तप-हर शीतल वास, सो चन्दन नाहीं।
प्रभु यह गुन कीजै साँच, आयो तुम ठाहीं।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरै सोहै।
सब जीते अक्ष-समाज तुम-सम अरु को है।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊँ फूलनसौं।
लहुँ शील-लच्छमी एव, छूटों सूलनसौं।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज इन्द्रिय-बलकार, सो तुमने चूरा।
चरु तुम ढिंग सोहैं सार, अचरज है पूरा।।नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति-प्रकाश, तुम तन माहिं लसै।
टूटे करमन की राशि, ज्ञान-कणी दरसै।।नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु-धूप-सुवास, दश-दिशि नारि वरै।
अति हरष-भाव परकाश, मानो नृत्य करै।।नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविधि फल ले तिहुँ काल, आनन्द राचत हैं।
तुम शिव-फल देहु दयाल, तुहि हम जाचत हैं।। नन्दी.।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों।।
नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पुंज करों।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद-भाव धरों।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

कार्तिक फाल्गुन साढ़ के, अंत आठ दिन माहिं।
नन्दीश्वर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठाहिं।।

(लक्ष्मीधरा)

एक सौ त्रेसठ कोडि जोजन महा।
लाख चौरासिया एक दिश में लहा।।
आठमों द्वीप नन्दीश्वरं भास्वरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं।।

चार दिशि चार अंजनगिरी राजहीं।
सहस चौरासिया एक दिश छाजहीं।।
ढोल-सम गोल ऊपर तले सुन्दरं।।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं।।

एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी।
एक इक लाख जोजन अमल-जल भरी।।
चहुँ दिशि चार वन लाख जोजन वरं।।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं।।

सोल वापीन मधि सोल गिरि दधिमुखं।
सहस दश महाजोजन लखत ही सुखं।।

बावरी कौन दो माहिं दो रतिकरं।।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं।।

शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे।
चार सोलह मिलैं सर्व बावन लहे।।
एक इक सीस पर एक जिन मन्दिरं।।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं।।

बिम्ब अठ एक सौ रतनमयी सोहही।
देव-देवी सरव नयन मन मोहही।।
पाँच सौ धनुष तन पद्म-आसन परं।।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं।।

लाल नख-मुख नयन श्याम अरु स्वेत हैं।
श्याम-रंग भौंह सिर-केश छवि देत हैं।।
वयन बोलत मनों हँसत कालुष हरं।।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं।।

कोटि-शशि-भान-दुति-तेज छिप जात है।
महा-वैराग-परिणाम ठहरात है।।
वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यक धरं।।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ - जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

नन्दीश्वर-जिन-धाम, प्रतिमा-महिमा को कहै।
'द्यानत' लीनो नाम, यही भगति शिव-सुख करै।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री नन्दीश्वर द्वीप पूजन–2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(छन्द–वीर)

नंदीश्वर के अकृत्रिम जिन मंदिर अरु जिनबिम्ब अहा।
ज्ञान माहिं स्थापन करते उछले ज्ञानानन्द महा।।
ज्ञानमयी ही हो आराधन, सहजपने निष्काम प्रभो।
तृप्त सदैव रहूँ निज में ही, और चाह नहिं शेष विभो।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ–जिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छन्द–अडिल्ल)

स्वाभाविक निर्मल जल से अविकार हैं।
दुखमय जन्म जरा मृत नाशनहार हैं।।
नंदीश्वर के बावन मंदिर अकृत्रिम।
पूजूँ श्री जिनबिम्ब अनूपम जिन–समं।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपेपूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ–जिनबिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ चंदन नहिं अन्तर्ताप विनाशकं।
सहज भाव चन्दन भवताप विघातकं।।नंदीश्वर...।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपेपूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ–जिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल भाव अक्षत ले मंगलकार हैं।
स्वाभाविक अक्षय पद के दातार हैं।।नंदीश्वर...।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मीक गुण पुष्प जगत में सार हैं।
विषय चाह दव–दाह शमन कर्तार हैं।।
नंदीश्वर के बावन मंदिर अकृत्रिम।
पूजूँ श्री जिनबिम्ब अनूपम जिन–समं।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ–जिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भोजन व्यंजन नहीं क्षुधा को नाशते।
तातें पूजूँ अकृत बोध नैवेद्य ले।।नंदीश्वर...।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ–जिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीपक नहिं मोह विनाशनहार है।
मोह नशे जब जाने जाननहार है।।नंदीश्वर...।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ–जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रकटे अग्नि निर्मल आतप धर्म की।
जिससे होवे हानि सर्व ही कर्म की।।नंदीश्वर...।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ–जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पाऊँ परम भावफल प्रभु मंगलमयी।
और कामना शेष नहीं मन में रही।।नंदीश्वर...।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध भावमय अर्घ्य करूँ आनन्द सों।
पद अनर्घ्य पाऊँ छूटूँ भवफन्द सों।।नंदीश्वर...।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

धर्म पर्व सुखकार, हे जिन! पाया भाग्य से।
ध्याऊँ प्रभुपद सार, विषय कषायारम्भ तजि।।

(चौपाई)

अष्टम द्वीप नंदीश्वर सार, पूजूँ वन्दूँ भाव सँभार।
इक इक अंजनगिरि अविकार, चार-चार दधिमुख सुखकार।।
आठ आठ रतिकर मनुहार, दिशि दिशि तेरह मंदिर सार।
बावन मंदिर यों पहिचान, निरखत होवे हर्ष महान।।
रत्नमयी मनहर जिनबिम्ब, सन्मुख भासे निज चिद्बिम्ब।
वर्णन है जिन आगम माहिं, भाव सहित पूजत मन लाहिं।।
कार्तिक फाल्गुनऽषाढ़ मँझार, अन्त आठ दिन आनन्दधार।
जहँ सुरगण वन्दन को जाहिं, पुरुषार्थी सम्यक्त्व लहाहिं।।
यद्यपि शक्ति गमन की नाहिं, तदपि ज्ञान में सहज लखाहिं।
भाव वन्दना कर सुखकार, निज अकृत्रिम भाव निहार।।
हुआ सहज संतुष्ट जिनेश, अब वांछा प्रभु रही न लेश।
निज प्रभुता निज में विलसाय, काल अनन्त सु मग्न रहाय।।
धर्म पर्व मंगलमय सार, जिस निमित्त हो तत्त्व विचार।
कर उद्यम पाऊँ पद सार, जय जय समयसार अविकार।।
पर्व अठाई मंगलरूप, ध्याऊँ निज अनुपम चिद्रूप।
नित्य पवित्र परम अभिराम, शाश्वत परमातम सुखधाम।।
स्वयं सिद्ध अकृत्रिम जान, अजर अमर अव्यय पहिचान।
देखन योग्य स्वयं में देख, विलसे उर आनन्द विशेष।।

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशि द्विपंचाशज्जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

धन्य हुआ कृतकृत्य हुआ, पाया श्री जिनधर्म।
मर्म तत्त्व का प्राप्त कर, लहूँ सहज शिव-शर्म।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

पंचमेरु-पूजन-1

(पंडित द्यानतरायजी कृत)

(गीता छन्द)

तीर्थंकरों के न्हवन-जलतैं भये तीरथ शर्मदा,
तातैं प्रदच्छन देत सुर-गन पंचमेरुन की सदा।
दो जलधि ढाई द्वीप में सब गनत-मूल विराजही,
पूजौं असी जिनधाम-प्रतिमा होहि सुख, दुख भाजही।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि-अशीति जिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि-अशीति जिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि-अशीति जिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चौपाई आँचलीबद्ध)

सीतल-मिष्ट-सुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दिर-विद्युन्मालीपंचमेरुसम्बन्धि-अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जल केशर करपूर मिलाय, गंधसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीति जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो भवाताप–विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।पाँचों.।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीति–जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपद–प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बरन अनेक रहे महकाय, फूलसौं पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।पाँचों.।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः कामबाण–विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मन–वांछित बहु तुरत बनाय, चरुसौं पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।पाँचों.।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीति–जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग–विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसौं पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।पाँचों.।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार–विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खेऊँ अगर अमल अधिकाय, धूपसौं पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।पाँचों.।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्म–विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरस सुवर्ण सुगन्ध सुभाय, फलसौं पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।पाँचों.।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीति–जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफल–प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।पाँचों.।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि–अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद–प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

प्रथम सुदर्शन–स्वामि, विजय अचल मन्दर कहा।
विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जग में प्रकट।।

(बेसरी छन्द)

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै, भद्रशाल वन भू पर छाजै।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन–वच–तन वन्दना हमारी।।
ऊपर पाँच–शतक पर सोहै, नन्दन–वन देखत मन मोहै।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन–वच–तन वन्दना हमारी।।
साढ़े बासठ सहस ऊँचाई, वन सुमनस शोभै अधिकाई।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन–वच–तन वन्दना हमारी।।
ऊँचा जोजन सहस–छतीसं, पाण्डुक–वन–सोहै गिरि–सीसं।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन–वच–तन वन्दना हमारी।।
चारों मेरु समान बखाने, भू पर भद्रसाल चहुँ जाने।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन–वच–तन वन्दना हमारी।।
ऊँचे पाँच शतक पर भाखै, चारों नन्दन वन अभिलाखै।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन–वच–तन वन्दना हमारी।।

साढ़े पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी।।
उच्च अठाइस सहस बताये, पाण्डुक चारों वन शुभ गाये।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी।।
सुर-नर-चारन वन्दन आवैं, सो शोभा हम किह मुख गावैं।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मन-वच-तन वन्दना हमारी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि-अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

(दोहा)

पंचमेरु की आरती, पढ़े सुनै जो कोय।
'द्यानत' फल जानै प्रभो, तुरत महासुख होय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री पंचमेरु पूजन-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(सोरठा)

पंचमेरु अभिराम, शोभे ढाई द्वीप में।
अस्सी श्री जिनधाम, अकृत्रिम अविकार हैं।।
जिनप्रतिमा सुखकार, इक इक में शत आठ हैं।
होवे जय जयकार, भाव सहित पूजा करूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छन्द - दिग्पाल)

लेऊँ प्रभु समकित जल, धुल जावे मिथ्यामल।
पंचमेरु असी मन्दिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शन-विजय-अचल-मंदर-विद्युन्मालीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीति-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

ले क्षमा भाव चन्दन, कर जिनवर का सुमिरन।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत का अभिमान तजूँ, अक्षत निज भाव भजूँ।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ले पुष्प शील के शुभ, नाशूँ प्रभु काम अशुभ।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

समता रस स्वादी बनूँ, दुर्दोष क्षुधादि हनूँ।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ज्ञान सु परकाशे, अज्ञान-तिमिर नाशे।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ध्येय रूप ध्याऊँ, दश धर्म सु महकाऊँ।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

विषमय विधि फल त्यागा, शिवफल में चित पागा।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले भाव अर्घ्य सुन्दर, निज विभाव लहूँ जिनवर।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

पंचमेरु के जिन भवन, पूजत हो आनन्द।
गाऊँ जयमाला सुखद, नशें कर्म के फन्द।।

(छन्द - पद्धरि)

जय पंचमेरु जग में महान, शाश्वत अकृत्रिम तीर्थ जान।
तीर्थंकर का जन्माभिषेक, इन्द्रादि करें उत्सव विशेष।।
जय प्रथम सुदर्शन मेरु सार, स्थित सु द्वीप जम्बू मँझार।
लख योजन उन्नत अति विशाल, शोभे भू पर वन भद्रशाल।।
ऊपर चढ़ पाँच शतक योजन, नंदन वन दीखे मनमोहन।
ऊँचा साढ़े बासठ सहस्र, योजन सोहे वन सौमनस।।
तहँ तैं छत्तीस सहस योजन, गिरि-शीश लसे शुभ पांडुक वन।
चारों दिशि के वन में सुन्दर, शोभें चैत्यालय श्री जिनवर।।
इक-इक में इक शत आठ लसे, जिनबिम्ब लखत दुर्मोह नशे।
ज्यों दर्पण में तन रूप लखे, त्यों आत्मस्वरूप प्रत्यक्ष दिखे।।
फिर विजय अचल धातकीखण्ड, पूरब पश्चिम दिशि अति उतंग।
मंदर विद्युन्माली सु नाम, पुष्कर में राजे अति ललाम।।

योजन चौरासी सहस उतंग, चारों मेरु सोहे अभंग।
तहँ सोलह सोलह चैत्यालय, मनहर सुखकर श्री जिन आलय।।
इन्द्रादिक सुर अरु विद्याधर, चारण ऋद्धिधारी मुनिवर।
प्रभु भाव वंदना करूँ सार, निज भाव माहिं मैं भी निहार।।
पूजूँ वंदूँ आनन्दित हो, तासों विधि बंधन खंडित हो।
भोगों की चित में दाह नहीं, इन्द्रादिक पद की चाह नहीं।।
अकृत्रिम शुद्धातम साधूँ, अविनाशी शिवपद आराधूँ।
अपना पद अपने में पाऊँ, चरणों में बलिहारी जाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्रीपंचमेरुसम्बन्ध्यशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

मंगलकर होवे सदा, जिन पूजा जग माहिं।
अपनो भाव सुधारि के, भवि निश्चय शिव पाहिं।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

सोलहकारण पूजन-1

(कविवर द्यानतरायजी कृत)

(अडिल्ल)

सोलह कारण भाय तीर्थंकर जे भये।
हरषे इन्द्र अपार मेरु पै ले गये।।
पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चावसौं।
हमहू षोडश कारन भावैं भावसौं।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतरन्तु अवतरन्तु संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठन्तु तिष्ठन्तु ठःठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भवन्तु भवन्तु वषट् सन्निधिकरणम्।

(चौपाई आँचलीबद्ध)

कंचन-झारी निरमल नीर, पूजों जिनवर गुण-गम्भीर।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर-पद-पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्धि-विनयसम्पन्नता-शीलव्रतेष्वनतिचार-अभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग-संवेग-शक्तितस्त्याग-तपः साधुसमाधि-वैयावृत्यकरण-अर्हद्-भक्ति-आचार्यभक्ति-बहुश्रुतभक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यकापरिहाणि-मार्गप्रभावना-प्रवचनवात्सल्येति तीर्थंकरत्व-कारणेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्री जिनवर के पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।दरश.।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुल धवल सुगंध अनूप, पूजौं जिनवर तिहुँ जग-भूप।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।दरश.।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

फूल सुगन्ध मधुप-गुंजार, पूजौं जिनवर जग-आधार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।दरश.।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्नेवज बहुविधि पकवान, पूजौं श्री जिनवर गुणखान।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद-पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक-ज्योति तिमिर छयकार, पूजूँ श्रीजिन केवलधार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।दरश.।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर कपूर गन्ध शुभ खेय, श्री जिनवर आगे महकेय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।दरश.।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल आदि बहुत फलसार, पूजौं जिन वांछित-दातार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।दरश.।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल आठों दरब चढ़ाय, 'द्यानत' वरत करों मन लाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।दरश.।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

षोडश कारण गुण करै, हरै चतुरगति-वास।
पाप-पुण्य सब नाश के, ज्ञान-भान परकाश।।

(चौपाई)

दरशविशुद्धि धरे जो कोई, ताको आवागमन न होई।
विनय महाधारै जो प्राणी, शिव-वनिता की सखी बखानी।।
शील सदा दृढ़ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै।
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं, ताके मोह-महातम नाहीं।।
जो संवेग-भाव विसतारै, सुरग-मुकति-पद आप निहारै।
दान देय मन हरष विशेखै, इह भव जस पर भव सुख देखै।।
जो तप तपै खपै अभिलाषा, चूरै करम-शिखर गुरु भाषा।
साधुसमाधि सदा मन लावै, तिहुँ जग भोग भोगि शिव जावै।।
निश-दिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भव-नीर तिरैया।
जो अरहंत भगति मन आनै, सो जन विषय-कषाय न जानै।।
जो आचारज-भगति करै है, सो निर्मल आचार धरै है।
बहु श्रुतवन्त-भगति जो करई, सो नर संपूरन श्रुत धरई।।
प्रवचन-भगति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानन्द-दाता।
षट् आवश्यक काल जो साधै, सो ही रत्नत्रय आराधै।।
धरम-प्रभाव करै जे ज्ञानी, तिन शिव-मारग रीति पिछानी।
वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थंकर पदवी पावै।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय।
देव-इन्द्र-नर-वंद्य-पद, 'द्यानत' शिव-पद होय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री सोलहकारण पूजन-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(छन्द-वीर)

भव-दुःख निवारण सोलहकारण, सहज भाव से नित भाऊँ।
आनन्दित हो उत्साहित हो, रत्नत्रय पथ पर मैं धाऊँ।।
जिन भायीं भावना मंगलमय, उनने तीर्थंकर पद पाया।
मैं पूजूँ धरि बहुमान हृदय में, धर्मतीर्थ शुभ प्रकटाया।।

(दोहा)

मैं भी भाऊँ चाव सों, निज अन्तर लौ लाय।
होवे धर्म प्रभावना, तिहुँ जग में सुखदाय।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणभावनासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणभावनासमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणभावनासमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छन्द - मानव)

धरि दर्शविशुद्धि सुखमय, निर्मल जल ले समतामय।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धि-विनयसम्पन्नता-शीलव्रतेष्वनतिचार-अभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग-संवेग-शक्तिस्त्याग-तपः-साधुसमाधि-वैयावृत्यकरण-अर्हद्भक्ति-आचार्यभक्ति-बहुश्रुतभक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यका-परिहाणि-मार्गप्रभावना-प्रवचनवत्सलत्वेति तीर्थंकरत्वकारणेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ धैर्यमयी ले चन्दन, जिन चरणों में कर वन्दन।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्य: संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

निस्तुष ज्ञानाक्षत धारूँ, क्षत विभव चाह परिहारूँ।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम शील प्रकटा कर, भावों के पुष्प चढ़ाकर।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज रसमय चरु ले आऊँ, दुर्दोष क्षुधादि नशाऊँ।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञान तिमिर क्षयकारी, ले ज्ञान-दीप अविकारी।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्याऊँ पद पाप निकन्दन, नाशें सब ही विधि बन्धन।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

फल भक्तिमयी सु चढ़ाऊँ, निर्वाण महाफल पाऊँ।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

ले अर्घ्य अनूपम सुखमय, लहुँ भाव-लीनता अक्षय।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुखहारी।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

इह विधि मंगलकार, पूजा करि आनन्द सौं।
सहज स्वरूप विचार, गाऊँ जयमाला सुखद।।

(छन्द-त्रोटक)

सम्यग्दर्शन निर्दोष होय, शंकादि दोष लागे न कोय।
रत्नत्रय प्रति नित विनय रहे, कब पूर्ण होय यह भाव रहे।।
निर्दोष शील वर्ते अखण्ड, परमार्थ लहूँ हो मोह खण्ड।
भाऊँ सु निरन्तर भेदज्ञान, जासों पाऊँ निज पद महान।।
हो धर्म धर्म फल में उछाह, उपजे न कदाचित् विषय दाह।
निजशक्ति सँभारि करूँ सुदान, त्यागूँ विभाव दुखकारि जान।।
शक्ति अनुसार धरूँ विचित्र, इच्छा निरोध जिन तप पवित्र।
साधु समाधि में करि सहाय, मैं भी समाधि लहूँ सुक्ख-दाय।।
हो तत्पर वैयावृत्ति माहिं, विचरूँ मैं भी शिवमार्ग माहिं।
अरहंत भक्ति धरि विषय टार, आराधूँ साधूँ स्वपद सार।।
आचार्यभक्ति होवे पवित्र, धारूँ निर्मल सम्यक् चरित्र।
वंदूँ बहु श्रुतधर उपाध्याय, लहुँ ज्ञान महान सु मुक्तिदाय।।
जिन प्रवचन की भक्ति अनूप, धरि ध्याऊँ अविकल चित्स्वरूप।
आवश्यक निश्चय अरु व्यवहार, हो सहज भाव से सुखकार।।
होवे प्रभावना मंगलमय, जिनधर्म धरें सब हों निर्भय।
धर्मी प्रति अति ही वात्सल्य, होवे सुखकारी अरु नि:शल्य।।

सोलहकारण आनन्दकार, तीर्थंकर पद की देन-हार।
निर्वांछक हो भाऊँ सु सार, ध्रुवतीर्थ रूप निजपद निहार।।

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्धियादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

सोलहकारण भावना, सब ही को सुखदाय।
पूजूँ भाऊँ भक्ति धरि, श्री जिनधर्म सहाय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

दशलक्षण धर्म पूजन-1

(कविवर द्यानतरायजी कृत)

(अनुष्टुप) **स्थापना** (संस्कृत)

उत्तमक्षान्तिकाद्यन्त-ब्रह्मचर्य-सुलक्षणम्।
स्थापय दशधा धर्ममुत्तमं जिनभाषितम्।।

(अडिल्ल) **स्थापना** (हिन्दी)

उत्तम क्षमा मारदव आरजव भाव हैं,
सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं।
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं,
चहुँगति-दुखतैं काढ़ि मुकति करतार हैं।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(सोरठा)

हेमाचल की धार, मुनि-चित-सम शीतल सुरभि।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयम-तपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र-समान शुभ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरध-लोकलों।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय कामबाणविनाशनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

नेवज विविध निहार, उत्तम षट्-रस-संजुगत।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

बाति कपूर सुधार, दीपक-ज्योति सुहावनी।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

फल की जाति अपार, घ्रान-नयन-मन-मोहने।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

आठों दरब सँवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसौं।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अंग-अर्घ्य

(सोरठा)

पीड़ैं दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करैं।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा।।
उत्तम छिमा गहो रे भाई! इह-भव जस, पर भव सुखदाई।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औगुन कहै अयानो।।
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बाँध मार बहुविधि करै।
घर तैं निकारै तन विदारै, वैर जो न तहाँ धरै।।
ते करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा।
अति क्रोध-अगनि बुझाय प्रानी, साम्य-जल ले सीयरा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान महाविषरूप, करहि नीच-गति जगत में।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा।।
उत्तम मार्दव गुन मन-माना, मान करन को कौन ठिकाना।
बस्यो निगोद माहिं तैं आया, दमरी रूँकन भाग बिकाया।।
रूँकन बिकाया भाग वशतैं, देव इक-इन्द्री भया।
उत्तम मुआ चाण्डाल हूवा, भूप कीड़ों में गया।।
जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करै जल-बुदबुदा।
करि विनय बहु-गुन बड़े जन की, ज्ञान का पावै उदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट न कीजै कोय, चोरन के पुर ना बसै।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु-सम्पदा।।

उत्तम आर्जव रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी।
मन में होय सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सौं करिये।।
करिये सरल तिहुँ जोग अपने देख निरमल आरसी।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट-प्रीति अँगार-सी।।
नहिं लहै लछमी अधिक छल करि, करम-बन्ध विशेषता।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तम-आर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देह सों।
शौच सदा निर्दोष, धरम बड़ो संसार में।।
उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना।
आशा-पास महा दुखदानी, सुख पावै सन्तोषी प्रानी।।
प्रानी सदा शुचि शील जप तप, ज्ञान ध्यान प्रभावतैं।
नित गंग जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि-दोष सुभावतैं।।
ऊपर अमल मल भर्‌यो भीतर कौन विधि घट शुचि कहै।
बहु देह मैली सुगुन-थैली, शौच-गुन साधू लहै।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कठिन वचन मति बोल, पर-निन्दा अरु झूठ तज।
साँच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी।।
उत्तम सत्य-बरत पालीजै, पर-विश्वासघात नहिं कीजै।
साँचे-झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो।।
पेखो तिहायत पुरुष साँचे को दरब सब दीजिये।
मुनिराज-श्रावक की प्रतिष्ठा, साँच गुण लख लीजिये।।
ऊँचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया।
वच झूठ सेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्रिय मन वश करो।
संजम-रतन सँभाल, विषय-चोर बहु फिरत हैं।।
उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजैं अघ तेरे।
सुरग-नरक-पशुगति में नाहीं, आलसहरन करन सुख ठाँहीं।।
ठाँहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो।।
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग-कीच में।
इक घरी मत बिसरो करो नित आयु जम-मुख बीच में।।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
तप चाहैं सुर-राय, करम-शिखर को वज्र है।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकतिसम।।
उत्तम तप सब माहिं बखाना, करम-शैल को वज्र-समाना।
बस्यो अनादि निगोद मँझारा, भू विकलत्रय पशु तन धारा।।
धारा मनुष तन महा दुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता।
श्री जैन-वानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता।।
अति महा दुरलभ त्याग विषय-कषाय जो तप आदरैं।
नर-भव अनूपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरैं।।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
दान चार परकार, चार संघ को दीजिए।
धन बिजुली उनहार, नर-भव लाहो लीजिए।।
उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा।
निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान सँभारै।।
दोनों सँभारै कूप-जल सम, दरब घर में परिनया।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया।।
धनि साधु शास्त्र अभय दिवैया, त्याग राग विरोध को।
बिन दान श्रावक साधु दोनों, लहैं नाहीं बोध को।।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराजजी।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए।।
उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिन्ता दुख ही मानो।
फाँस तनक-सी तन में सालै, चाह लँगोटी की दुख भालै।।
भालै न समता सुख कभी नर, बिना मुनि-मुद्रा धरैं।
धनि नगन पर तन-नगन ठाड़े, सुर-असुर पायनि परैं।।
घर माहिं तिसना जो घटावे, रुचि नहिं संसार सौं।
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर-उपगार सौं।।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शील-बाढ़ नौ राख, ब्रह्म-भाव अन्तर लखो।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नर-भव सदा।।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता बहिन सुता पहिचानौ।
सहैं बान-वरषा बहु सूरे, टिकै न नैन-बान लखि कूरे।।
कूरे तिया के अशुचि तन में, काम-रोगी रति करैं।
बहु मृतक सड़हिं मसान माहीं, काग ज्यों चोंचैं भरैं।।
संसार में विष-बेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरम दश पैड़ि चढ़ि कै, शिवमहल में पग धरा।।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(दोहा)

दश लच्छन वन्दौं सदा, मनवांछित फलदाय।
कहों आरती भारती, हम पर होहु सहाय।।

(चौपाई)

उत्तम छिमा जहाँ मन होई, अन्तर-बाहिर शत्रु न कोई।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासे, नाना भेद ज्ञान सब भासे।।

उत्तम आर्जव कपट मिटावे, दुरगति त्यागि सुगति उपजावे।
उत्तम शौच लोभ-परिहारी, सन्तोषी गुण-रतन भण्डारी।।
उत्तम सत्य-वचन मुख बोले, सो प्रानी संसार न डोले।
उत्तम संजम पाले ज्ञाता, नर-भव सफल करै, ले साता।।
उत्तम तप निरवांछित पाले, सो नर करम-शत्रु को टाले।
उत्तम त्याग करे जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई।।
उत्तम आकिंचन व्रत धारे, परम समाधि दशा विसतारे।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावे, नर-सुर सहित मुकति-फल पावे।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

करै करम की निरजरा, भव पींजरा विनाशि।
अजर अमर पद को लहैं, 'द्यानत' सुख की राशि।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री दशलक्षण धर्म पूजन-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(गीतिका)

उत्तम क्षमादिक धर्म आतम का सहज निज भाव है।
सुख शान्ति का है हेतु जग में, मुक्ति का सु उपाव है।।
है मूल सम्यग्दर्श, निज में लीनतामय ये धरम।
पूजूँ सु भाऊँ भावना, हो पूर्ण दशलक्षण धरम।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छन्द-रेखता)

सहज प्रासुक सु निर्मल जल, करो प्रक्षाल मिथ्यामल।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमा-मार्दव-आर्जव-शौच-सत्य-संयम-तप-त्याग-आकिंचन्यब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि.।

शान्त भावों का ले चन्दन, सहज भवताप निकंदन।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अखय पद कारणे अक्षय, आत्म-पद का करो आश्रय।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

सुमन श्रद्धा सजाओ सब, काम दुखमय नशाओ अब।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

परम सन्तोषमय नैवेद्य, क्षुधादिक का न हो कुछ खेद।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

उजारो ज्ञान का दीपक, महातम मोह का नाशक।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

अग्नि शोधक जले तप की, भस्म हो कर्म की प्रकृति।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि. स्वाहा।

नहीं फल पुण्य के चाहो, मोक्षफल भी सहज पाओ।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

समर्पित अर्घ्य अविकारी, होओ साक्षात् शिवचारी।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजो निज माहिं दृष्टि धर।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दश धर्मों के अर्घ्य

(चौपाई)

निज अन्तर्मुख दृष्टि होवे, परमानन्दमय वृत्ति होवे।
तहँ अनिष्ट भासे नहिं कोई, क्रोध बैर उत्पन्न न होई।।
उत्तम क्षमा सहज अविकारी, वर्ते निज पर को हितकारी।
तत्त्वाभ्यास करो मनमाहिं, पर का दोष लखो कछु नाहीं।।
जैसा कर्म उदय में आवे, वैसे ही संयोग सु पावे।
तातैं कर्म बंध के कारण, क्रोधादिक का करो निवारण।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदज्ञान करि देखो भाई! मिथ्या मान महा दुखदाई।
मानी के सब बैरी होवें, मानी को सब नीचा जोवें।।
जल ज्यों पत्थर में न समावे, त्यों मानी निज बोध न पावे।
स्वाभाविक निज प्रभुता देखो, ज्ञानी के जीवन को देखो।।
अध्रुव वस्तु का मान सु त्यागो, विनयवंत हो निज में पागो।
उत्तम मार्दव आनन्द दाता, पूजा धरो सहज हो ज्ञाता।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज सरल निज भाव पिछानो, गुप्त पाप को माया जानो।
नहीं छिपावो ताहि मिटावो, **उत्तम आर्जव** चित में लावो।।
क्यों समझे ठगता औरों को, पाप बंध कर ठगता निज को।
उत्तम जिनशासन को भजकर, दुखमय छल प्रपंच को तजकर।।

कोई बहाना नहीं बनाओ, रत्नत्रय पथ पर बढ़ जाओ।
सरल स्वभावी होकर भ्राता, उत्तम आर्जव पूजो ज्ञाता।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमआर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ लाभ का कारण नाहीं, व्यर्थ क्लेश करता मन माहीं।
लोभी विषयी महा मलीना, दर-दर ठोकर खावे दीना।।
ज्ञेय लुब्ध अज्ञानी प्राणी, स्वानुभूति बिन दुखी अज्ञानी।
जिन उपदेश भाग्य तें पाय, अनुभव रस में तृप्त रहाय।।
ध्याओ आतम परम पवित्रा, नाशे आस्रव अति अपवित्रा।
निर्लोभी हो पाप नशाय, **उत्तम शौच** जजो सुखदाय।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम सत्य धर्म परधाना, सत्य समझ बिन नहिं कल्याणा।
तीर्थ प्रवर्ते सत्य वचन से, होय प्रतिष्ठा सत्य धर्म से।।
सत्य धर्म सबको सुखदाई, झूठ दुःखमय दुर्गति दाई।
बोलो हित मित प्रिय सत् वयना, अथवा शान्त मौन ही रहना।
वस्तुस्वरूप यथार्थ पिछानो, करके स्वानुभूति श्रद्धानो।
तज परभाव रमो निज ही में, प्रकटे सत्य धर्म जीवन में।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो! अतीन्द्रिय आनन्द आवे, विषयों में नहिं चित्त भ्रमावे।
तज प्रमाद सब हिंसा टारी, होओ **उत्तम संयम** धारी।।
करि विचार देखो मन माहीं, भोगों में सुख किंचित् नाहीं।
हस्ति मीन अलि पतंग हिरन सम, विषयों में दुख लहें मूढ़जन।
हो विरक्त सब पाप नशावें, धरि संयम ज्ञानी सुख पावें।
उत्तम संयम शिव-पद दाता, पूजो भाओ धारो ज्ञाता।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप निज में ही हो विश्रान्त, इच्छाएँ हो जावें शान्त।
सब ही सुख की इच्छा करें, आत्मबोध बिन सुख नहिं लहें।।

ज्यों ज्यों भोग संयोग लहाय, आशा तृष्णा बढ़ती जाय।
इच्छा पूरी कबहुँ न होय, करो निरोध सहज तप होय।।
बारह भेद व्यवहार कहाय, निश्चय तप सब कर्म नशाय।
अपनी-अपनी शक्ति प्रमान, **उत्तम तप** धारो बुद्धिमान।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुखदायक विभाव सब त्याग, आत्मधर्म में धरि अनुराग।
चार प्रकार दान शुभ देय, त्रिविध पात्र को दे यश लेय।।
औषधि अभय आहार सु जान, ज्ञान-दान सबमें परधान।
ज्ञान बिना भ्रमता तिहुँ लोक, आत्मज्ञान से पावे मोक्ष।।
निज को निज पर को पर जान, ज्ञानमयी कर प्रत्याख्यान।
सर्व दान दे हो निर्ग्रन्थ, **उत्तम त्याग** धरे सो सन्त।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हूँ मैं एक शुद्ध चिन्मात्र, अन्य न मम परमाणु मात्र।
मोहादिक औपाधिक भाव, मेरे नहिं मैं ज्ञान स्वभाव।।
मैं स्वभाव से आनन्द रूप, द्विविध परिग्रह दु:ख स्वरूप।
परिग्रह त्याग आकिंचन्य धर्म, धारि मुनीश्वर नाशें कर्म।।
श्रावक भी परिमाण कराहिं, परिग्रह में किंचित् रुचि नाहिं।
यों **उत्तम आकिंचन** सार, पूजो धारो भव्य सँभार।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमआकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम ब्रह्मचर्य अविकार, पूजो धर्म शिरोमणि सार।
कामभाव दुर्गति को मूल, भव-भव में उपजावे शूल।।
लहे न चैन करे कृत निंद्य, कामासक्त बढ़ावे बंध।
तातैं शील बाढ़ नौ धार, अपनो ब्रह्म स्वरूप निहार।।
त्यागो दुखमय इन्द्रिय भोग, पाओ ज्ञानानन्द मनोग।
जयवन्तो ब्रह्मचर्य अनूप, धारे सो होवे शिव-भूप।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(दोहा)

मोह क्षोभ बिन परिणति, ही दशलक्षण धर्म।
भेदज्ञान करि धारिये, तजि क्रोधादि अधर्म।।

(तर्ज - हे दीन बन्धु श्री पति....)

दशलाक्षणीक धर्म सहज सुखकार है।
आनन्दमयी यह धर्म अहो! मुक्तिद्वार है।।
दशलाक्षणीक धर्म ही नाशे विकार है।
जिनवर प्रणीत धर्म करे भव से पार है।।
दशलाक्षणीक धर्म कल्पवृक्ष से अधिक।
समतामयी यह धर्म चिन्तामणि से है अधिक।।
दशलाक्षणीक धर्म धरे सहज ही ज्ञाता।
बिन याचना बिन कामना सब सुख प्रदाता।।
दशलाक्षणीक धर्म क्रोध मान से रहित।
मंगलमयी यह धर्म माया लोभ से रहित।।
ये ही सनातन धर्म सत्य रूप है पवित्र।
संयम स्वरूप अभय रूप भोगों से विरक्त।।
तप त्याग रूप धर्म ये आनन्द स्वरूप है।
परिग्रह प्रपंच शून्य, ब्रह्मचर्य रूप है।।
दशलाक्षणीक धर्म ज्ञानमय स्वभाव है।
वर्ते निजाश्रय से सहज मिटते विभाव हैं।।
दशलाक्षणीक धर्म मैत्री भाव का सेतु।
अहिंसामयी यह धर्म विश्व शान्ति का हेतु।।
आओ भजो यह धर्म तत्त्वज्ञान पूर्वक।
सब द्वन्द्व फन्द छोड़कर स्वलक्ष्य पूर्वक।।

यह धर्म है वस्तु स्वभाव सम्प्रदाय ना।
यह धर्म है अनादि-निधन भेदभाव ना।।
निष्काम भाव से सहज यह भावना वर्ते।
दशलाक्षणीक धर्म नित जयवन्त वर्ते।।

(छन्द-घत्ता)

दशलक्षणरूपं धर्म अनूपं, धरे परम आनन्द से।
दुर्भाव नशावे सब सुख पावे, छूटे भव दुख द्वन्द्व से।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्तमक्षमा-मार्दव-आर्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्त्याग-आकिंचन्य-ब्रह्मचर्येति-दशलक्षणधर्माय जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

दशलक्षण हैं धर्म के, धर्म नहीं दशरूप।
मोह क्षोभ बिन धर्म है, सहजहिं-साम्य स्वरूप।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

सम्यक् रत्नत्रयधर्म पूजन-1

(कविवर द्यानतरायजी कृत)

(दोहा)

चहुँगति-फनि-विष-हरन-मणि, दुख-पावक-जल-धार।
शिव-सुख-सुधा-सरोवरी, सम्यक्-त्रयी निहार।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(अष्टक-सोरठा)

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशर गारि, परिमल-महा-सुगन्धमय।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्दुल अमल चितार, वासमती-सुखदास के।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

महकैं फूल अपार, अलि गुंजैं ज्यों थुति करैं।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धयुत।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप-रतनमय सार, जोत प्रकाशै जगत में।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुवास विथार, चन्दन अगर कपूर की।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल शोभा अधिकार, लोंग छुहारे जायफल।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ दरब निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् दरशन ज्ञान, व्रत शिव मग-तीनों मयी।
पार उतारन यान, 'द्यानत' पूजों व्रत सहित।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन पूजन

(दोहा)

सिद्ध अष्ट-गुनमय प्रकट, मुक्त-जीव-सोपान।
ज्ञान चरित जिहँ बिन अफल, सम्यग्दर्श प्रधान।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनम् ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनम् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनम् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(सोरठा)

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप-ज्योति तम हार, घट-पट परकाशै महा।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिवफल करै।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

आप आप निहचै लखै, तत्त्व-प्रीति व्यवहार।
रहित दोष पच्चीस हैं, सहित अष्ट गुन सार।।

(चौपाई मिश्रित गीता)

सम्यक् दरशन-रतन गहीजे, जिन-वच में सन्देह न कीजै।
इह-भव-विभव-चाह दुखदानी, पर- भव भोग चहै मत प्रानी।।
प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरम गुरु प्रभु परखिये।
पर-दोष ढकिये धरम डिगते को, सुथिर कर हरखिये।।
चहुँ संघ को वात्सल्य कीजै, धरम की परभावना।
गुन आठसों गुन आठ लहिकैं, इहाँ फेर न आवना।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसहितपंचविंशतिदोषरहितसम्यग्दर्शनाय जयमालापूर्णार्घ्यं नि.।

सम्यग्ज्ञान पूजन

(दोहा)

पंच भेद जाके प्रकट, ज्ञेय-प्रकाशन भान।
मोह-तपन-हर-चन्द्रमा, सोई सम्यग्ज्ञान।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानम् ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानम् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानम् ! अत्र मम सन्निहितो, भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(सोरठा)

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप-जोति तम-हार, घट पट परकाशै महा।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल-फूल चरु।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

आप आप जानैं नियत, ग्रन्थ-पठन व्यवहार।
संशय-विभ्रम-मोह बिन, अष्ट अंग गुनकार।।

(चौपाई मिश्रित गीता)

सम्यग्ज्ञान-रतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया।
अच्छर शुद्ध अर्थ पहिचानो, अक्षर अरथ उभय संग जानो।।
जानो सुकाल-पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइए।
तप रीति गहि बहु मौन देकैं, विनय-गुन चित लाइए।।
ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान-दर्पन देखना।
इस ज्ञान ही सों भरत सीझा, और सब पट पेखना।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

सम्यक्चारित्र पूजन

(दोहा)

विषय-रोग औषध महा, दव-कषाय-जल-धार।
तीर्थंकर जाको धरै, सम्यक्चारित सार।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविध-सम्यक्चारित्रम् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविध-सम्यक्चारित्रम् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविध-सम्यक्चारित्रम् ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(सोरठा)

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

दीप-जोति तम-हार, घट-पट परकाशै महा।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर शिव-फल करै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

आप आप थिर नियत नय, तप संयम व्यवहार।
स्व-पर-दया दोनों लिये, तेरह विध दुखहार।।

(चौपाई मिश्रित गीता)

सम्यक्चारित्र-रतन सँभालौ, पाँच पाप तजि के व्रत पालौ।
पंच समिति त्रय गुप्ति गहीजै, नर-भव सफल करहु तन छीजै।।
छीजै सदा तन को जतन यह, एक संजम पालिए।
बहु रुल्यो नरक-निगोद माहीं, विषय-कषायनि टालिए।।
शुभ-करम जोग सुघाट आया, पार हो दिन जात है।
'द्यानत' धरम की नाव बैठो, शिव-पुरी कुशलात है।।

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(दोहा)

सम्यग्दरशन-ज्ञान-व्रत, इन बिन मुक्ति न होय।
अन्ध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दव लोय।।

(चौपाई)

जापै ध्यान सुथिर बन आवै, ताके करमबन्ध कट जावै।
तासों शिव-तिय प्रीति बढ़ावै, जो सम्यक्रत्नत्रय ध्यावै।।
ताकौ चहुँगति के दुख नाहीं, सो न परे भवसागर माहीं।
जनम-जरा-मृत दोष मिटावै, जो सम्यक्रत्नत्रय ध्यावै।।
सोई दश लच्छन को साधै, सो सोलहकारण आराधै।
सो परमातम पद उपजावै, जो सम्यक्रत्नत्रय ध्यावै।।
सोई शक्र-चक्रि-पद लेई, तीन लोक के सुख विलसेई।
सो रागादिक भाव बहावै, जो सम्यक् रत्नत्रय ध्यावै।।

सोई लोकालोक निहारे, परमानन्द दशा विसतारे।
आप तिरै और न तिरवावै, जो सम्यक् रत्नत्रय ध्यावै।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्राय समुच्चयजयमाला अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

एक स्वरूप-प्रकाश-निज, वचन कह्यो नहिं जाय।
तीन भेद व्योहार सब, 'द्यानत' को सुखदाय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री रत्नत्रय पूजन-2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(गीतिका)

दुखहरण मंगलकरण जग में, रत्नत्रय पहिचानिये।
परमार्थ अरु व्यवहार से, दो विधि निरूपण जानिये।।
शुद्धात्म रुचि अनुभूति अरु, आचरण निश्चय रत्नत्रय।
व्यवहार है बस निमित्त सहचर, नियत से हो कर्म क्षय।।
पूजूँ परम उल्लास से मैं, दृष्टि अन्तर धारिके।
भाऊँ स्वपद की भावना, जग द्वन्द्व फन्द निवारिके।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्रत्नत्रयधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्रत्नत्रयधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्रत्नत्रयधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(दोहा)

निर्मल सम्यक् नीर ले, मिथ्यामैल विडार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

चन्दन ले अनुभूति मय, भव आताप निवार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद के कारणे, अक्षय प्रभु उर धार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

परम ब्रह्म की भावना, निर्विकल्प उर धार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज रस से ही तृप्त हो, दोष क्षुधादि विडार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम ज्योति चैतन्यमय, हो जगमग सुखकार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धातम का ध्यान धरि, नाशूँ सर्व विकार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंचन कर चारित्र तरु, पाऊँ शिवपद सार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य अभेद सुभक्तिमय, परमानन्द दातार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्-रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सम्यग्दर्शन

(छन्द-वीर)

आतम दर्शन सम्यग्दर्शन, अहो! धर्म का मूल है।
हो नि:शंक धारूँ निज में ही, नाशे भव का शूल है।।
निर्वांछक हो ग्लानि त्यागूँ, रहूँ अमूढ़ सु सत्पथ में।
उपगूहन कर करूँ स्थितिकरण स्व-पर का शिवपथ में।।
करूँ सहज वात्सल्य धर्म की, मंगलमयी प्रभावना।
ये ही अष्ट अंग युत समकित, हो न कदापि विराधना।।

ॐ ह्रीं श्रीअष्टांगसहितपंचविंशतिदोषरहितसम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री सम्यग्ज्ञान

निज में निज का अनुभव होवे, निश्चय सम्यग्ज्ञान हो।
है निमित्त व्यवहार जिनागम, से हो तत्त्वज्ञान जो।।
शुद्ध उच्चारण सदा करूँ अरु, शुद्ध अर्थ अवधारूँ मैं।
उभय शुद्धि धरि योग्य काल में, ही स्वाध्याय सम्हारूँ मैं।।
सदा बढ़ाऊँ गुरु का गौरव, यथायोग्य बहुमान करूँ।
विनय पूर्वक संशयादि तजि, विकसित सम्यग्ज्ञान वरूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीअष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सम्यक्चारित्र

विषय-चाह की दाह शमित हो, सम्यक्चारित्र धारूँ मैं।
रत्न अमोलक दुर्लभ पाया, करि पुरुषार्थ सम्हारूँ मैं।।
स्व-पर दयामय तेरह भेद सु, निश्चय निज में लीनता।
त्यागूँ भोग परिग्रह दुखमय, जिनमें प्रतिक्षण दीनता।।
हो स्वाधीन करूँ शिव-साधन, जासों निज पद पावना।
लोक शिखर पर सहज विराजूँ, फेरि न भव में आवना।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(सोरठा)

सम्यग्दर्शन ज्ञान, अरु चारित्र की एकता।
ये ही पथ निर्वाण, निश्चय आत्मस्वरूप है।।
महिमा अपरम्पार, वचन अगोचर ज्ञानमय।
वन्दूँ बारम्बार, गाऊँ जयमाला सुखद।।

(छन्द-पद्धरि)

सम्यक् रत्नत्रय आत्मरूप, सम्यक् रत्नत्रय शिव स्वरूप।
सम्यक् रत्नत्रय त्रिजगसार, इस ही से हो भव-सिन्धु पार।।
सम्यक् रत्नत्रय ज्योतिरूप, नहिं रहे लेश तम मोह रूप।
निज रत्नत्रयमय शुद्ध भाव, प्रकटें विघटें दुखमय विभाव।।
सम्यक् रत्नत्रय हित उपाय, चिर विधि बन्धन सहजहिं नशाय।
ये ही भविजन को परम श्रेय, प्रकटाने योग्य सु उपादेय।।
धनि धनि रत्नत्रय धरूँ सार, त्रैलोक्य पूज्य निज पद निहार।
अशरण जग में हैं शरणभूत, जिनवचन कहा सत्यार्थ रूप।।
ताके सुयत्न है भेदज्ञान, श्रीदेव-शास्त्र-गुरु निमित्त जान।
जिनकथित तत्त्व का हो अभ्यास, हो स्वानुभूति लीला विलास।।
हो उदित सहज सम्यक्त्व सूर्य, रागादि विजय को बजे तूर्य।
वर्ते निर्मल उत्तम विचार, वैराग्य भावना बढ़े सार।।
आरम्भ परिग्रह पाप मूल, निर्ग्रन्थ होय छोड़े समूल।
आनन्द वीर रस रह्यो छाय, तड़ तड़ तड़ विधि बन्धन नशाय।।
ध्याऊँ स्वरूप श्रेणी चढ़ाय, निर्मुक्त परम पद सहज पाय।
ऐसी महिमा मन में सुभाय, पूजूँ रत्नत्रय मुक्ति-दाय।।

(छन्द-घत्ता)

रत्नत्रयरूपं, आत्मस्वरूपं, मंगलमय मंगलकारी।
साक्षात् सु पाऊँ, थिर हो जाऊँ, निजपद पाऊँ अविकारी।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये समुच्चय-जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पढ़ें सुनें चिन्तें अहो, पूजें धरि उर चाव।
निश्चय शिवपद वे लहें, नाशें सर्व विभाव।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री क्षमावाणी पूजन-1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(वीरछन्द)

महा हर्ष से पूजा करता, क्षमामयी परमागम की।
अन्तर्मुख हो करूँ भावना, क्षमास्वभावी आतम की।।
शुद्धातम अनुभूति होते, ऐसी तृप्ति प्रकटाती।
क्रोधादिक दुर्भावों की सब, सन्तति तत्क्षण विनशाती।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(वीरछन्द)

जिनवर का स्मरणमयी जल, मिथ्या-मैल नशाता है।
सम्यक् भाव प्रकट होते ही, मुक्ति-द्वार खुल जाता है।।
उत्तम क्षमा हृदय में वर्ते, सहज सदा ही ज्ञानमयी।
मोह क्षोभ बिन शुद्ध परिणति, रहे प्रभो! वैराग्यमयी।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भाव स्तवनमय चन्दन ही, भवाताप विनशाता है।
शीतल होती सहज परिणति, चित्त न फिर भटकाता है।।
उत्तम क्षमा हृदय में वर्ते, सहज सदा ही ज्ञानमयी।
मोह-क्षोभ बिन शुद्ध परिणति, रहे प्रभो! वैराग्यमयी।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय वैभव अक्षय प्रभुता, अंतर माहिं दिखाती है।
जिनवर-सम ही क्षतभावों से, सहज विरक्ति आती है।। उत्तम.।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

समयसारमय सहज परिणति, नियमसार हो जाती है।
काम-वासना उस आनन्द से, सहजपने विनशाती है।। उत्तम.।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभो! आपके सन्मुख होते, ऐसी तृप्ति होती है।
नहिं भोगों की भूख सताती, अद्भुत तृप्ति होती है।। उत्तम.।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्ज्ञान प्रकट होते ही, सिद्ध-समान स्वभाव दिखे।
अनेकान्तमय तत्त्व दिखाता, मोह-महातम सहज नशे।। उत्तम.।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदज्ञान की चिनगारी, वैराग्य भाव से सुलगाती।
ध्यान-अग्नि से सहजपने ही, कर्मकालिमा जल जाती।। उत्तम.।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मलाभ से विषय-सुखों का, लोभ सहज मिट जाता है।
आत्मलीनता से बिन चाहे, मोक्ष महाफल आता है।। उत्तम.।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्तिभाव से अर्घ्य चढ़ाऊँ, निज-अनर्घ्यपद पाने को।
पूजा करते भाव उमगता, निज में ही रम जाने को।। उत्तम.।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

जयमाला गाते हुए, यही भाव सुखकार।
दसलक्षणमय धर्म की, गूँजे जय-जयकार।।

(चौपाई)

सम्यग्दर्शन ज्ञान सहित, चारित्र होय रागादि रहित।
मम यही भावना हे जिनवर! सफल होय मेरी सत्वर।।
द्रव्य भाव से स्तुति कर, मैं भी अन्तर्मुख होकर।
अहो! आत्म में निज-पर की, करूँ स्थापना सिद्धों की।।
द्रव्यदृष्टि से सिद्ध-समान, देखूँ सबको ही भगवान।
भिन्न लखूँ औपाधिक भाव, सहज निवारूँ ज्ञायक भाव।।
होय मंगलाचरण तभी, परिणति ज्ञानानन्दमयी।
भासे जिनशासन का मर्म, सहज प्रकट हो आतम धर्म।।
परम साध्य का हो पुरुषार्थ, समय-समय भाऊँ परमार्थ।
दिखे न पर में इष्ट अनिष्ट, नशें सहज क्रोधादिक दुष्ट।।
सहज अहेतुक अरु स्वाधीन, नहीं परिणमन पर-आधीन।
कोई किसी का कर्ता नहीं, कहा जिनेश्वर आगम माहिं।।
ज्ञानदृष्टि से सहज दिखाय, परमानन्द अहो उपजाय।
होय निःशंकित अरु निरपेक्ष, ग्लानि मन में रहे न लेश।।
हो निर्मूढ़ लगें निज माहिं, पर का दोष दिखे कुछ नाहिं।
निजपरिणति निज माहिं लगाय, परमप्रीति धर धर्म दिपाय।।
संशय विभ्रम और विमोह, दोष ज्ञान में रहे न कोय।
शुद्ध ज्ञान वर्ते निज माहिं, अष्ट अंग सहजहिं विलसाहिं।।

पर से हो विरक्ति सुखदाय, संयम का पुरुषार्थ बढ़ाय।
विषयारम्भ परिग्रह टार, व्रत समिति गुप्ति उर धार।।
हो निर्ग्रन्थ रमें निजमाहिं, बाहर की किंचित् सुधि नाहिं।
शुक्लध्यान से कर्म नशाय, अविनाशी शिवपद प्रकटाय।।
यही भावना मन में धार, करके उत्तम तत्त्व विचार।
क्षमा भाव सबके प्रति लाय, सब जीवों से क्षमा कराय।।
अन्तर बाहर, हो निर्ग्रन्थ, अपनाऊँ जिनवर का पंथ।
जिनशासन वर्ते जयवन्त, रत्नत्रय वर्ते जयवन्त।।
क्षमाभाव अन्तर न समाय, वचनों में भी प्रकटे आय।
सहज सदा वर्ते वात्सल्य, परिणति होवे सहज निःशल्य।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

दोष दृष्टि को छोड़कर, गुण-ग्रहण का भाव।
रहे सदा ही चित्त में, ध्याऊँ सहज स्वभाव।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री क्षमावाणी पूजन-2

(कवि राजमलजी पवैया कृत)

(स्थापना)

(छन्द-ताटंक)

क्षमावाणी का पर्व सुपावन देता जीवों को संदेश।
उत्तम क्षमाधर्म को धारो जो अति भव्य जीव का वेश।।
मोह-नींद से जागो चेतन अब त्यागो मिथ्याभिनिवेश।
द्रव्यदृष्टि बन निजस्वभाव से चलो शीघ्र सिद्धों के देश।।

क्षमा, मार्दव, आर्जव, संयम, शौच, सत्य को अपनाओ।
त्याग, तपस्या, आकिंचन, व्रत ब्रह्मचर्यमय हो जाओ।।
एक धर्म का सार यही है समतामय ही बन जाओ।
सब जीवों पर क्षमाभाव रख स्वयं क्षमामय हो जाओ।।

क्षमा धर्म की महिमा अनुपम क्षमा धर्म ही जग में सार।
तीन लोक में गूँज रही है क्षमावाणी की जय-जयकार।।
ज्ञाता-द्रष्टा हो समग्र को देखो उत्तम निर्मल भेष।
रागों से विरक्त हो जाओ रहे न दुख का किंचित् लेश।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जीवादिक नव तत्त्वों का श्रद्धान यही सम्यक्त्व प्रथम।
इनका ज्ञान ज्ञान है, रागादिक का त्याग चरित्र परम।।
'संते पुव्वणिबद्धं जाणदि'[1] वह अबंध का ज्ञाता है।
सम्यग्दृष्टि जीव आस्रव बंधरहित हो जाता है।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म-मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वभाव को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त भयों से रहित निशंकित निजस्वभाव में सम्यग्दृष्टि।
मिथ्यात्वादिक भावों में जो रहता वह है मिथ्यादृष्टि।।
तीन मूढ़ता छह अनायतन तीन शल्य का नाम नहीं।
आठ दोष समकित के अरु आठों मद का कुछ काम नहीं।। उत्तम. ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ कर्म जाना कुशील शुभ को सुशील मानता अरे।
जो संसार बंध का कारण वह कुशील जानता न रे।।

1. सत्ता में रहे हुए पूर्वबद्ध कर्मों को जानता है। - समयसार, गाथा 166

कर्म फलों के प्रति जिनकी आकांक्षा उर में रही नहीं।
वह निःकांक्षित सम्यग्दृष्टी भव की वांछा रही नहीं।।उत्तम. ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

राग शुभाशुभ दोनों ही संसार भ्रमण का कारण है।
शुद्धभाव ही एकमात्र परमार्थ भवोदधि तारण है।।
वस्तु स्वभाव धर्म के प्रति जो लेश जुगुप्सा करे नहीं।
निर्विचिकित्सक जीव वही है निश्चय सम्यग्दृष्टि वही।।उत्तम. ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध आत्मा जो ध्याता वह पूर्ण शुद्धता पाता है।
जो अशुद्ध को ध्याता है वह ही अशुद्धता पाता है।।
पर भावों में जो न मूढ़ है दृष्टि यथार्थ सदा जिसकी।
वह अमूढ़दृष्टि का धारी सम्यग्दृष्टि सदा उसकी।।उत्तम. ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग-द्वेष मोहादिक आस्रव ज्ञानी को होते न कभी।
ज्ञाता-द्रष्टा को ही होते उत्तम संवर भाव सभी।।
शुद्धातम की भक्ति सहित जो पर भावों से नहीं जुड़ा।
उपगूहन का अधिकारी है सम्यग्दृष्टि महान बड़ा।।उत्तम. ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म बन्ध के चारों कारण मिथ्या अविरति योग कषाय।
चेतयिता इनका छेदन कर, करता है निर्वाण उपाय।।
जो उन्मार्ग छोड़कर निज को निज में सुस्थापित करता।
स्थितिकरण युक्त होता वह सम्यग्दृष्टि स्वहित करता।।उत्तम. ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्य-पापमय सभी शुभाशुभ योगों से रहता वह दूर।
सर्व संग से रहित हुआ वह दर्शन ज्ञानमयी सुख पूर।।

सम्यग्दर्शन ज्ञान चरितधारी के प्रति गौ-वत्सल भाव।
वात्सल्य का धारी सम्यग्दृष्टि मिटाता पूर्ण विभाव।।
उत्तम क्षमा धर्म उर धारूँ जन्म-मरण क्षय कर मानूँ।
परद्रव्यों से दृष्टि हटाऊँ निज स्वभाव को पहचानूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान-विहीन कभी भी पलभर ज्ञानस्वरूप नहीं होता।
बिना ज्ञान के ग्रहण किए कर्मों से मुक्त नहीं होता।।
विद्यारूपी रथ पर चढ़ जो ज्ञान-रूप रथ चलवाता।
वह जिन-शासन की प्रभावना करता शिवपथ दर्शाता।।उत्तम.।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

उत्तम क्षमा स्वधर्म को, वन्दन करूँ त्रिकाल।
नाश दोष पच्चीस कर, काटूँ भव जंजाल।।

(ताटंक)

सोलहकारण पुष्पांजलि दशलक्षण रत्नत्रय व्रत पूर्ण।
इनके सम्यक् पालन से हो जाते हैं वसुकर्म विचूर्ण।।
भाद्र मास में सोलहकारण तीस दिवस तक होते हैं।
शुक्ल पक्ष में दशलक्षण पंचम से दस दिन होते हैं।।

पुष्पांजलि दिन पाँच पंचमी से नवमी तक होते हैं।
पावन रत्नत्रयव्रत अन्तिम तीन दिवस के होते हैं।।
आश्विन कृष्णा एकम् उत्सव क्षमावाणी का होता है।
उत्तमक्षमा धार उर श्रावक मोक्षमार्ग को जोता है।।

भाद्र मास अरु माघ मास अरु चैत्र मास में आते हैं।
तीन बार आ पर्वराज जिनवर संदेश सुनाते हैं।।

'जीवे कम्मं बद्धं पुट्ठं'[1] यह तो है व्यवहार कथन।
है अबद्ध-अस्पृष्ट कर्म से निश्चय नय का यही कथन।।

जीव-देह को एक बताना यह है नय व्यवहार अरे।
जीव देह तो पृथक्-पृथक् हैं निश्चय नय कह रहा अरे।।
निश्चय नय का विषय छोड़ व्यवहार माहिं करते वर्तन।
उनको मोक्ष नहीं हो सकता और न ही सम्यग्दर्शन।।

'दोण्हवि णयाण भणियं जाणई'[2] जो पक्षातिक्रांत होता।
चित्स्वरूप का अनुभव करता सकल कर्म-मल को खोता।।
ज्ञानी ज्ञान-स्वरूप छोड़कर जब अज्ञान रूप होता।
तब अज्ञानी कहलाता है पुद्गल बन्ध रूप होता।।

'जह विस भुव भुज्जंतो वेज्जो'[3] मरण नहीं पा सकता है।
ज्ञानी पुद्गल कर्म उदय को भोगे बन्ध न करता है।।
मुनि अथवा गृहस्थ कोई भी मोक्षमार्ग है कभी नहीं।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित ही मोक्षमार्ग है सही-सही।।

मुनि अथवा गृहस्थ के लिंगों में जो ममता करता है।
मोक्षमार्ग तो बहुत दूर भव-अटवी में ही भ्रमता है।।
प्रतिक्रमण प्रतिसरण आदि आठों प्रकार के विषकुम्भ।
इनसे जो विपरीत वही हैं मोक्षमार्ग के अमृतकुम्भ।।

पुण्य भाव की भी तो इच्छा ज्ञानी कभी नहीं करता।
परभावों से अरति सदा है निज का ही कर्ता धर्ता।।
कोई कर्म किसी जीव को सुख-दुख दाता नहीं समर्थ।
जीव स्वयं ही अपने सुख-दुख का निर्माता स्वयं समर्थ।।

---

1. जीव कर्म से बँधा है तथा स्पर्शित है। - समयसार, गाथा 141
2. दोनों ही नयों के कथन मात्र को जानता है। - समयसार, गाथा 143
3. जिस प्रकार वैद्य पुरुष विष को भोगता, खाता हुआ भी। - समयसार, गाथा 194

क्रोध, मान, माया, लोभादिक नहीं जीव के किंचित् मात्र।
रूप, गंध, रस, स्पर्श शब्द भी नहीं जीव के किंचित् मात्र।।
देह संहनन संस्थान भी नहीं जीव के किंचित् मात्र।
राग-द्वेष-मोहादि भाव भी नहीं जीव के किंचित् मात्र।।

सर्वभाव से भिन्न त्रिकाली पूर्ण ज्ञानमय ज्ञायक मात्र।
नित्य, ध्रौव्य, चिद्रूप, निरंजन, दर्शनज्ञानमयी चिन्मात्र।।
वाक्-जाल में जो उलझे वह कभी सुलझ ना पायेंगे।
निज अनुभव रसपान किये बिन नहीं मोक्ष में जायेंगे।।

अनुभव ही तो शिवसमुद्र है अनुभव शाश्वत सुख का स्रोत।
अनुभव परम सत्य शिव सुन्दर अनुभव शिव से ओतप्रोत।।
निज स्वभाव के सन्मुख हो जा, पर से दृष्टि हटा भगवान।
पूर्ण सिद्ध पर्याय प्रकट कर आज अभी पा ले निर्वाण।।

ज्ञान-चेतना सिंधु स्वयं तू स्वयं अनन्त गुणों का भूप।
त्रिभुवन-पति सर्वज्ञ ज्योतिमय चिन्तामणि चेतन चिद्रूप।।
यह उपदेश श्रवण कर हे प्रभु! मैत्री भाव हृदय धारूँ।
जो विपरीत वृत्ति वाले हैं उन पर मैं समता धारूँ।।

धीरे-धीरे पाप-पुण्य शुभ-अशुभ आस्रव संहारूँ।
भव-तन भोगों से विरक्त हो निजस्वभाव को स्वीकारूँ।।
दश धर्मों को पढ़ सुनकर अन्तर में आये परिवर्तन।
व्रत उपवास तपादिक द्वारा करूँ सदा ही निज चिंतन।।

राग-द्वेष अभिमान पाप हर काम क्रोध को चूर करूँ।
जो संकल्प-विकल्प उठे प्रभु उनको क्षण-क्षण दूर करूँ।।
अणु भर भी यदि राग रहेगा नहीं मोक्ष पद पाऊँगा।
तीन लोक में काल अनन्ता राग लिये भरमाऊँगा।।

राग शुभाशुभ के विनाश से वीतराग बन जाऊँगा।
शुद्धात्मानुभूति के द्वारा स्वयं सिद्ध पद पाऊँगा।।
पर्यूषण में दूषण त्यागूँ बाह्य क्रिया में रमे न मन।
शिव-पथ का अनुसरण करूँ मैं बन के नाथ सिद्ध नन्दन।।

जीव मात्र पर क्षमा भाव रख मैं व्यवहार धर्म पालूँ।
निज शुद्धातम पर करुणा कर निश्चय धर्म सहज पालूँ।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

मोक्ष-मार्ग दर्शा रहा, क्षमावाणी का पर्व।
क्षमाभाव धारण करो, राग-द्वेष हर सर्व।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री अक्षय तृतीया पर्व पूजन-1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(दोहा)

कर्मभूमि की आदि में ऋषभ मुनि अविकार।
नृप श्रेयांस दिया प्रथम इक्षु रस आहार।।
दान-तीर्थ का प्रवर्तन, हुआ सु मंगलकार।
अक्षय तृतीया का दिवस, पूजें प्रभु सुखकार।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छन्द - अवतार)

मिथ्यामल नाशक नीर, सम्यक् सुखकारी।
ले तुम समीप हे देव, नित मंगलकारी।।

पूजें हम ऋषभ मुनीश, हो युक्ताहारी।
साक्षात् अनाहारी, हो शिवमगचारी।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

क्रोधानल नाशक नाथ, चन्दन क्षमामयी।
पाया तुम-सम सुखकार, ज्ञायक ज्ञानमयी।।
पूजें हम ऋषभ मुनीश, हो युक्ताहारी।
साक्षात् अनाहारी, हो शिवमगचारी।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षत वैभव सुखकार, अन्तर माहिं लखा।
क्षत विक्षत विभव असार, भासा मोह नसा।।पूजें हम...।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम भावना देव, जागी हितकारी।
परमार्थ भक्ति से काम, नाशे दुखकारी।।पूजें हम...।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय काम-बाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हो निज से निज में तृप्त, वह विधि सिखलाई।
कैसे गावें उपकार, शाश्वत निधि पाई।।पूजें हम...।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् प्रकाश में नाथ, शिवपथ दिखलाया।
हम रहें आपके साथ, ये ही मन भाया।।पूजें हम...।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्कर्म निरामय देव, अन्तर में पाया।
ध्यावें नाशें सब कर्म, ये ही मन भाया।।पूजें हम...।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल पुण्य-पाप के नाथ, भोगे दुखकारी।
अब मुक्ति महाफल देव, पावें अविकारी।।पूजें हम...।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले उत्तम अर्घ्य मुनीश, अति ही हर्षावें।
चरणों में नावें शीश, ध्रुव प्रभुता पावें।।पूजें हम...।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

जयमाला गावें सुखद, मन में धरि उल्लास।
यही भावना है प्रभो! रहें आपके पास।।

(वीरछन्द)

दीक्षा लेकर ऋषभ मुनीश्वर, छह महीने उपवास किया।
फिर आहार-निमित्त ऋषीश्वर, जगह-जगह परिभ्रमण किया।।
कोई हाथी-घोड़े-वस्त्राभूषण, रत्नों के भर थाल।
ले सन्मुख आदर से आवें, देख साधु लौटें तत्काल।।

नहिं जानें आहार-विधि, इससे सब ही लाचार हुए।
अन्तराय का उदय रहा, तेरह महीने नौ दिवस हुए।।
धन्य मुनीश्वर, धन्य आत्मबल, आकुलता का लेश नहीं।
तृप्त स्वयं में मग्न स्वयं में, किंचित् भी संक्लेश नहीं।।

उदय नहीं हो दुख का कारण, यदि स्वभाव का आश्रय हो।
निज से च्युत हो दुखी रहे, तो फिर उपचार उदय पर हो।।
दोष देखना किन्तु उदय का, कही अनीति जिनागम में।
उदय उदय में ही रहता है, नहीं प्रविष्ट हो आतम में।।

भेदज्ञान कर द्रव्यदृष्टि धर, स्वयं स्वयं में मग्न रहो।
स्वाश्रय से ही शान्ति मिलेगी, आकुलता नहिं व्यर्थ करो।।
अशरण जग में अरे आत्मन्! नहीं कोई हो अवलम्बन।
तजकर झूठी आस पराई, अपने प्रभु का करो भजन।।

इन्द्रादिक-से सेवक चक्री, कामदेव-से सुत जिनके।
देखो एक समय पहले भी, नहीं आहार मिले उनके।।
हुई योग्यता सहजपने ही, सर्व निमित्त मिले तत्क्षण।
मंगल सपनों का फल सुनकर, नृप श्रेयांस थे हर्ष-मगन।।

देखा आते ऋषभ मुनि को, जातिस्मरण हुआ सुखकार।
नवधा भक्ति पूर्वक नृप ने, दिया इक्षु-रस का आहार।।
पंचाश्चर्य किये देवों ने, रत्न पुष्प थे बरसाए।
पवन सुगन्धित शीतल चलती, जय जय से नभ गुंजाए।।

धन्य पात्र है! धन्य है दाता! धन्य दिवस! धनि है आहार!
दान-तीर्थ का हुआ प्रवर्तन, घर-घर होवें मंगलाचार।।
तिथि वैशाख सुदी तृतीया थी, अक्षय तृतीया पर्व चला।
आदीश्वर की स्तुति करते, सहजहि मुक्ति-मार्ग मिला।।

ऋषभदेव-सम रहे धीरता, आराधन निर्विघ्न खिले।
नहीं मिले भोजन तक फिर भी, आराधन से नहीं चले।।
थकित हुआ हूँ भव-भोगों से, लेश मात्र नहिं सुख पाया।
हो निराश सब जग से स्वामिन्! चरण-शरण में हूँ आया।।

यही भावना स्वयं स्वयं में, तृप्त रहूँ प्रभु तुष्ट रहूँ।
ध्येय रूप निज पद को ध्याते, ध्याते शिवपद प्रकट करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

(दोहा)

ज्ञाता हो दाता बनें, रंच न हो अभिमान।
धर्म तीर्थ जयवन्त हो, उत्तम त्याग महान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

अक्षय तृतीया पर्व पूजन-2

(श्री राजमलजी पवैया कृत)

(ताटंक)

अक्षय तृतीया पर्व दान का, ऋषभदेव ने दान लिया।
नृप श्रेयांस दान-दाता थे, जगती ने यशगान किया।।
अहो! दान की महिमा, तीर्थंकर भी लेते हाथ पसार।
होते पंचाश्चर्य पुण्य का, भरता है अपूर्व भण्डार।।

मोक्षमार्ग के महाव्रती को, भावसहित जो देते दान।
निजस्वरूप जप वह पाते हैं, निश्चित शाश्वत पद निर्वाण।।
दान-तीर्थ के कर्ता नृप श्रेयांस हुए प्रभु के गणधर।
मोक्ष प्राप्त कर सिद्ध लोक में, पाया शिवपद अविनश्वर।।

प्रथम जिनेश्वर आदिनाथ प्रभु! तुम्हें नमन हो बारम्बार।
गिरि कैलाश शिखर से तुमने, लिया सिद्धपद मंगलकार।।
नाथ! आपके चरणाम्बुज में, श्रद्धा सहित प्रणाम करूँ।
त्याग धर्म की महिमा पाऊँ, मैं सिद्धों का धाम वरूँ।
शुभ वैशाख शुक्ल तृतिया का, दिवस पवित्र महान हुआ।
दान धर्म की जय-जय गूँजी, अक्षय पर्व प्रधान हुआ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीरछन्द)

कर्मोदय से प्रेरित होकर, विषयों का व्यापार किया।
उपादेय को भूल हेय तत्त्वों से मैंने प्यार किया।।
जन्म-मरण दुख नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।टेक।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

मन-वच-काया की चंचलता, कर्म आस्रव करती है।
चार कषायों की छलना ही, भवसागर दुख भरती है।।
भवाताप के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय विषयों के सुख क्षणभंगुर, विद्युत-सम चमक अथिर।
पुण्य-क्षीण होते ही आते, महा असाता के दिन फिर।।
पद अखण्ड की प्राप्ति हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शील विनय व्रत तप धारण, करके भी यदि परमार्थ नहीं।
बाह्य क्रियाओं में उलझे तो, वह सच्चा पुरुषार्थ नहीं।।
काम-बाण के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामिति स्वाहा।

विषय लोलुपी भोगों की, ज्वाला में जल-जल दुख पाता।
मृग-तृष्णा के पीछे पागल, नर्क-निगोदादिक जाता।।
क्षुधा व्याधि के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान-स्वरूप आत्मा का, जिसको श्रद्धान नहीं होता।
भव-वन में ही भटका करता, है निर्वाण नहीं होता।।
मोह-तिमिर के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म फलों का वेदन करके, सुखी दुखी जो होता है।
अष्ट प्रकार कर्म का बन्धन, सदा उसी को होता है।।
कर्म-शत्रु के नाश हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो बन्धन से विरक्त होकर, बन्धन का अभाव करता।
प्रज्ञा-छैनी ले बन्धन को, पृथक् शीघ्र निज से करता।।
महामोक्ष-फल प्राप्ति हेतु, मैं आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पर मेरा क्या कर सकता है, मैं पर का क्या कर सकता।
यह निश्चय करनेवाला ही, भव-अटवी के दुख हरता।।
पद अनर्घ्य की प्राप्ति हेतु मैं, आदिनाथ प्रभु को ध्याऊँ।
अक्षय-तृतीया पर्व दान का, नृप श्रेयांस सुयश गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

चार दान दो जगत में, जो चाहो कल्याण।
औषधि भोजन अभय अरु, सद् शास्त्रों का ज्ञान।।

(ताटंक)

पुण्य पर्व अक्षय तृतीया का, हमें दे रहा है यह ज्ञान।
दान धर्म की महिमा अनुपम, श्रेष्ठ दान दे बनो महान।।
दान धर्म की गौरव गाथा, का प्रतीक है यह त्योहार।
दान धर्म का शुभ प्रेरक है, सदा दान की जय-जयकार।।

आदिनाथ ने अर्ध वर्ष तक, किये तपस्या-मय उपवास।
मिली न विधि फिर अन्तराय, होते-होते बीते छह मास।।

मुनि आहारदान देने की, विधि थी नहीं किसी को ज्ञात।
मौन साधना में तन्मय हो, प्रभु विहार करते प्रख्यात।।

नगर हस्तिनापुर के अधिपति, सोम और श्रेयांस सुभ्रात।
ऋषभदेव के दर्शन कर, कृतकृत्य हुए पुलकित अभिजात।।

श्रेयांस को पूर्वजन्म का, स्मरण हुआ तत्क्षण विधिकार।
विधिपूर्वक पड़गाहा प्रभु को, दिया इक्षुरस का आहार।।

पंचाश्चर्य हुए प्रांगण में, हुआ गगन में जय-जयकार।
धन्य-धन्य श्रेयांस दान का, तीर्थ चलाया मंगलकार।।

दान-पुण्य की यह परम्परा, हुई जगत में शुभ प्रारम्भ।
हो निष्काम भावना सुन्दर, मन में लेश न हो कुछ दम्भ।।

चार भेद हैं दान धर्म के, औषधि-शास्त्र-अभय-आहार।
हम सुपात्र को योग्य दान दे, बनें जगत में परम उदार।।

धन वैभव तो नाशवान हैं, अतः करें जी-भर कर दान।
इस जीवन में दान कार्य कर, करें स्वयं अपना कल्याण।।

अक्षय तृतीया के महत्त्व को, यदि निज में प्रकटायेंगे।
निश्चित ऐसा दिन आयेगा, हम अक्षय-फल पायेंगे।।

हे प्रभु आदिनाथ! मंगलमय, हम को भी ऐसा वर दो।
सम्यग्ज्ञान महान सूर्य का, अन्तर में प्रकाश कर दो।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

अक्षय तृतीया पर्व की, महिमा अपरम्पार।
त्याग धर्म जो साधते, हो जाते भव-पार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री श्रुतपंचमी पूजन-1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(दोहा)

जिनश्रुत की पूजा करूँ, भक्तिभाव उर धार।
धन्य-धन्य श्रुतपंचमी, हुआ सुश्रुत अवतार।।
पुष्पदंत अरु भूतबलि, किया परम उपकार।
श्री षट्खण्डागम रचा, लिखा तत्त्व अविकार।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागम! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागम! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागम! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(रोला)

जिनवाणी गुण गाऊँ, प्रासुक जल ले आऊँ।
जन्म जरा मृत दोष नशाने, ध्रुव-पद ध्याऊँ।।
षट्खण्डागम आदि श्रुतों की पूजा करता।
निज-पर भेद-विज्ञान धार निज-दृष्टि धरता।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

चन्दन से पूजूँ अरु जिनश्रुत पढ़ूँ पढ़ाऊँ।
चन्दन-सम शीतल परिणति निज में प्रकटाऊँ।। षट्...।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

जिनवाणी के सन्मुख अक्षत शुद्ध चढ़ाऊँ।
अक्षय आत्म-स्वभाव सहज समझूँ समझाऊँ।। षट्...।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक पुष्पों से जिनश्रुत की पूज रचाऊँ।
काम-वासना मेटूँ, निर्मल शील सु पाऊँ।। षट्...।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

जिनश्रुत पाकर अनुभव रस में तृप्त रहूँ मैं।
कर अर्पण नैवेद्य क्षुधादिक दोष नशूँ मैं।।
षट्खण्डागम आदि श्रुतों की पूजा करता।
निज-पर भेद-विज्ञान धार निज-दृष्टि धरता।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

जिनवाणी उपकार हृदय से नहीं भुलाऊँ।
दीपक सम्यग्ज्ञान जलाकर मोह नशाऊँ।। षट्...।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

कर्मबन्ध से भिन्न आत्मा, नित ही ध्याऊँ।
तप की शोधक अग्नि जलाकर कर्म नशाऊँ।। षट्...।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी से सहज मुक्त आतम पहचानूँ।
निज में हो संतुष्ट कर्म-फल वांछा त्यागूँ।। षट्...।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-भावमय अर्घ्य चढ़ाकर श्रुत-गुण गाऊँ।
जिनवाणी की कर प्रभावना अति हर्षाऊँ।। षट्...।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

भ्रम-तम नाशनहार, स्याद्वादमय जैनश्रुत।
अभ्यासो अविकार, गुण गाऊँ आनन्द से।।

(मत्तसवैया)

श्रुतपरम्परा का ह्रास देख गुरुवर को सहज विकल्प हुआ।
जिनवाणी को लिपिबद्ध कराने का उनको शुभ भाव हुआ।।
तब श्री धरसेनाचार्य ऋषीश्वर दो मुनिवर बुलवाये थे।
अरु उनकी बुद्धि परखने को दो मंत्र सिद्ध करवाये थे।।

मंत्रों को देख अशुद्ध सहज ही संशोधन कर लीना था।
निष्कामभाव से सिद्ध किये फिर भी अभिमान न कीना था।।
प्रतिभा-सम्पन्न विनय संयुत मुनि देख ऋषीश्वर मुदित हुए।
शिक्षा देकर परिपक्व किया, आचार्य बना निश्चिन्त हुए।।
वे तो समाधि कर स्वर्ग गये, श्री पुष्पदन्त प्रारम्भ किया।
रच एक खण्ड श्री भूतबली स्वामी समीप था भेज दिया।।
श्री भूतबली ने शेष लिखा, यों षट्खण्डागम पूर्ण हुआ।
जेठ शुक्ल पंचमी दिवस जिनश्रुत का जय-जयकार हुआ।।
आचार्य श्री ने संघ सहित जिनश्रुत की पूजा करवाई।
जिन के समान ही जिनवाणी भी पूज्य तिहूँ जग में गाई।।
धवल जयधवल महाधवल टीकाएँ फिर तो लिखी गईं।
गोम्मटसार आदिक ग्रन्थों की फिर रचनाएँ सरल हुईं।।
यों परम्परा आगम की चलती रही आज भी हमें मिली।
श्री गुणधर कुन्दकुन्द आदिक से परम्परा अध्यात्म चली।।
दोनों धारायें अविकारी सुखमय, शिवमारग दरशातीं।
चारों अनुयोगमयी जिनवाणी, वीतरागता सिखलाती।।
है अनेकान्तमय वस्तु प्ररूपित, स्याद्वाद से सुखकारी।
निर्मल दृष्टि से देखो तो अनुयोग सभी हैं हितकारी।।
आदर्श बताता है हमको, प्रथमानुयोग आनन्दकारी।
उज्ज्वल आचरण सिखाता है, चरणानुयोग मंगलकारी।।
करणानुयोग परिणामों को, अरु लोक स्वरूप बताता है।
द्रव्यानुयोग सम्यक्त्व मूल, निज पर का भेद सिखाता है।।
अतएव करो अभ्यास भव्य, नित आगम अरु अध्यातम का।
हो हेयादेय विवेक सहज, श्रद्धान जगे शुद्धातम का।।

शुद्धातम का आराधन ही, अविनाशी शिवपद दाता है।
जिनवाणी तो है निमित्तभूत, फल परिणामों का आता है।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

माता-सम उपकारी श्री जिनवाणी है।
तरण-तारिणी नौका-सम जिनवाणी है।।
जो पूजें अभ्यासें, अन्तर-प्रीति से।
अल्प काल में छूटें, भव की रीति से।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्रुतपंचमी पूजन-2

(श्री राजमलजी पवैया कृत)

स्याद्वादमय द्वादशांग-युत माँ जिनवाणी कल्याणी।
जो भी शरण हृदय से लेता हो जाता केवलज्ञानी।।
जय जय जय हितकारी शिवसुखकारी माता जय जय जय।
कृपा तुम्हारी से ही होता भेदज्ञान का सूर्य उदय।।
श्री धरसेनाचार्य कृपा से मिला परम जिनश्रुत का ज्ञान।
भूतबली मुनि पुष्पदन्त ने षट्खण्डागम रचा महान।।
अंकलेश्वर में ग्रंथराज यह पूर्ण हुआ था आज के दिन।
जिनवाणी लिपिबद्ध हुई थी पावन परम आज के दिन।।
ज्येष्ठशुक्ल पंचमी दिवस जिनश्रुत का जय-जयकार हुआ।
श्रुतपंचमी पर्व पर श्री जिनवाणी का अवतार हुआ।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

शुद्ध स्वानुभव जल धारा से यह जीवन पवित्र कर लूँ।
साम्यभाव पीयूष पान कर जन्म-जरामय दुख हर लूँ।।
श्रुतपंचमी पर्व शुभ उत्तम जिन श्रुत को वंदन कर लूँ।
षट्खण्डागम धवल जयधवल महाधवल पूजन कर लूँ।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव का उत्तम पावन चन्दन चर्चित कर लूँ।
भव दावानल के ज्वालामय अघ-संताप ताप हर लूँ।।श्रुत.।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव के परमोत्तम अक्षत शुद्ध हृदय धर लूँ।
परम शुद्ध चिद्रूप शक्ति से अनुपम अक्षय पद वर लूँ।।श्रुत.।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव के पुष्पों से निज अंतर सुरभित कर लूँ।
महाशील गुण के प्रताप से मैं कंदर्प-दर्प हर लूँ।।श्रुत.।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव के अति उत्तम प्रभु नैवेद्य प्राप्त कर लूँ।
अमल अतींद्रिय निजस्वभाव से दुखमय क्षुधाव्याधि हर लूँ।।श्रुत.।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

शुद्धस्वानुभव के प्रकाशमय दीप प्रज्वलित मैं कर लूँ।
मोहतिमिर अज्ञान नाश कर निज कैवल्य ज्योति वर लूँ।।श्रुत.।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय अज्ञानान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव गन्ध सुरभिमय ध्यान धूप उर में भर लूँ।
संवर सहित निर्जरा द्वारा मैं वसु कर्म नष्ट कर लूँ।।श्रुत.।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव का फल पाऊँ मैं लोकाग्र शिखर वर लूँ।
अजर अमर अविकल अविनाशी पद-निर्वाण प्राप्त कर लूँ।।
श्रुतपंचमी पर्व शुभ उत्तम जिन श्रुत को वंदन कर लूँ।
षट्खण्डागम धवल जयधवल महाधवल पूजन कर लूँ।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध स्वानुभव दिव्य अर्घ्य ले रत्नत्रय सुपूर्ण कर लूँ।
भव-समुद्र को पार करूँ प्रभु निज अनर्घ्य पद मैं वर लूँ।।श्रुत.।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(ताटंक)

श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।
गूँजा जय-जयकार जगत में जिनश्रुत के अवतार का।।टेक।।

ऋषभदेव की दिव्यध्वनि का लाभ पूर्ण मिलता रहा।
महावीर तक जिनवाणी का विमल वृक्ष खिलता रहा।।
हुए केवली अरु श्रुतकेवलि ज्ञान अमर फलता रहा।
फिर आचार्यों के द्वारा यह ज्ञानदीप जलता रहा।।
भव्यों में अनुराग जगाता मुक्तिवधू के प्यार का।
श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।।1।।

गुरु-परम्परा से जिनवाणी निर्झर-सी झरती रही।
मुमुक्षुओं को परम मोक्ष का पथ प्रशस्त करती रही।।
किन्तु काल की घड़ी मनुज की स्मरणशक्ति हरती रही।
श्री धरसेनाचार्य हृदय में करुण टीस भरती रही।।
द्वादशांग का लोप हुआ तो क्या होगा संसार का।
श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।।2।।

शिष्य भूतबलि पुष्पदन्त की हुई परीक्षा ज्ञान की।
जिनवाणी लिपिबद्ध हेतु श्रुत-विद्या विमल प्रदान की।।
ताड़ पत्र पर हुई अवतरित वाणी जनकल्याण की।
षट्खण्डागम महाग्रन्थ करणानुयोग जय ज्ञान की।।
ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी दिवस था सुर-नर मंगलाचार का।
श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।।3।।

धन्य भूतबली पुष्पदन्त जय श्री धरसेनाचार्य की।
लिपि परम्परा स्थापित करके नई क्रांति साकार की।।
देवों ने पुष्पों की वर्षा नभ से अगणित बार की।
धन्य-धन्य जिनवाणी माता निज-पर भेद विचार की।।
ऋणी रहेगा विश्व तुम्हारे निश्चय का व्यवहार का।
श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।।4।।

धवला टीका वीरसेन कृत बहत्तर हजार श्लोक।
जय धवला जिनसेन वीरकृत उत्तम साठ हजार श्लोक।।
महाधवल है देवसेन कृत है चालीस हजार श्लोक।
विजयधवल अरु अतिशयधवल नहीं उपलब्ध एक श्लोक।।
षट्खण्डागम टीकाएँ पढ़ मन होता भव-पार का।
श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।।5।।

फिर तो ग्रन्थ हजारों लिक्खे ऋषि-मुनियों ने ज्ञानप्रधान।
चारों ही अनुयोग रचे जीवों पर करके करुणा दान।।
पुण्य कथा प्रथमानुयोग द्रव्यानुयोग है तत्त्व प्रधान।
एक्सरे करणानुयोग चरणानुयोग कैमरा महान।।
यह परिणाम नापता है वह बाह्य चरित्र विचार का।
श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।।6।।

जिनवाणी की भक्ति करें हम जिनश्रुत की महिमा गायें।
सम्यग्दर्शन का वैभव ले भेद-ज्ञान निधि को पायें।।
रत्नत्रय का अवलम्बन लें निज स्वरूप में रम जायें।
मोक्षमार्ग पर चलें निरन्तर फिर न जगत में भरमायें।।
धन्य-धन्य अवसर आया है अब निज के उद्धार का।
श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।।7।।
गूँजा जय-जय नाद जगत में जिनश्रुत जयजयकार का।
श्रुतपंचमी पर्व अति पावन है श्रुत के अवतार का।।

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुतषट्खण्डागमाय जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

श्रुतपंचमी सु-पर्व पर, करो तत्त्व का ज्ञान।
आत्मतत्त्व का ध्यान कर, पाओ पद निर्वाण।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री वीरशासन जयन्ती पूजन-1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(छन्द - रोला)

वीरनाथ का दर्शन, सबको मंगलकारी।
वीरनाथ का शासन, सबको आनन्दकारी।।
सहज वस्तु स्वातन्त्र्य, वीर ने हमें बताया।
स्वयं मुक्त हो, हमें मुक्ति का मार्ग दिखाया।।

(दोहा)

श्रावण वदी सुप्रतिपदा, खिरी दिव्यध्वनि वीर।
भावसहित पूजा करें, पहुँचें भव के तीर।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मति-वीर जिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री सन्मति-वीर जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री सन्मति-वीर जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् इति सन्निधिकरणम्।

(तर्ज - आज अद्भुत छवि निज निहारी....)

भाव सम्यक्त्वमय नीर लावें, जन्म-मरणादि का दुख नशावें।
वीरशासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामिति स्वाहा।

लेके चन्दन क्षमाभावमय प्रभु, ईर्ष्या द्वेष मिटावें अहो! विभु।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामिति स्वाहा।

भाव अक्षत सहज अविकारी, भक्ति प्रभु की सदा सुक्खकारी।
वीरशासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामिति स्वाहा।

बालयति हो प्रभो! योगधारा, देव ऐसा ही भाव हमारा।
वीरशासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामिति स्वाहा।

तृप्ति निज में प्रभो! निज से पाई, ऐसी तृप्ति हमें भी सुहाई।
वीरशासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामिति स्वाहा।

ज्ञानमय दीप प्रभु ने जलाया, ज्ञानमय भाव हमको दिखाया।
वीरशासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामिति स्वाहा।

ध्यान-मुद्रा जिनेश्वर सुहावे, देख पुरुषार्थ अन्तर जगावे।
वीरशासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामिति स्वाहा।

देख आराधना का महाफल, लगत निस्सार सब ही करमफल।
वीरशासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामिति स्वाहा।

आत्म-वैभव अनर्घ्य दिखाया, अर्घ्य हमने भी जिनवर चढ़ाया।
वीरशासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

विपुलाचल पर जब प्रथम, खिरी दिव्यध्वनि सार।
भविजन अति हर्षित हुए, गूँजा जय-जयकार।।

(छन्द-त्रोटक)

जय महावीर जय वर्धमान, अतिवीर वीर सन्मति महान।
प्रभुवर को केवलज्ञान हुए, छियासठ दिन अरे! व्यतीत हुए।।
नित समवशरण भर जाता था, पर योग नहीं बन पाता था।
कुछ नहीं समझ में आता था, भव्यों का मन अकुलाता था।।

जब काल दिव्यध्वनि खिरने का, गौतम आदिक के तिरने का।
आया मंगलकारी जिनवर, तब इन्द्र अवधि जोड़ा सत्वर।।
सब समझ शिष्य का वेश लिया, गौतम समीप तब गमन किया।
बोले मेरे गुरु महावीर, हैं मौन 'काव्य' अति ही गंभीर।।

भावार्थ बताओ सुखकारी, 'त्रैकाल्यं' काव्य पढ़ा भारी।
कुछ अर्थ समझ में नहीं आया, गौतम का माथा चकराया।।
शिष्यों संग वीर समीप चला, कुछ होनहार था परम भला।
जब समवशरण दिखलाया था, विस्मित हो अति हर्षाया था।।

देखता मानस्तम्भ मान गला, प्रभु दर्शन कर सम्यक्त्व मिला।
कहकर नमोऽस्तु दीक्षा धारी, हुए चार ज्ञान अति सुखकारी।।

गणधर का सहज निमित्त मिला, भव्यों का भी शुभ भाग्य खिला।
प्रभु दिव्यध्वनि मंगलकारी, सब जग की अति ही हितकारी।।

सुनकर भविजन प्रतिबुद्ध हुए, दीक्षा ले बहुजन शिष्य हुए।
प्रभु शासन तब से वर्ताया, है महाभाग्य हम भी पाया।।

है स्वानुभूतिमय स्वयं सिद्ध, जिनशासन चिर से ही प्रसिद्ध।
जिसमें सब जीव समान कहे, स्वभाव से ही भगवान कहे।।

देहादिक पुद्गल बतलाये, रागादिक दुख हेतु गाये।
शिवकारण सम्यक् रत्नत्रय, परिणति निज में ही होय विलय।।

अपना सुख-ज्ञान सु अपने में, अपनी प्रभुता है अपने में।
पहिचाने बिन भव भ्रमते हैं, आराधन कर प्रभु बनते हैं।।

भोगों की नहीं कामना है, हे भगवन्! यही भावना है।
प्रकटावें पावन जिनशासन, फैलावें जग में प्रभु शासन।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(सोरठा)

शासन वीर महान, जयवन्तो जग में सदा।
पाकर आतम ज्ञान, आनंदित हों जीव सब।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

वीरशासन जयन्ती पूजन-2

(श्री राजमलजी पवैया कृत)

(ताटंक)

वर्धमान अतिवीर वीर प्रभु सन्मति महावीर स्वामी।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर अन्तिम तीर्थंकर नामी।।

श्री अरिहंत देव मंगलमय स्व-पर प्रकाशक गुणधामी।
सकल लोक के ज्ञाता-दृष्टा महा पूज्य अन्तर्यामी।।
महावीर शासन का पहला दिन श्रावण कृष्णा एकम।
शासन वीर जयन्ती आती है प्रतिवर्ष सुपावनतम।।
विपुलाचल पर्वत पर प्रभु के समवशरण में मंगलकार।
खिरी दिव्यध्वनि शासन-वीर जयन्ती-पर्व हुआ साकार।।
प्रभु चरणाम्बुज पूजन करने का आया उर में शुभ भाव।
सम्यग्ज्ञान प्रकाश मुझे दो, राग-द्वेष का करूँ अभाव।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मति-वीरजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री सन्मति-वीरजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री सन्मति-वीरजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

भाग्यहीन नर रत्न स्वर्ण को जैसे प्राप्त नहीं करता।
ध्यानहीन मुनि निज आतम का त्यों अनुभवन नहीं करता।।
शासन वीर जयन्ती पर जल चढ़ा वीर का ध्यान करूँ।
खिरी दिव्यध्वनि प्रथम देशना सुन अपना कल्याण करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

विविध कल्पना उठती मन में, वे विकल्प कहलाते हैं।
बाह्य पदार्थों में ममत्व मन के संकल्प रुलाते हैं।।
शासन वीर जयन्ती पर चंदन अर्पित कर ध्यान करूँ।।खिरी.।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतरंग बहिरंग परिग्रह त्यागूँ मैं निर्ग्रन्थ बनूँ।
जीवन मरण मित्र अरि सुख दुख लाभ हानि में साम्य बनूँ।।
शासन वीर जयन्ती पर, कर अक्षत भेंट स्वध्यान करूँ।।खिरी.।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध सिद्ध ज्ञानादि गुणों से मैं समृद्ध हूँ देह प्रमाण।
नित्य असंख्यप्रदेशी निर्मल हूँ अमूर्तिक महिमावान।।
शासन वीर जयन्ती पर, कर भेंट पुष्प निज ध्यान करूँ।
खिरी दिव्यध्वनि प्रथम देशना सुन अपना कल्याण करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परम तेज हूँ परम ज्ञान हूँ परम पूर्ण हूँ ब्रह्म स्वरूप।
निरालम्ब हूँ निर्विकार हूँ निश्चय से मैं परम अनूप।।
शासन वीर जयन्ती पर नैवेद्य चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी.।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व-पर प्रकाशक केवलज्ञानमयी, निजमूर्ति अमूर्ति महान।
चिदानन्द टंकोत्कीर्ण हूँ ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता भगवान।।
शासन वीर जयन्ती पर मैं दीप चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी.।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यकर्म ज्ञानावरणादिक देहादिक नोकर्म विहीन।
भाव कर्म रागादिक से मैं पृथक् आत्मा ज्ञान प्रवीण।।
शासन वीर जयन्ती पर मैं धूप चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी.।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रहित कर्ममल शुद्ध ज्ञानमय, परम मोक्ष है मेरा धाम।
भेदज्ञान की महाशक्ति से पाऊँगा अनन्त विश्राम।।
शासन वीर जयन्ती पर मैं सुफल चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी.।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

मात्र वासनाजन्य कल्पना है परद्रव्यों में सुख-बुद्धि।
इन्द्रियजन्य सुखों के पीछे पाई किंचित् नहीं विशुद्धि।।
शासन वीर जयन्ती पर मैं अर्घ्य चढ़ा निज ध्यान करूँ।।खिरी.।।

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

विपुलाचल के गगन को, वन्दूँ बारम्बार।
सन्मति प्रभु की दिव्यध्वनि, जहाँ हुई साकार।।1।।

(ताटंक)

महावीर प्रभु दीक्षा लेकर मौन हुए तप संयम धार।
परिषह उपसर्गों को जय कर देश-देश में किया विहार।।
द्वादश वर्ष तपस्या करके ऋजुकूला सरि-तट आये।
क्षपकश्रेणी चढ़ शुक्ल ध्यान से कर्म घातिया विनसाये।।

स्व-पर प्रकाशक परम ज्योतिमय प्रभु को केवलज्ञान हुआ।
इन्द्रादिक को समवशरण रच मन में हर्ष महान हुआ।।
बारह सभा जुड़ीं अति सुन्दर, सबके मन का कमल खिला।
जनमानस को प्रभु की दिव्यध्वनि का, किन्तु न लाभ मिला।।

छ्यासठ दिन तक रहे, मौन प्रभु दिव्यध्वनि का मिला न योग।
अपने आप स्वयं मिलता है, निमित्त-नैमित्तिक संयोग।।
राजगृही के विपुलाचल पर प्रभु का समवशरण आया।
अवधिज्ञान से जान इन्द्र ने गणधर का अभाव पाया।।

बड़ी युक्ति से इन्द्रभूति गौतम ब्राह्मण को वह लाया।
गौतम ने दीक्षा लेते ही ऋषि गणधर का पद पाया।।
तत्क्षण खिरी दिव्यध्वनि प्रभु की द्वादशांगमय कल्याणी।
रच डाली अन्तर्-मुहूर्त में, गौतम ने श्री जिनवाणी।।

सात शतक लघु और महाभाषा अष्टादश विविध प्रकार।
सब जीवों ने सुनी दिव्यध्वनि अपने उपादान अनुसार।।
विपुलाचल पर समवशरण का हुआ आज के दिन विस्तार।
प्रभु की पावन वाणी सुनकर गूँजा नभ में जय-जयकार।।

जन-जन में नव जागृति जागी मिटा जगत का हाहाकार।
जियो और जीने दो का जीवन संदेश हुआ साकार।।
धर्म अहिंसा सत्य और अस्तेय मनुज जीवन का सार।
ब्रह्मचर्य अपरिग्रह से ही होगा जीव मात्र से प्यार।।

घृणा पाप से करो सदा ही किन्तु नहीं पापी से द्वेष।
जीव मात्र को निज-सम समझो यही वीर का था उपदेश।।
इन्द्रभूति गौतम ने गणधर बनकर गूँथी जिनवाणी।
इसके द्वारा परमात्मा बन सकता कोई भी प्राणी।।

मेघ-गर्जना करती श्री जिनवाणी का वह चला प्रवाह।
पाप ताप संताप नष्ट हो गये मोक्ष की जागी चाह।।
प्रथमं, करणं, चरणं, द्रव्यं ये अनुयोग बताये चार।
निश्चय नय सत्यार्थ बताया, असत्यार्थ सारा व्यवहार।।

तीन लोक षट् द्रव्यमयी है सात तत्त्व की श्रद्धा सार।
नव पदार्थ छह लेश्या जानो, पंच महाव्रत उत्तम धार।।
समिति गुप्ति चारित्र पाल कर तप संयम धारो अविकार।
परम शुद्ध निज आत्म-तत्त्व, आश्रय से हो जाओ भव पार।।

उस वाणी को मेरा वंदन उसकी महिमा अपरम्पार।
सदा वीर शासन की पावन, परम जयन्ती जय-जयकार।।
वर्धमान अतिवीर वीर की पूजन का है हर्ष अपार।
काल-लब्धि प्रभु मेरी आई, शेष रहा थोड़ा संसार।।

ॐ ह्रीं श्रीं सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

दिव्यध्वनि प्रभु वीर की देती सौख्य अपार।
आत्मज्ञान की शक्ति से, खुले मोक्ष का द्वार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री रक्षाबन्धन पूजन-1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(वीरछन्द)

घोर उपसर्गजयी समतामय, रत्नत्रय के साधक हैं।
काया से भी निस्पृह जो, निज शुद्धातम आराधक हैं।।
अहो! अकंपन आदि मुनीश्वर, हृदय हमारे वास करो।
हो वात्सल्य विष्णु मुनिवर-सम, श्री जिनधर्म प्रकाश करो।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनि! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनि! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनि! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीरछन्द)

प्रासुक जल से पूजा करते, रोम-रोम हुलसाया है।
अहो! सहज वात्सल्यमयी, जिनशासन मन को भाया है।।
हुए अकंपित श्री अकंपन आदि मुनीश्वर आतम में।
किया दूर उपसर्ग विष्णु मुनि प्रीति धरी शुद्धातम में।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

देख प्रभाव शान्त भावों का, बलि आदि भी विनत हुए।
करें अर्चना हम चंदन से, मुक्ति-मार्ग के पथिक हुए।।हुए.।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो भवताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत विक्षत तन हुआ किन्तु, परिणाम आपके अक्षत ही।
अक्षत से पूजा करते हम, करें भावना ऐसी ही।।हुए.।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामिति स्वाहा।

भायें हम निष्काम भावना, कामजयी हों आप समान।
पुष्पों से करते पूजा हम जानें सहज ज्ञान में ज्ञान।।
हुए अकंपित श्री अकंपन आदि मुनीश्वर आतम में।
किया दूर उपसर्ग विष्णु मुनि प्रीति धरी शुद्धातम में।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामिति स्वाहा।

निजानंद में तृप्त साधु आदर्श हमारे सदा रहें।
अहो! पूजते हैं चरु से शुद्ध भोजन से भी विरत रहें।।हुए.।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामिति स्वाहा।

हे निर्मोही! उपसर्गों में द्वेष नहीं तुमको आया।
ज्ञानमयी वैराग्य आप-सम पाने को दीपक लाया।।हुए.।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामिति स्वाहा।

बाह्य अग्नि से तन झुलसा अन्तर अग्नि दुष्कर्म दहे।
धन्य महा समता के सागर धूप चढ़ाकर पूज रहे।।हुए.।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो अष्टकर्म-विध्वंसनाय धूपं निर्वपामिति स्वाहा।

उदासीन हो कर्म-फलों में ज्ञाता-दृष्टा आप रहे।
साम्यभाव के ही प्रभाव से उपसर्गों से मुक्त रहे।।हुए.।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामिति स्वाहा।

है अनर्घ्य महिमा मुनिवर की है अनर्घ्य ही शुद्धातम।
हों अनर्घ्य परिणाम हमारे अर्घ्य चढ़ा ध्यावें आतम।।हुए.।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

रक्षाबन्धन पर्व दिन, याद करें मुनिराज।
गावें जयमाला सुखद, सफल होय सब काज।।

(पद्धरि)

जय मुनि जीवन आनन्दमयी, पर से निस्पृह शुद्धात्ममयी।
है परम जितेन्द्रिय ज्ञानमयी, है परम तृप्त वैराग्यमयी।।
आरम्भ परिग्रह के त्यागी, शिव-सुख में ही वे अनुरागी।
विषयों की आशा भी न रही, संतुष्ट परिणति निज में ही।
वर्ते अन्तर में भेदज्ञान, अनुशासन जिनका था महान।
रहते आज्ञा में गुरुवर की, मुद्रा जिनकी थी जिनवर-सी।।
था संघ सात सौ मुनियों का, अद्भुत समूह था गुणियों का।
उज्ज्यिनी नगरी में आया, भूपति दर्शन कर हर्षाया।।
मुनि मौन रहे न विवाद हुआ, पर समय लौटते वाद हुआ।
श्रुतसागर से परास्त होकर, द्वेषी मंत्री क्रोधित होकर।।
रात्रि में आये वध करने, पर कीना कीलित देवों ने।
यह देख नृपति ने दिया दण्ड, निर्वासित मंत्री हुए खिन्न।।
हस्तिनापुरी नगरी आकर, सेवा से नृप का हर्षा कर।
वरदान धरोहर रूप लिया, होकर निशंक वहाँ वास किया।।
फिर दैवयोग से वहाँ संघ, आया पावस में नया रंग।
सब नर-नारी थे हर्षाये, पर मंत्री मन में घबराये।।
था निमित्त एक ही अविकारी, परिणति सबकी न्यारी-न्यारी।
वरदान नृपति से लिया माँग, पा राज्य रचाया क्रूर स्वांग।।

मुनिसंघ समीप ही यज्ञ किया, अग्नि प्रज्वलित कर कष्ट दिया।
मुनिवर समता धर लीन हुए, नृप और प्रजाजन खिन्न हुए।।
था हाहाकार मचा भारी, सुन समाचार अति दुखकारी।।
विष्णुकुमार मुनि द्रवित हुए, वात्सल्य भाववश चलित हुए।।
वामन बन कर बलि ढिंग आये, डग तीन भूमि ले हर्षाये।
विक्रिया बना तन फैलाया, बलि देख रूप था चकराया।।
चरणों में मस्तक नवा दिया, जिनधर्म सु अंगीकार किया।
उपसर्ग सहज ही दूर हुआ, घर-घर में मंगलाचार हुआ।।
मुनियों को शुद्ध आहार दिया, वात्सल्य धर्म था सिखा दिया।
ले प्रायश्चित्त विष्णु मुनिवर, तप द्वारा कर्म नाश सत्वर।।
पंचम गति पायी अविकारी, हम करें वंदना सुखकारी।
रक्षाबन्धन का पर्व चला, हमको भी शुभ संदेश मिला।।
वात्सल्य सहज ही विस्तारें, निःशंकित हो समता धारें।
निरपेक्ष मौन सबसे उत्तम, निर्ग्रन्थ मार्ग ही लोकोत्तम।।
तन-मन-धन सब अर्पण करके, युक्ति से विनय विशुद्धि से।
जिनधर्म प्रभाव बढ़ायेंगे, निज शुद्धातम आराधेंगे।।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यविष्णुकुमारादि सप्तशतकमुनिवरेभ्यो अनर्घ्य-पदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

(सोरठा)

वाद विवाद से दूर, करें सहज आराधना।
हो समता भरपूर, बढ़े सुधर्म प्रभावना।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

रक्षाबन्धन पर्व पूजन–2

(श्री अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनिवर पूजन)

(श्री राजमलजी पवैया कृत)

(छन्द–ताटंक)

जय अकम्पनाचार्य आदि सात सौ साधु मुनिव्रत धारी।
बलि ने कर नरमेघ यज्ञ उपसर्ग किया भीषण भारी।।
जय जय विष्णुकुमार महामुनि ऋद्धि विक्रिया के धारी।
किया शीघ्र उपसर्ग निवारण वात्सल्य करुणाधारी।।

रक्षा–बन्धन पर्व मना मुनियों का जय–जयकार हुआ।
श्रावण शुक्ल पूर्णिमा के दिन घर–घर मंगलाचार हुआ।।
श्री मुनि चरणकमल में वन्दूँ पाऊँ प्रभु सम्यग्दर्शन।
भक्ति भाव से पूजन करके निज स्वरूप में रहूँ मगन।।

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्य आदि सप्तशतकमुनिसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्य आदि सप्तशतकमुनिसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्य आदि सप्तशतकमुनिसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

जन्म–मरण के नाश हेतु प्रासुक जल करता हूँ अर्पण।
राग–द्वेष परिणति अभाव कर निज परिणति में करूँ रमण।।
श्री अकम्पनाचार्य आदि मुनि सप्त शतक को करूँ नमन।
मुनि उपसर्ग निवारक विष्णुकुमार महा मुनि को वन्दन।।

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव–सन्ताप मिटाने को मैं चन्दन करता हूँ अर्पण।
देह भोग भव से विरक्त हो निज परिणति में करूँ रमण।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः चन्दनं नि.।

अक्षय–पद अखंड पाने को अक्षत धवल करूँ अर्पण।
हिंसादिक पापों को क्षय कर निज परिणति में करूँ रमण।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो अक्षतान् नि.।

काम–बाण विध्वंस हेतु मैं सहज पुष्प करता अर्पण।
क्रोधादिक चारों कषाय हर निज परिणति में करूँ रमण।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः पुष्पं नि. स्वाहा।

क्षुधारोग के नाश हेतु नैवेद्य सरस करता अर्पण।
विषय–भोग की आकांक्षा हर निज परिणति में करूँ रमण।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो नैवेद्यं नि.।

चिर मिथ्यात्व तिमिर हरने को दीपज्योति करता अर्पण।
सम्यग्दर्शन का प्रकाश पा निज परिणति में करूँ रमण।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो दीपं नि. स्वाहा।

अष्ट कर्म के नाश हेतु यह धूप सुगन्धित है अर्पण।
सम्यग्ज्ञान हृदय प्रकटाऊँ निज परिणति में करूँ रमण।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो धूपं नि. स्वाहा।

मुक्ति–प्राप्ति हित उत्तम फल चरणों में करता हूँ अर्पण।
मैं सम्यक्चारित्र प्राप्त कर निज परिणति में करूँ रमण।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यः फलं नि.।

शाश्वत पद अनर्घ्य पाने को उत्तम अर्घ्य करूँ अर्पण।
रत्नत्रय की तरणी खेऊँ निज परिणति में करूँ रमण।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

वात्सल्य के अंग की, महिमा अपरम्पार।
विष्णुकुमार मुनीन्द्र की, गूँजी जय-जयकार।।

(ताटंक)

उज्जयनी नगरी के नृप श्रीवर्मा के मंत्री थे चार।
बलि, प्रहलाद, नमुचि वृहस्पति चारों अभिमानी सविकार।।
जब अकम्पनाचार्य संघ मुनियों का नगरी में आया।
सात शतक मुनि के दर्शन कर नृप श्रीवर्मा हर्षाया।।

सब मुनि मौन ध्यान में रत, लख बलि आदिक ने निंदा की।
कहा कि मुनि सब मूर्ख, इसी से नहीं तत्त्व की चर्चा की।।
किन्तु लौटते समय मार्ग में, श्रुतसागर मुनि दिखलाये।
वाद-विवाद किया श्री मुनि से, हारे, जीत नहीं पाये।।

अपमानित होकर निशि में मुनि पर प्रहार करने आये।
खड्ग उठाते ही कीलित हो गये हृदय में पछताये।।
प्रातः होते ही राजा ने आकर मुनि को किया नमन।
देश-निकाला दिया मंत्रियों को तब राजा ने तत्क्षण।।

चारों मंत्री अपमानित हो पहुँचे नगर हस्तिनापुर।
राजा पद्मराय को अपनी सेवाओं से प्रसन्न कर।।
मुँह-माँगा वरदान नृपति ने बलि को दिया तभी तत्पर।
जब चाहूँगा तब ले लूँगा, बलि ने कहा नम्र होकर।।

फिर अकम्पनाचार्य सात सौ मुनियों सहित नगर आये।
बलि के मन में मुनियों की हत्या के भाव उदय आये।।
कुटिल चाल चल बलि ने नृप से आठ दिवस का राज्य लिया।
भीषण अग्नि जलाई चारों ओर द्वेष से कार्य किया।।

हाहाकार मचा जगती में, मुनि स्व ध्यान में लीन हुए।
नश्वर देह भिन्न चेतन से, यह विचार निज लीन हुए।।
यह नरमेघ यज्ञ रच बलि ने किया दान का ढोंग विचित्र।
दान किमिच्छक देता था, पर मन था अति हिंसक अपवित्र।।

पद्मराय नृप के लघु भाई, विष्णुकुमार महा मुनिवर।
वात्सल्य का भाव जगा, मुनियों पर संकट का सुनकर।।
किया गमन आकाश मार्ग से, शीघ्र हस्तिनापुर आये।
ऋद्धि विक्रिया द्वारा याचक, वामन रूप बना लाये।।

बलि से माँगी तीन पाँव भू, बलि राजा हँसकर बोला।
जितनी चाहो उतनी ले लो, वामन मूर्ख बड़ा भोला।।
हँसकर मुनि ने एक पाँव में ही सारी पृथ्वी नापी।
पग द्वितीय में मानुषोत्तर पर्वत की सीमा नापी।।

ठौर न मिला तीसरे पग को, बलि के मस्तक पर रक्खा।
क्षमा-क्षमा कह कर बलि ने, मुनिचरणों में मस्तक रक्खा।।
शीतल ज्वाला हुई अग्नि की श्री मुनियों की रक्षा की।
जय-जयकार धर्म का गूँजा, वात्सल्य की शिक्षा दी।।

नवधा भक्तिपूर्वक सबने मुनियों को आहार दिया।
बलि आदिक का हुआ हृदय परिवर्तन जय-जयकार किया।।
रक्षासूत्र बाँधकर तब जन-जन ने मंगलाचार किये।
साधर्मी वात्सल्य भाव से, आपस में व्यवहार किये।।

समकित के वात्सल्य अंग की महिमा प्रकटी इस जग में।
रक्षा-बन्धन पर्व इसी दिन से प्रारम्भ हुआ जग में।।
श्रावण शुक्ल पूर्णिमा दिन था रक्षासूत्र बँधा कर में।
वात्सल्य की प्रभावना का आया अवसर घर-घर में।।

प्रायश्चित्त ले विष्णुकुमार ने पुनः व्रत ले तप ग्रहण किया।
अष्ट कर्म बन्धन को हरकर इस भव से ही मोक्ष लिया।।
सब मुनियों ने भी अपने-अपने परिणामों के अनुसार।
स्वर्ग-मोक्ष पद पाया जग में हुई धर्म की जय-जयकार।।

धर्म भावना रहे हृदय में, पापों के प्रतिकूल चलूँ।
रहे शुद्ध आचरण सदा ही धर्म-मार्ग अनुकूल चलूँ।।
आत्मज्ञान रुचि जगे हृदय में, निज-पर को मैं पहिचानूँ।
समकित के आठों अंगों की, पावन महिमा को जानूँ।।

तभी सार्थक जीवन होगा सार्थक होगी यह नर देह।
अन्तर घट में जब बरसेगा पावन परम ज्ञान रस मेह।।
पर से मोह नहीं होगा, होगा निज आतम से अति नेह।
तब पायेंगे अखंड अविनाशी निज सुखमय शिव-गेह।।

रक्षा-बंधन पर्व धर्म का, रक्षा का त्योहार महान।
रक्षा-बंधन पर्व ज्ञान का रक्षा का त्योहार प्रधान।।
रक्षा-बंधन पर्व चरित का, रक्षा का त्योहार महान।
रक्षा-बंधन पर्व आत्म का, रक्षा का त्योहार प्रधान।।
श्री अकम्पनाचार्य आदि मुनि सात शतक को करूँ नमन।
मुनि उपसर्ग निवारक विष्णुकुमार महामुनि को वन्दन।।

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार एवं अकम्पनाचार्यादिसप्तशतकमुनिभ्यो जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

रक्षा बन्धन पर्व पर, श्री मुनि पद उर धार।
मन-वच-तन जो पूजते, पाते सौख्य अपार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

श्री दीपमालिका पर्व पूजन

(श्री राजमलजी पवैया कृत)

(वीरछन्द)

महावीर निर्वाण दिवस पर, महावीर पूजन कर लूँ।
वर्धमान अतिवीर वीर, सन्मति प्रभु को वन्दन कर लूँ।।
पावापुर से मोक्ष गये प्रभु, जिनवर पद अर्चन कर लूँ।
जगमग जगमग दिव्यज्योति से, धन्य मनुज जीवन कर लूँ।।

कार्तिक कृष्ण अमावस्या को, शुद्धभाव मन में भर लूँ।
दीपमालिका पर्व मनाऊँ, भव-भव के बन्धन हर लूँ।।
ज्ञान-सूर्य का चिर-प्रकाश ले, रत्नत्रय पथ पर बढ़ लूँ।
परभावों का राग तोड़कर, निजस्वभाव में मैं अड़ लूँ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलप्राप्त-श्रीवर्धमानजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलप्राप्त-श्रीवर्धमानजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलप्राप्त-श्रीवर्धमानजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीरछन्द)

चिदानन्द चैतन्य अनाकुल, निजस्वभाव मय जल भर लूँ।
जन्म-मरण का चक्र मिटाऊँ, भव-भव की पीड़ा हर लूँ।।
दीपावलि के पुण्य दिवस पर, वर्धमान पूजन कर लूँ।
महावीर अतिवीर वीर, सन्मति प्रभु को वन्दन कर लूँ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखण्ड अतुल अविनाशी, निज चन्दन उर में धर लूँ।
चारों गति का ताप मिटाऊँ, निज पंचमगति आदर लूँ।।

दीपावलि के पुण्य दिवस पर, वर्धमान पूजन कर लूँ।
महावीर अतिवीर वीर, सन्मति प्रभु को वन्दन कर लूँ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अजर अमर अक्षय अविकल, अनुपम अक्षय पद उर धर लूँ।
भवसागर तर मुक्ति वधू से, मैं पावन परिणय कर लूँ।।
दीपावलि के पुण्य दिवस पर, वर्धमान पूजन कर लूँ।
महावीर अतिवीर वीर, सन्मति प्रभु को वन्दन कर लूँ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

रूप-गन्ध-रस-स्पर्श रहित निज शुद्ध पुष्प मन में भर लूँ।
काम-बाण की व्यथा नाश कर मैं निष्काम रूप धर लूँ।।दीपा.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मशक्ति परिपूर्ण शुद्ध नैवेद्य भाव उर में धर लूँ।
चिर-अतृप्ति का रोग नाशकर, सहज तृप्त निज पद वर लूँ।।दीपा.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्ण ज्ञान कैवल्य प्राप्ति हित, ज्ञानदीप ज्योतित कर लूँ।
मिथ्याभ्रम-तम-मोह नाशकर, निज सम्यक्त्व प्राप्त कर लूँ।।दीपा.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्यभाव की धूप जलाकर, घाति-अघाति कर्म हर लूँ।
क्रोध-मान-माया-लोभादि, मोह-द्रोह सब क्षय कर लूँ।।दीपा.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अमिट अनंत अचल अविनश्वर, श्रेष्ठ मोक्षपद उर धर लूँ।
अष्ट स्वगुण से युक्त सिद्धगति, पा सिद्धत्व प्राप्त कर लूँ।।दीपा.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण अनन्त प्रकटाऊँ अपने, निज अनर्घ्य पद को वर लूँ।
शुद्धस्वभावी ज्ञान-प्रभावी, निज सौन्दर्य प्रकट कर लूँ।।दीपा.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

शुभ आषाढ़ शुक्ल षष्ठी को, पुष्पोत्तर तज प्रभु आये।
माता त्रिशला धन्य हो गई, सोलह सपने दरशाये।।
पन्द्रह मास रत्न बरसे, कुण्डलपुर में आनन्द हुआ।
वर्धमान के गर्भोत्सव पर, दूर शोक-दुख-द्वंद्व हुआ।।

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्र शुक्ल की त्रयोदशी को, सारी जगती धन्य हुई।
नृप सिद्धार्थराज हर्षाये, कुण्डलपुरी अनन्य हुई।।
मेरु सुदर्शन पाण्डुक वन में, सुरपति ने कर प्रभु अभिषेक।
नृत्य वाद्य मंगल गीतों के, द्वारा किया हर्ष अतिरेक।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

मगसिर कृष्णा दशमी को, उर में छाया वैराग्य अपार।
लौकान्तिक देवों के द्वारा धन्य-धन्य प्रभु जय-जय कार।।
बाल ब्रह्मचारी गुणधारी, वीर प्रभु ने किया प्रयाण।
वन में जाकर दीक्षा धारी, निज में लीन हुए भगवान।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश वर्ष तपस्या करके, पाया तुमने केवलज्ञान।
कर बैसाख शुक्ल दशमी को, त्रेसठ कर्म प्रकृति अवसान।।
सर्व द्रव्य-गुण-पर्यायों को, युगपत् एक समय में जान।
वर्धमान सर्वज्ञ हुए प्रभु, वीतराग अरिहन्त महान।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक कृष्ण अमावस्या को, वर्धमान प्रभु मुक्त हुए।
सादि-अनंत समाधि प्राप्त कर, मुक्ति-रमा से युक्त हुए।।
अन्तिम शुक्लध्यान के द्वारा, कर अघातिया का अवसान।
शेष प्रकृति पच्यासी को भी, क्षय करके पाया निर्वाण।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

जयमाला

(वीरछन्द)

महावीर ने पावापुर से, मोक्ष-लक्ष्मी पाई थी।
इन्द्र-सुरों ने हर्षित होकर, दीपावली मनाई थी।।
केवलज्ञान प्राप्त होने पर, तीस वर्ष तक किया विहार।
कोटि-कोटि जीवों का प्रभु ने, दे उपदेश किया उपकार।।

पावापुर उद्यान पधारे, योग-निरोध किया साकार।
गुणस्थान चौदह को तजकर, पहुँचे भव-समुद्र के पार।।
सिद्धशिला पर हुए विराजित, मिली मोक्षलक्ष्मी सुखकार।
जल-थल-नभ में देवों द्वारा गूँज उठी प्रभु की जयकार।।

इन्द्रादिक सुर हर्षित आये, मन में धारे मोद अपार।
महामोक्ष कल्याण मनाया, अखिल विश्व को मंगलकार।।
अष्टादश गणराज्यों के, राजाओं ने जय-गान किया।
नत-मस्तक होकर जन-जन ने, महावीर गुण-गान किया।।

तन कपूरवत् उड़ा शेष नख, केश रहे इस भू-तल पर।
मायामयी शरीर रचा, देवों ने क्षण भर के भीतर।।
अग्निकुमार सुरों ने झुक, मुकुटानल से तन भस्म किया।
सर्व उपस्थित जनसमूह, सुरगण ने पुण्य अपार लिया।।

कार्तिक कृष्ण अमावस्या का, दिवस मनोहर सुखकर था।
उषाकाल का उजियारा कुछ, तम-मिश्रित अति मनहर था।।
रत्न-ज्योतियों का प्रकाश कर, देवों ने मंगल गाये।
रत्न-दीप की आवलियों से, पर्व दीपमाला लाये।।

सब ने शीश चढ़ाई भस्मी, पद्म सरोवर बना वहाँ।
वही भूमि है अनुपम सुन्दर, जल मन्दिर है बना वहाँ।।
प्रभु के ग्यारह गणधर में थे, प्रमुख श्री गौतम स्वामी।
क्षपकश्रेणि चढ़ शुक्लध्यान से हुए देव अन्तर्यामी।।

इसी दिवस गौतम स्वामी को, सन्ध्या केवलज्ञान हुआ।
केवलज्ञान लक्ष्मी पाई, पद सर्वज्ञ महान हुआ।।
देवों ने अति हर्षित होकर, रत्न-ज्योति का किया प्रकाश।
हुई दीपमाला द्विगुणित, आनन्द हुआ छाया उल्लास।।

प्रभु के चरणाम्बुज दर्शन कर, हो जाता मन अति पावन।
परम पूज्य निर्वाणभूमि शुभ, पावापुर है मन-भावन।।
अखिल जगत में दीपावली, त्योहार मनाया जाता है।
महावीर निर्वाण महोत्सव, धूम मचाता आता है।।

हे प्रभु! महावीर जिन स्वामी, गुण अनन्त के हो धामी।
भरतक्षेत्र के अन्तिम तीर्थंकर, जिनराज विश्वनामी।।
मेरी केवल एक विनय है, मोक्ष-लक्ष्मी मुझे मिले।
भौतिक लक्ष्मी के चक्कर में, मेरी श्रद्धा नहीं हिले।।

भव-भव जन्म-मरण के चक्कर, मैंने पाये हैं इतने।
जितने रजकण इस भूतल पर, पाये हैं प्रभु दुख उतने।।
अवसर आज अपूर्व मिला है, शरण आपकी पाई है।
भेदज्ञान की बात सुनी है, तो निज की सुधि आई है।।
अब मैं कहीं नहीं जाऊँगा, जब तक मोक्ष नहीं पाऊँ।
दो आशीर्वाद हे स्वामी! नित्य नये मंगल गाऊँ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां निर्वाणकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्धमानजिनेन्द्राय जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

दीपमालिका पर्व पर, महावीर उर धार।
भावसहित जो पूजते, पाते सौख्य अपार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

मोक्ष न आतमज्ञान बिन, क्रिया ज्ञान बिन नाहिं।
ज्ञान विवेक बिना नहीं, गुण विवेक के माहिं।।
नहिं विवेक जिनमत बिना, जिनमत जिन-बिन नाहिं।
मोक्ष मूल निर्मल महा, जिनवर त्रिभुवन माहिं।।

तातें जिनको वन्दना, हमरी बारम्बार।
जिनतें आपा पाइये, तीन भुवन में सार।।
चौबीसी तीनों नमूँ, नमो तीस चौबीस।
सीमन्धर आदिक प्रभो, नमन करो जिन बीस।।
तीनकाल के जिनवरा, तीन काल के सिद्ध।
तीन काल के मुनिवरा, वन्दूँ लोक प्रसिद्ध।।
जिनवाणी रस अमृता, जा सम सुधा न और।
जाकर भव-भरमण मिटै, पावे निश्चल ठौर।।

श्री चौबीस तीर्थंकर विधान

पीठिका

(हरिगीतिका)

1. श्री ऋषभदेव भगवान स्तवन

लीन हो निज ध्येय में, सर्वज्ञ पद पाया प्रभो।
आदि तीर्थंकर! नमन अविकार हो, सुखकार हो।।
अखिल जग में, एक शुद्धातम ही भासे सार है।
पाया स्वयं में ही अहो, आनन्द अपरम्पार है।।

2. श्री अजितनाथ भगवान स्तवन

मोह ही हुआ पराजित, अजित प्रभु! अविजित रहे।
चिद्रूप को आराध कर, शिव-भूप जिनवर हो गये।।
ऐसा पराक्रम प्रकट होवे, निर्विकल्प रहूँ सदा।
संतुष्ट प्रभु निर्मुक्त निज में, सहज तृप्त रहूँ सदा।।

3. श्री सम्भवनाथ भगवान स्तवन

अहो सम्भवनाथ! दर्शन कर परम आनन्द हुआ।
परभाव विरहित एक ज्ञायक भाव का दर्शन हुआ।।
भावना जागी सहज, निर्ग्रन्थ पद अविकार हो।
तृप्त निज में ही सदा पर की न चाह लगार हो।।

4. श्री अभिनन्दननाथ भगवान स्तवन

अहो अभिनन्दन प्रभो! स्वीकार अभिनन्दन करो।
आत्म-आराधन करूँ मैं, आप प्रभु साक्षी रहो।।
क्रूरता से शून्य होवे, सिंह-वृत्ति ज्ञानमय।
रहूँ निज में मग्न सहजहिं, कर्म नाशें क्लेशमय।।

5. श्री सुमतिनाथ भगवान स्तवन

कुमति वश धर निमित्त-दृष्टि, सहा दुःख अपार है।
चिदानन्दमय आत्मा ही, अमित गुण भंडार है।।
आत्म-आश्रय से जिनेश्वर, ध्रुव अचल शिवपद लहा।
धनि सुमति जिन! सुमति-दाता जगत-त्राता हो अहा।।

6. श्री पद्मप्रभ भगवान स्तवन

स्वर्ण विरचित पंकजों की, पंक्ति प्रभु चरणों तले।
शोभती सु विहार काले, और बहु अतिशय धरे।।
पद्मवत् निर्लिप्त मुद्रा, मुक्ति-पथ दरशावती।
पद्मप्रभ! तुमको निरखते, याद अपनी आवती।

7. श्री सुपार्श्वनाथ भगवान स्तवन

हे सुपार्श्व जिनेन्द्र! तेरा, स्तवन कैसे करूँ।
गुण अनन्त अहो अलौकिक, आदि अन्त नहीं लहूँ।।
वचन में आवे नहीं, चिन्तन न पावे पार है।
स्वानुभवमय भक्ति वर्ते, वंदना अविकार है।।

8. श्री चन्द्रप्रभ भगवान स्तवन

सुधा झरती शांत मूरति, चन्द्रप्रभ! अति सोहनी।
मोह-नाशक दिव्यध्वनि, स्वामी परम मन-मोहिनी।।
चन्द्र किरणों के परस से, सिन्धु ज्यों उछले प्रभो।
उछले परम आनन्द सागर, सहज दरशन से विभो।।

9. श्री पुष्पदन्त भगवान स्तवन

हे प्रभो! अध्यात्म विद्या, दिव्यध्वनि से तुम कही।
पुष्पदन्त जिनेन्द्र! मुक्ति, की सुविधि भविजन लही।।
नाम सार्थक सुविधिनाथ, स्वपद भजूँ अति चाव से।
निश्चिंत हूँ निर्द्वन्द्व हूँ रुचि लगी सहज स्वभाव से।।

10. श्री शीतलनाथ भगवान स्तवन

आधि-व्याधि-उपाधिमय, भवताप से तपता रहा।
अहो शीतलनाथ! मम उर, दर्श से शीतल भया।।
परम शीतल तत्त्व, निज शुद्धात्मा पाया अहा।
तृप्त निज में ही रहूँ, सन्ताप नहिं उपजे कदा।।

11. श्री श्रेयांसनाथ भगवान स्तवन

निरपेक्ष होते भी अहो! जग दुख हरो श्रेयांस जिन!
सहज जीते कर्म-शत्रु, क्रोध बिन शस्त्रादि बिन।।
शृंगार बिन स्वामी स्वयं ही, जगत के शृंगार हो।
ध्रुव श्रेय पाया नाथ, मेरी वंदना अविकार हो।।

12. श्री वासुपूज्य स्तवन स्तवन

चक्र से या वज्र से भी, मोह जो नशता नहीं।
जिननाथ तव उपदेश से, दुर्मोह नाशे सहज ही।।
इन्द्रादि से भी पूज्य स्वामिन्, वासुपूज्य! सु नाम है।
सहज पूज्य स्वभाव पाया, नाथ सहज प्रणाम है।।

13. श्री विमलनाथ भगवान स्तवन

स्नान बिन निर्मल हुए, प्रभु आप सहज स्वभाव से।
स्वयं छूटे कर्म-मल, विभु आत्मध्यान प्रभाव से।।
विमल जिनवर! दर्श करते, भेदज्ञान हृदय जगा।
भ्रान्ति विघटी शान्ति प्रकटी, भाव अति निर्मल भया।।

14. श्री अनन्तनाथ भगवान स्तवन

बसे सादि अनंत शिव में, परम आनन्द रूप हो।
प्रकटे अनन्त सुगुण जिनेश्वर, रहो ज्ञाता रूप हो।।
प्रभुता अनन्त सुज्ञान में भी, अनंत ही प्रतिभासती।
प्रभु अनन्त! सुदर्श से, महिमा अनन्त प्रकाशती।।

15. श्री धर्मनाथ भगवान स्तवन

जिन धर्म पाया भाग्य से, आनंद अपरम्पार है।
दीखे स्वयं में ही अहो, अक्षय विभव भंडार है।।
निन्दा करें या त्रास दें जन, धर्म नहीं छोड़ूँ प्रभो।
हे धर्मनाथ जिनेन्द्र! दुखमय, बन्ध सब तोड़ूँ विभो।।

16. श्री शान्तिनाथ भगवान स्तवन

जन्म क्षण में ही जगत में, सहज ही साता हुई।
सहस्र नेत्रों देखते, नहिं इन्द्र को तृप्ति हुई।।
विभव चक्री का प्रभो निस्सार जाना आपने।
हे शान्तिजिन! सुखशान्तिमय, निजपद प्रकाशा आपने।।

17. श्री कुन्थुनाथ भगवान स्तवन

प्रभु अहिंसा धर्म जग में, आपने विस्तृत किया।
मैत्री-प्रमोद, दया तथा माध्यस्थ भाव सिखा दिया।।
अनुभूत मुक्तिमार्ग का, उपदेश दे प्रभु शिव बसे।
हे कुन्थुनाथ जिनेन्द्र! सहज सु, भक्ति उर में उल्लसे।।

18. श्री अरनाथ भगवान स्तवन

षट् खण्ड पर पाकर विजय चक्री कहाये हे प्रभो।
फिर विजय पाकर मोह पर तीर्थेश कहलाये विभो।।
भव रहित भगवान आत्मा, आप दर्शाया हमें।
अरनाथ जिन! उपकार वश नित भाव से वन्दन तुम्हें।।

19. श्री मल्लिनाथ भगवान स्तवन

हे बाल ब्रह्मचारी प्रभो! चिद्-ब्रह्म रस में रम रहे।
यौवन समय निर्ग्रन्थ दीक्षा, धार शिवचारी भये।।
त्रैलोक्य जेता काम जीता, होय निर्मोही सहज।
हे मल्लिजिन! प्रभु रूप लखते, शीश झुक जाता सहज।।

20. श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान स्तवन

हे नाथ मुनिसुव्रत! तुम्हें, पाकर सनाथ हुआ जगत।
दिव्यध्वनि सुनकर सु जाना, भविजनों ने सत् असत्।।
असत् रूप विभाव तज, सत् भाव की आराधना।
भव्यजीव तिरें भवोदधि, हो सहज प्रभु वन्दना।।

21. श्री नमिनाथ भगवान स्तवन

अणुमात्र का स्वामित्व तज, त्रयलोक के स्वामी हुए।
आत्मा में मगन हो, सर्वज्ञ जगनामी हुए।।
शुद्धात्मा ही मंगलोत्तम, शरण रूप अनन्य है।
हो नमन नमि जिन! आपको, नमनीय रूप अनन्य है।।

22. श्री नेमिनाथ भगवान स्तवन

हे नेमि प्रभु! आदर्श है, वैराग्य जग में आपका।
चढ़ गये गिरनार स्वामी, तोड़ बन्धन पाप का।।
निर्ग्रन्थ हो, निर्द्वन्द्व हो, प्रभु मग्न निज में ही हुए।
प्रभुता सहज प्रकटी, अलौकिक तृप्त निज में ही हुए।।

23. श्री पार्श्वनाथ भगवान स्तवन

नाग-नागिन दग्ध लखकर, करुण हो सम्बोधिया।
धरणेन्द्र पद्मावती हुए, वैराग्य प्रभु तुम भी लिया।।
निर्ग्रन्थ हो आत्मार्थ साधा, हो गये परमात्मा।
जग को बताया पार्श्व प्रभु! परमात्मा सब आत्मा।।

24. श्री महावीर भगवान स्तवन

जीता सुभट दुर्मोह-सा प्रभु, मदन को निर्मद किया।
जग से विरत हो आत्मरत, परमात्म पद को पा लिया।।
तत्त्वोपदेश दिया प्रभो! आदेय शुद्धात्मा कहा।
हे वीर जिनवर! तुम प्रसाद सु, सहज निजपद मैं लहा।।

मंगलाचरण

(छंद-दोहा)

नेता मुक्ति-मार्ग के, साँचे तारणहार।
कर्म-कलंक विनष्ट कर, हुए विश्व ज्ञातार।।
तीर्थंकर चौबीस वर, मंगलमय अविकार।
भक्तिभाव से पूजते, मन में हर्ष अपार।।
पूजों समुच्चय रूप से, अरु प्रत्येक-प्रत्येक।
अन्तर माहिं निहारता, मैं अनेक में एक।।
निजानन्द निज में लहूँ, भोगों की नहिं चाह।
पाऊँ मैं भी आप-सम, रत्नत्रय की राह।।
जब तक नहीं निर्ग्रन्थ पद, प्रकटे मंगलरूप।
जिनवर पूजन के निमित्त, भाऊँ शुद्ध चिद्रूप।।
मुक्तिमार्ग की सुविधि ही, जान प्रशस्त विधान।
भक्ति-भाव से पूजते, करूँ भेद-विज्ञान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

श्री चौबीस तीर्थंकर समुच्चय पूजन

स्थापना

छंद-गीतिका

पंचकल्याणक सुपूजित, ऋषभ आदि जिनेश्वरा।
वर्तमान इस क्षेत्र में, विभु धर्म-तीर्थ प्रकट करा।।
पूजन करूँ अति भक्ति से, उपकार परम विचारि के।
बोधि-समाधि प्राप्त हो, यह भाव उर में धारि के।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

छंद-रोला

भव-भव में प्रभु जन्म मरण करि बहुदुख पाया।
दर्शन पाकर आज देव! अमरत्व लखाया।।
समता जल ले पूजूँ ध्याऊँ हे अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षमा भाव धरि क्रोधादिक पर प्रभु जय पाई।
आत्म-शान्ति की युक्ति दिव्यध्वनि से दरशाई।।
क्षमा भाव चन्दन ले पूजूँ हे अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

क्षत भावों में फँसकर नहिं संसार बढ़ाना।
नाथ इष्ट है तुम-सम ही अक्षय पद पाना।।
आत्म-भावना अक्षत ले पूजूँ अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

प्रभु प्रसाद से काम-सुभट क्षण में विनशाऊँ।
भाऊँ ब्रह्म स्वरूप सहज आनन्द प्रकटाऊँ।।
जजूँ पुष्प निष्काम भावमय ले अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

चपल इन्द्रियों पर जय पाकर तृप्ति पाऊँ।
निजानन्द रस आस्वादी हो क्षुधा मिटाऊँ।।

सहज तृप्त निर्वांछक हो पूजूँ अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी सुन भेदज्ञान कर मोह तजूँ मैं।
अन्तर्मुख हो परम भाव निज सहज लखूँ मैं।।
निर्मोही हो पूजूँ ध्याऊँ हे अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि.।

द्रव्य-भाव-नोकर्मों से शुद्धातम न्यारा।
अहो! आपकी साक्षी में प्रत्यक्ष निहारा।।
कर्म-कलंक नशाऊँ पूजूँ हे अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

हो निरीह निज से ही निज में शिवफल पाया।
नित्य मुक्त आतम परमातम-सम दर्शाया।।
ध्याऊँ आत्मस्वरूप सहज पूजूँ अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

अरे! धूल-सम जग वैभव क्षण में ठुकराया।
अन्तर्मग्न हुए अनर्घ्य निज वैभव पाया।।
जजूँ अर्घ्य ले शुद्ध भावमय हे अविकारी!
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

सहज भाव से पूज कर, गाऊँ शुभ जयमाल।
ध्याऊँ ध्येय स्वरूप निज, कटे कर्म जंजाल।।

छंद-भुजंगप्रयात

ऋषभनाथ पूजूँ महा सुक्खकारी,
अजितनाथ वन्दूँ करम रिपु संहारी।
सम्भव जिनेश्वर जजूँ शम-प्रदाता,
नमूँ नाथ अभिनन्दनं शिव-विधाता।।

सुमति पद्मप्रभ अरु सुपारस को वंदन,
अहो! चन्द्रप्रभ जिन भजूँ दुख-निकंदन।
श्री पुष्पदंत सु शीतल जिनेश्वर,
नमूँ भक्ति से पूज्य श्रेयांस जिनवर।।

प्रथम बालयति वासुपूज्य सुस्वामी,
करममल विघातक विमलजिन नमामि।
अनन्त जिनेश्वर सुगुणऽनन्त धारी,
नमूँ धर्मनाथं धरम-पथ प्रचारी।।

जजूँ शांतिनाथं परम शांतिदायक,
जयतु कुंथु जिनवर अहिंसा विधायक।
श्री अर जिनेन्द्रं धरम नीति धारी,
नमूँ मल्लि जिनवर परम ब्रह्मचारी।।

मुनिसुव्रतं नमि तथा नेमिनाथं,
नमूँ पार्श्वनाथं श्री वीरनाथं।

महा भक्ति से नाथ गुणगान करके,
धरम तीर्थ पाऊँ स्वपद दृष्टि धरिके।।
न लौकिक फलों की प्रभो कामना है,
न विष-सम कुभोगों की कुछ वासना है।।
रहो आप आदर्श निजपद को ध्याऊँ,
कि साधन ही क्या साध्य भी निज में पाऊँ।।

छंद-घत्ता

जय जय अविकारी, शिवसुखकारी, तीर्थेश्वर चौबीस भला।
जो प्रभु गुण गावें, मोह नशावें, पावें केवलज्ञान कला।।

ॐ ह्रीं ऋषभादिचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद-सोरठा

पूजें जिनपद सार, ध्यावें निज शुद्धात्मा।
सो पावें भव-पार, त्रिविध कर्ममल नाशि के।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

1. श्री ऋषभदेव जिनपूजन

स्थापना

छंद-दोहा एवं वीर

नमूँ जिनेश्वर देव मैं, परम सुखी भगवान।
आराधूँ शुद्धात्मा, पाऊँ पद निर्वाण।।
हे धर्मपिता सर्वज्ञ जिनेश्वर, चेतन मूर्ति आदि जिनम्।
मेरा ज्ञायक रूप दिखाने, दर्पण-सम प्रभु आदि जिनम्।।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण पा, सहज सुधारस आप पिया।
मुक्तिमार्ग दर्शा कर स्वामी, भव्यों प्रति उपकार किया।।

साधक शिवपद का अहो, आया प्रभु के द्वार।
सहज निजातम भावना, जिनपूजा का सार।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-वीर एवं दोहा

चेतनमय है सुक्ख सरोवर, श्रद्धा पुष्प सुशोभित हैं।
आनन्द मोती चुगते हंस, सुकेलि करें सुख पावें हैं।।
स्वानुभूति के कलश कनकमय, भरि-भरि प्रभु को पूजें हैं।
ऐसे धर्मी निर्मल जल से, मोह-मैल को धोते हैं।।
अथाह सरवर आत्मा, आनन्द रस छलकाय।
शान्त आत्म-रस पान से, जन्म-मरण मिट जाय।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मगन प्रभु चेतन सागर में, शान्ति जल से न्हाय रहे।
मोह-मैल को दूर हटाकर, भवाताप से रहित भये।।
तप्त हो रहा मोह-ताप से, सम्यक् रस में स्नान करूँ।
सम-रस चन्दन से पूजूँ अरु, तेरा पथ अनुसरण करूँ।।
चेतन रस को घोलकर, चारित्र सुगन्ध मिलाय।
भावसहित पूजा करूँ, शीतलता प्रकटाय।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्ष अगोचर प्रभो आप, पर अक्षत से पूजा करता।
अक्षातीत ज्ञान प्रकटा कर, शाश्वत अक्षय पद भजता।।
अन्तर्मुख परिणति के द्वारा, प्रभुवर का सम्मान करूँ।
पूजूँ जिनवर परम भाव से, निज सुख का आस्वाद करूँ।।

अक्षय सुख का स्वाद लूँ, इन्द्रिय मन के पार।
सिद्ध प्रभु सुख-मग्न ज्यों, तिष्ठे मोक्ष मँझार।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम अतीन्द्रिय देव अहो, पूजूँ मैं श्रद्धा सुमन चढ़ा।
कृतकृत्य हुआ निष्काम हुआ, तब मुक्तिमार्ग में कदम बढ़ा।।
गुण अनन्तमय पुष्प सुगन्धित, विकसित हैं निज आतम में।
कभी नहीं मुरझावें परमानन्द, पाया शुद्धातम में।।
रत्नत्रय के पुष्प शुभ, खिले आत्म-उद्यान।
सहज भाव से पूजते, हर्षित हूँ भगवान।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृप्त, क्षुधा से रहित जिनेश्वर, चरु लेकर मैं पूजा करूँ।
अनुभव रसमय नैवेद्य सम्यक्, तुम चरणों में प्राप्त करूँ।।
चाह नहीं किंचित् भी स्वामी, स्वयं स्वयं में तृप्त रहूँ।
सादि-अनन्त मुक्ति पद जिनवर, आत्मध्यान से प्रकट लहूँ।।
जग का झूठा स्वाद तो, चाख्यो बार अनन्त।
वीतराग निज स्वाद लूँ, होवे भव का अन्त।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अगणित दीपों का प्रकाश भी, दूर नहीं अज्ञान करे।
आत्मज्ञान की एक किरण भी, मोह-तिमिर को तुरत हरे।।
अहो! ज्ञान की अद्भुत महिमा, मोही नहिं पहचान सकें।
आत्मज्ञान का दीप जलाकर, साधक स्व-पर प्रकाश करें।।
स्वानुभूति प्रकाश में, भासे आत्म-स्वरूप।
राग पवन लागे नहीं, केवल-ज्योति अनूप।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वेष भाव तो नहीं रहा, रागांश मात्र अवशेष रहा।
ध्यान अग्नि प्रकटी ऐसी, तहँ कर्मेन्धन सब भस्म हुआ।।

अहो! आत्मशुद्धि अद्भुत है, धर्म सुगन्धी फैल रही।
दशलक्षण की प्राप्ति करने, प्रभु चरणों की शरण गही।।
स्व-सन्मुख हो अनुभवूँ, ज्ञानानन्द स्वभाव।
निज में ही हो लीनता, विनशैं सर्व विभाव।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन मूल अहो! चारित्र वृक्ष पल्लवित हुआ।
स्वानुभूतिमय अमृत फल, आस्वादूँ अति ही तृप्त हुआ।।
मोक्ष महाफल भी आवेगा, निश्चय ही विश्वास अहो।
निर्विकल्प हो पूर्ण लीनता, फल पूजा का प्रभु फल हो।।
निर्वांछक आनंदमय, चाह न रही लगार।
भेद न पूजक-पूज्य का, फल पूजा का सार।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् तत्त्व स्वरूप न जाना, नहिं यथार्थतः पूज सका।
राग-भाव को रहा पोषता, वीतरागता से चूका।।
काललब्धि जागी अंतर में, भास रहा है सत्य स्वरूप।
पाऊँगा निज सम्यक् प्रभुता, भास रही निज माहिं अनूप।।
सेवा सत्य स्वरूप की, ये ही प्रभु की सेव।
जिन-सेवा व्यवहार से, निश्चय आतम देव।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-सोरठा

कलि अषाढ़ द्वय जान, सर्वार्थसिद्धि विमान से।
आय बसे भगवान, मरुदेवी के गर्भ में।।
गर्भवास नहिं इष्ट, तहाँ भी प्रभु आनन्दमय।
माँ को भी नहिं कष्ट, रत्न पिटारे ज्यों रहे।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीऋषभदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पृथ्वी हुई सनाथ, नवमी कृष्णा चैत को।
नरकों में भी नाथ, जन्म समय साता हुई।।
इन्द्रादिक सिर टेक, कियो महोत्सव जन्म का।
मेरु पर अभिषेक, क्षीरोदधि तैं प्रभु भयो।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीऋषभदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भासा जगत असार, देख निधन नीलांजना।
नवमी कृष्णा चैत्र, परम दिगम्बर पद धरो।।
चिदानन्द पद सार, ध्याने को मुनि पद लिया।
परम हर्ष उर धार, लौकांतिक धनि धनि कहा।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीऋषभदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रकट्यो केवलज्ञान, फाल्गुन कृष्ण एकादशी।
धर्मतीर्थ अम्लान, हुआ प्रवर्तित आप से।।
समझा तत्त्वस्वरूप, दिव्यदेशना श्रवण कर।
पाई मुक्ति अनूप, भव्यन निज पुरुषार्थ से।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीऋषभदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पायो अविचल थान, चौदस कृष्णा माघ दिन।
गिरि कैलाश महान, तीर्थ प्रकट जग में हुआ।।
सहज मुक्ति दातार, शुद्धातम की भावना।
वर्ते प्रभु सुखकार, मैं भी तिष्ठूँ मोक्ष में।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीऋषभदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

आदीश्वर वन्दूँ सदा, चिदानन्द छलकाय।
चरण-शरण में आपकी, मुक्ति सहज दिखाय।।

छंद-वीर

धन्य ध्यान में आप विराजे, देख रहे प्रभु आतमराम।
ज्ञाता-दृष्टा अहो जिनेश्वर, परम ज्योतिमय आनन्दधाम।।
रत्नत्रय आभूषण साँचे, जड़ आभूषण का क्या काम?
राग-द्वेष निःशेष हुए हैं, वस्त्र-शस्त्र का लेश न नाम।।
तीन लोक के स्वयं मुकुट हो, स्वर्ण मुकुट का है क्या काम?
प्रभु त्रिलोक के नाथ कहाओ, फिर भी निज में ही विश्राम।।
भव्य निहारें अहो आपको, आप निहारें अपनी ओर।
धन्य आपकी वीतरागता, प्रभुता का प्रभु ओर न छोर।।
आप नहीं देते कुछ भी पर, भक्त आप से ले लेते।
दर्शन कर उपदेश श्रवण कर, तत्त्वज्ञान को पा लेते।।
भेदज्ञान अरु स्वानुभूति कर, शिवपथ में लग जाते हैं।
अहो! आप-सम स्वाश्रय द्वारा, निज प्रभुता प्रकटाते हैं।।
जब तक मुक्ति नहीं होती, प्रभु पुण्य सातिशय होने से।
चक्री इन्द्रादिक के वैभव, मिलें अन्न-संग के तुष-से।।
पर उनको चाहे नहिं ज्ञानी, मिलें किन्तु आसक्त न हों।
निजानन्द अमृत-रस पीते, विष-फल चाहे कौन अहो?
भाते नित वैराग्य भावना, क्षण में छोड़ चले जाते।
मुनि दीक्षा ले परम तपस्वी, निज में ही रमते जाते।।
घोर परीषह उपसर्गों में, मन-सुमेरु नहिं कम्पित हो।
क्षण-क्षण आनन्द रस वृद्धिंगत, क्षपकश्रेणि आरोहण हो।।
शुक्लध्यान बल घाति विनष्टे, अर्हत् दशा प्रकट होती।
अल्प काल में सर्व कर्ममल-वर्जित मुक्ति सहज होती।।
परमानन्दमय दर्श आपका, मंगल उत्तम शरण ललाम।
निरावरण निर्लेप परम प्रभु, सम्यक् भावे सहज प्रणाम।।

ज्ञान माहिं स्थापन कीना, स्व-सन्मुख होकर अभिराम।
स्वयं सिद्ध सर्वज्ञ स्वभावी, प्रत्यक्ष निहारूँ आतमराम।।

छंद-दोहा

प्रभु नन्दन मैं आपका, हूँ प्रभुता सम्पन्न।
अल्प काल में आपके, तिष्ठूँगा आसन्न।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

दर्शन-ज्ञान स्वभावमय, सुख अनन्त की खान।
जाके आश्रय प्रकटता, अविचल पद निर्वाण।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

2. श्री अजितनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-दोहा

मोह महारिपु जीत कर, कामादिक रिपु जीत।
सर्व कर्ममल धोय के, मेटी भव की रीति।।
भावसहित पूजा करूँ, प्रभु चित माहिं बसाय।
तृप्त रहूँ आनन्द में, जाननहार जनाय।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-रोला

शाश्वत प्रभु अवलोक, परम आनन्द उपजाया।
प्रभु-प्रसाद से जन्म जरांतक, भय विनशाया।।

अजित जिनेश्वर भक्तिभाव से पूजन तेरा।
करूँ सहज हो, वृद्धिंगत रत्नत्रय मेरा।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

सहज ज्ञान में भासित, ज्ञायक अनुभव आये।
शान्त ज्ञेय निष्ठा हो, भव आताप नशाये।।अजित...।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत विभाव से भिन्न, स्वयं को अक्षय ध्याऊँ।
प्रभु का यह उपकार, सहज अक्षय पद पाऊँ।।अजित...।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

रहूँ परम निष्काम, आत्म-आश्रय के बल से।
सर्व वासना मिटे, ब्रह्मचर्य के ही बल से।।अजित...।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा-वेदना की पीड़ा कैसे उपजावे?
वेदक वेद्य अभेद, ज्ञान वेदन में आवे।।अजित...।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चित्प्रकाशमय सदा सहज, निर्मोह निजातम।
आराधूँ हे नाथ! प्रकट हो पद परमातम।।अजित...।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जलें ध्यान की अग्नि माहिं, सब कर्म विकारी।
अहो विभो! निष्कर्म अवस्था, हो अविकारी।।अजित...।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जगा हृदय बहुमान, देव तुम पूज रचाई।
हुआ परम फल, फल की अभिलाषा विनशाई।।अजित...।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हो अनर्घ्य हे नाथ! अर्घ्य क्या तुम्हें चढ़ाऊँ?
अन्तर्मुख हो पूजक-पूज्य, सु-भेद मिटाऊँ।।अजित...।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-सोरठा

गर्भवास निष्ताप, जेठ अमावस के दिना।
कीना प्रभुवर आप, भावसहित पूजूँ चरण।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ-अमावस्यायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म भयो सुखकार, माघ सुदी दशमी दिवस।
आनन्द अपरम्पार, भयो सहज त्रय लोक में।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशम्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिपद दीक्षा धार, माघ सुदी दशमी दिना।
हो निःशल्य अविकार, सहज निजातम साधिया।

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशम्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घाति कर्म निरवार, पौष सुदी एकादशी।
पूर्ण ज्ञान सुखकार, पाया प्रभु अरिहन्त पद।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाया प्रभु निर्वाण, चैत्र सुदी तिथि पंचमी।
शिखर सम्मेद महान, मैं पूजों अति चाव सौं।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपंचम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

ज्ञान-शरीरी नाथ को, ज्ञान माहिं अवलोक।
ज्ञानमयी आनन्द हो, मिटें उपद्रव शोक।।

छंद-गीतिका

जित-शत्रु नन्दन, भवनिकन्दन, ज्ञानमय परमात्मा।
जयमाल गाऊँ भक्ति से, ध्याऊँ सहज शुद्धात्मा।।
पूर्व भव में विमलवाहन, भूप नीतिमान थे।
श्रुतकेवली मुनिराज देखे, जो गुणों की खान थे।।

उपदेश सुन अन्तर्मुखी, परिणमन प्रभु तुमने किया।
संसार में अब नहिं रहूँ, संकल्प तत्क्षण कर लिया।।
निर्ग्रन्थ हो निर्द्वन्द्व हो, भायीं सु सोलह भावना।
प्रकृति तीर्थंकर बँधी, शुभ रूप मंगल कारना।।

संन्यास पूर्वक देह तज कर, हुए प्रभु अहमिन्द्र थे।
थी शुक्ल-लेश्या भाव निर्मल, वासना से शून्य थे।।
छह माह आयु शेष थी, तब रत्न-धारा बरसती।
सुन्दर हुई सम्पन्न अति, साकेत नगरी हरषती।।

सोलह सु सपने मात देखे, गर्भ में आये प्रभो।
कल्याण देवों ने मनाया, सभी हरषाये अहो।
फिर जन्मते अभिषेक इन्द्रों ने, सुमेरु पर किया।
थे सहज वैरागी, नहीं राज्यादि करते रस लिया।।

नक्षत्र टूटा देखते, वैराग्यमय चिन्तन किया।
अनुमोदना लौकान्तिकों की, पाय हरषाया हिया।।
आनन्दमय निर्ग्रन्थ दीक्षा, धरी प्रभु आनन्द से।
आराधना करते प्रभो, छूटे करम के फन्द से।।

होकर स्वयंभू देव, मुक्ति-मार्ग दर्शाया सहज।
पुनि घाति शेष अघातिया, ध्रुव सिद्धपद पाया सहज।।
पूजा करूँ प्रभु आपकी, निष्काम हो निष्पाप हो।
परिणति स्वयं में लीन हो, आदर्श जग में आप हो।।

उच्छिष्ट-सम छोड़े हुए, भव-भोग इष्ट नहीं मुझे।
मम नित्य ज्ञानानन्दमय प्रभु, परम इष्ट मिला मुझे।।
सन्तुष्ट हूँ अति तृप्त हूँ, रतिवन्त हूँ निज भाव में।
जयवन्त हो श्री जैनशासन, नमन सहज स्वभाव में।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद-दोहा

प्रभुवर चरण प्रसाद से, विजित होंय सब कर्म।
स्वाभाविक प्रभुता खिले, रहूँ सदा निष्कर्म।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

3. श्री सम्भवनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-दोहा

नमूँ जिनेश्वर देव मैं, अनन्त चतुष्टयवान।
आवागमन रहित प्रभो! करता भावाह्वान।।
दृष्टि-ज्ञान-सुध्यान में, सदा विराजो आप।
आओ प्रभु! सन्निकट हो, मेटो मम भवताप।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-अवतार

प्रभो! जन्म-मरण से पार, आतमतत्त्व लखा।
जीवन का सहज प्रवाह, अनादि-अनन्त दिखा।।

हे सम्भवनाथ जिनेश! पूजों सुखदाई।
हे प्रभु! तुम चरण प्रसाद, आतम निधि पाई।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

प्रभु भव-भव का सन्ताप, सहज विनष्ट हुआ।
लोकोत्तर चन्दन आप, मैं कृतकृत्य हुआ।। हे सम्भव।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

विभु अक्षयपद अभिराम, आप दिखाया है।
अक्षत से पूजत स्वामि, चित हरषाया है।। हे सम्भव।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शोभे जिन सौम्य स्वरूप, अनुपम अविकारी।
ध्रुव ब्रह्म रूप चिद्रूप, ध्याऊँ सुखकारी।। हे सम्भव।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हो सहज तृप्त जिनराज, अपने माहिं सही।
सन्तुष्ट हुआ चित आज, वांछा शेष नहीं।। हे सम्भव।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मोही आत्मस्वभाव, तुम-सम पहचाना।
नाशूँ दुर्मोह विभाव, प्रभु निज पद जाना।। हे सम्भव।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन काया माहिं, अग्नि ध्यानमयी।
हो ज्वलित कर्म विनशाहिं, वर्तूं ज्ञानमयी।। हे सम्भव।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु प्रभुता पूर्ण निहार, परमानन्द हुआ।
प्रभु पूजक भेद विडार, जाननहार हुआ।। हे सम्भव।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रादिक पद निस्सार, भासे दुखकारी।
पाऊँ अनर्घ्य पद सार, अविचल अविकारी।। हे सम्भव।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

तर्ज : घड़ी जिनराज दर्शन की....

अहो! फागुन सुदी आठें, खोलते कर्म की गाँठें।
नाथ जब गर्भ में आये, जजत इन्द्रादि हर्षाये।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्ल-अष्टम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीसम्भवनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णिमा कार्तिकी सुखमय, जन्मकल्याण मंगलमय।
भव्य बहुमान से पूजें, पूजते कर्म-रिपु धूजें।।

ॐ ह्रीं कार्तिकपूर्णिमायां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीसम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णिमा मगसिरी आई, धरी दीक्षा सु सुखदाई।
किया कचलौंच प्रभु ऐसे, कर्म लौंचे हों जिन जैसे।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षपूर्णिमायां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीसम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थी कृष्ण कार्तिक को, नशाया कर्म घाति को।
हुआ केवल सुमंगलमय, पूजते नष्ट हो भव-भय।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णचतुर्थ्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीसम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत सुदि षष्ठी सुखदाई, प्रभो! पंचम गति पाई।
अहो जिनराज को जजते, मुक्ति मिलती सहज भजते।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लषष्ठ्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीसम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

दुर्गम भवसागर विषैं, तारण-तरण जिहाज।
भक्तिभाव उर में धरूँ, गुण गाऊँ जिनराज।।

छंद-वीर

पूजन करते नाथ आपकी, आनन्द अपरम्पार रे।
भव-विरहित हे सम्भव जिनवर! सहज लहूँ भवपार रे।।टेक।।

द्रव्येन्द्रिय भावेन्द्रिय अरु, इन्द्रिय विषयों से भिन्न हो।
सहज अतीन्द्रिय ज्ञानानंदमय, अनुभव करूँ अखिन्न हो।।
करूँ देव परमार्थ स्तुति, रहूँ सहज अविकार रे।।पूजन।।

एक शुद्ध निर्मम निर्मोही, स्वयं स्वयं को जान मैं।
होय क्षीण मोहादि कर्म-रिपु, ऐसा धारूँ ध्यान मैं।।
रहे प्रतिष्ठित ज्ञान ज्ञान में, चाह न रही लगार रे।।पूजन।।

उड़ते पक्षी की छाया-सम, विषयों से सुख की आशा।
महाक्लेशकारी प्रभु जानी, पुद्गल का क्या विश्वासा?
हो निराश जग से हे स्वामिन्! साधूँ निज पद सार रे।।पूजन।।

रचना मेघ विघटते लखकर, जिनदीक्षा ली अविकारी।
आत्मध्यान धरि कर्म नशाये, अक्षय प्रभुता विस्तारी।।
धर्मतीर्थ का किया प्रवर्तन, तिहुँ जग तारणहार रे।।पूजन।।

तीर्थ स्वरूप आपको पाकर, भेदज्ञान की ज्योति जगी।
दुखकारी परलक्ष्यी परिणति, नाथ सहज ही दूर भगी।।
करूँ देव! अनुकरण आपका, शिवस्वरूप शिवकार रे।।पूजन।।

मोहीजन को लगे असम्भव, रागादि का मिट जाना।
आज सहज सम्भव भासे प्रभु! वीतराग पद पा जाना।।
प्रभु-प्रसाद मिट जावे, पूजक-पूज्य भेद दुखकार रे।।पूजन।।

छंद-वसंततिलका

इन्द्रादि शीश नावें, आनन्द बढ़ावें, अति भक्ति-भाव लावें, पूजा रचावें।
मैं अर्चना करूँ क्या है शक्ति थोड़ी, पूजन निमित्त परिणति निजमाहिं जोड़ी।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-सोरठा

जो पूजें मन लाय, सम्भवनाथ जिनेश को।
पावें इष्ट अघाय, अविनाशी शिवपद लहें।।
पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

4. श्री अभिनन्दननाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-वीर

चन्द्रकान्ति की सूर्य तेज की, इन्द्र विभव की चाह करें।
ऐसी कान्ति तेज अरु वैभव, अभिनन्दन प्रभु सहज धरें।।
गुण अनुपम अक्षय हैं जिनवर, क्या महिमा का गान करूँ।
हृदय विराजो अभिनन्दन प्रभु, निजानन्द रसपान करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-गीतिका

आया शरण जिननाथ की, जब सहज ही अतिशय हुआ।
दिखा शाश्वत आत्मा, मरणादि से निर्भय हुआ।।
नाथ अभिनन्दन प्रभु की, करूँ पूजा भक्ति से।
पाऊँ विशुद्धि परम जिनवर-सम स्वयं की शक्ति से।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जिनरूप लख मैंने लखा, शीतल स्वभाव सु आपका।
चन्दन चढ़ा निज पद भजूँ, कारण नशे भवताप का।।नाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षय जिनेश्वर पद निरख, इन्द्रादि पद दुखमय लगे।
निज भावमय अक्षत चढ़ाऊँ, भाग्य मेरे हैं जगे।।नाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

जिनराज गुणमय सुमन माला, कंठ में धारण करूँ।
निष्काम परम सुशील पाऊँ, भाव अब्रह्म परिहरूँ।।नाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

स्वानुभवमय सरस चरु यह, आप ढिंग पाया प्रभो।
तृप्ति हुई ऐसी कि काल अनन्त तृप्त रहूँ विभो।।नाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

निज ज्ञानदीप प्रकाश से, आलोकमय मेरा सदन।
झलके सुलोकालोक ऐसा, ज्ञान केवल लहूँ जिन।।नाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

यह देह धूपायन बनाकर, ध्यान की अग्नि जला।
भस्म कर्मों को करूँ, जिनधर्म है मुझको मिला।।नाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं शेष कुछ वांछा रही, पूजा सफल मेरी हुई।
निश्चय मिले मुक्ति सुफल, जब दृष्टि है सम्यक् हुई।।नाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्या मूल्य है जड़ अर्घ्य का, पाया अनर्घ्य निजात्मा।
अर्घ्य उत्तम प्रभु चढ़ाऊँ मुदित हो परमात्मा।।नाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-सोरठा

आये गर्भ मँझार, माँ सिद्धार्था धनि हुई।
देव किया जयकार, षष्ठी सुदी वैशाख दिन।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठ्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हुआ जन्म सुखकार, माघ सुदी बारस तिथि।
हर्षित इन्द्र अपार, उत्सव नाना विधि किये।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नश्वर मेघ निहार, हो विरक्त जिननाथ जी।
दीक्षा ली सुखकार, माघ सुदी बारस दिना।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रही सहज हो नाथ, वर्ष अठारह मुनि दशा।
आप हुए जिननाथ, पौष सुदी चौदस दिना।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आनन्द कूट प्रसिद्ध, शिखर सम्मेद महान है।
तहँ तें भये सु सिद्ध, षष्ठी सुदी वैशाख प्रभु।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठ्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीअभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

जयमाला जिनराज की, गाऊँ मंगलकार।
जिनकी शुभ परिणति लखे, हो वैराग्य उदार।।

छंद-चौपाई

वन्दन अभिनन्दन स्वामी को, चौथे तीर्थंकर नामी को।
विदेह क्षेत्र में नृपति महाबल, न्यायवन्त शोभें बहु दलबल।।

इक दिन सहज रूप वैरागे, यों मनमाहिं विचारन लागे।
ओस-बिन्दु-सम वैभव सारा, दुख कारण सब ही परिवारा।।

ज्यों ज्यों भोग मनोहर पावे, तृष्णा त्यों त्यों बढ़ती जावे।
जब तक श्वासा तब तक आशा, आशावान जगत के दासा।।

जब मन की आशा मर जावे, परम सुखी जगनाथ कहावे।
सुख सिद्धि का एकहि साधन, निज ज्ञायक प्रभु का आराधन।।

अब मैं समय नहीं खोऊँगा, जग-प्रपंच तज मुनि होऊँगा।
यों विचार त्यागा संसारा, आनन्दमय निर्ग्रन्थ पद धारा।।

तज परिग्रह प्रभु हुए विरागी, हर्ष सहित मुनि दीक्षा धारी।
उत्तम तीर्थंकर पददायी, सोलहकारण भावना भायी।।

देह समाधिपूर्वक छोड़ी, निज परिणति निज में ही जोड़ी।
विजय विमान माहिं उपजाये, हो अहमिन्द्र दिव्य सुख पाये।।

छह महीना आयुष्य रह गई, नगरि अयोध्या शोभित भई।
रत्न धनपति ने बरसाये, माँ को सोलह स्वप्न दिखाये।।

अन्तिम गर्भ माहिं प्रभु आये, कल्याणक इन्द्रादि मनाये।
जन्मादिक के उत्सव भारी, जग प्रसिद्ध सबको सुखकारी।।

भोगों की कुछ कमी नहीं थी, परिणति फिर भी रँगी नहीं थी।
तप धर केवलज्ञान सु पाया, मंगल धर्मतीर्थ प्रकटाया।।

समवसरण की शोभा प्यारी, बारह सभा लगीं सुखकारी।
गणधर इक सौ तीन विराजे, सोलह सहस्र केवली राजे।।

लाखों साधु आर्यिका सोहें, संघ चतुर्विध मन को मोहें।
महा तत्त्व दर्शाया स्वामी, पाऊँ मैं भी अन्तर्यामी।।

सकल विभव तज मोक्ष पधारे, आऊँ नाथ समीप तुम्हारे।
भावसहित अभिनन्दन करते, शाश्वत प्रभु को नित्य सुमरते।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद-सोरठा

पूजा हो सुखकार, अभिनन्दन जिनराज की।
पावें शिवपद सार, आकुलता का नाश हो।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

5. श्री सुमतिनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-गीतिका

देवेन्द्र और नरेन्द्र चरणों में सदा सिर नावते।
हर्षावते गुण गावते निज भव-भ्रमण विनशावते।।
उन सुमति जिन की अर्चना को मम हृदय उमगावता।
असमर्थ हूँ अल्पज्ञ हूँ फिर भी प्रभो! गुण गावता।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

(तर्ज : भावना रथ पर चढ़ जाऊँ....)

सुमति जिन पूजों हरषाई।
कुमति विनाशक, सुमति प्रकाशक पूजों हरषाई।।टेक।।
भूल स्वयं को भव-भव भटक्यो, महाक्लेश पाई।
जन्म-मरण नाशन को पूजों, जल से सुखदाई।।सुमति।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव आताप निवारण को, चन्दन से अधिकाई।
प्रभु के चरण जजों अविनाशी शीतलता दाई।।सुमति।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्रुव के आश्रय से हे जिनवर! ध्रुव गति प्रकटाई।
भक्तिभाव अक्षत सों पूजों, अक्षय पद दाई।।सुमति।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्योदय के सकल भोग, बिन भोगे खिर जाई।
काम-वासना ब्रह्मचर्य के बल से विनशाई।।सुमति।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भोजन सकल असार दिखे, हे परम तृप्ति दाई।
अमृत झरे अहो! अन्तर में, क्षुधा न उपजाई।।
सुमति जिन पूजों हरषाई।
कुमति विनाशक, सुमति प्रकाशक पूजों हरषाई।।टेक।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्य-चन्द्र भी हर न सकें, जिस तम को जिनराई।
ज्ञानज्योति ताके नाशन को, प्रभुवर प्रकटाई।।सुमति।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म-ध्यान की अग्नि, कर्मनाशन को प्रज्वलाई।
स्वाभाविक दशधर्म सुगन्धी, जग में फैलाई।।सुमति।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भौतिक फल अब नहीं चाहिए, भव-भव दुखदाई।
महामोक्ष फल प्रकटाने को, परम शरण पाई।।सुमति।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तर में विलसाई स्वामी, अद्भुत प्रभुताई।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भक्ति जिनेश्वर, उर में उमगाई।।सुमति।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-चाल

सोलह सपने माँ देखे, वर्ते उर हर्ष विशेषे।
सावन सित दूज सुहाई, गरभागम मंगलदाई।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लद्वितीयायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सित चैत एकादशि आई, जन्मे त्रिभुवन सुखदाई।
कल्याणक इन्द्र मनावें, भवि पूजत बहु सुख पावें।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैशाख शुक्ल नवमि दिना, तप धारा श्री भगवाना।
पूजत पद भावना भाऊँ, निर्ग्रंथ दशा कब पाऊँ।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लनवम्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सित चैत एकादशि आई, प्रभु केवल लक्ष्मी पाई।
सुर समवसरण रचवाया, धर्मामृत प्रभु बरसाया।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकादशि चैत सुदी की, पाई पंचम गति नीकी।
प्रभु सविनय अर्घ्य चढ़ाऊँ, निर्मुक्त महापद ध्याऊँ।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

इन्द्रादिक पूजित चरण, धन्य-धन्य जिनराज।
भक्ति सहित गुण गाँय हम, पावें सुगुण समाज।।

छंद-पद्धरि

जय सुमति जिनेश्वर गुण गरिष्ठ, दर्शायो निजपद परम इष्ट।
प्रभु स्वयंसिद्ध मंगलस्वरूप, बिन्मूरति चिन्मूरति अनूप।।
निरपेक्ष निरामय निर्विकार, जयवन्तो शाश्वत समयसार।
निज साधन से ही साध्य हुए, आराधन कर आराध्य हुए।।

अक्षय अनन्त गुण प्रकटाये, कर्मों के बादल विघटाये।
जय दर्शन-ज्ञान अनन्त देव, सुख-वीर्य अनन्त हुए स्वयमेव।।
अद्भुत प्रभुता जिनराज अहो, महिमा है अपरम्पार प्रभो।
निष्काम स्वयं में रहे पाग, जग से निःस्पृह हे वीतराग।।

निर्भूषण जग-भूषण जिनेश, नाशे प्रभु जग के सब क्लेश।
जब शान्तमूर्ति का अवलोकन, अनुपमस्वरूप का हो चिन्तन।।

रागादि स्वयं ही होंय मन्द, हों शिथिल सहज ही कर्म बन्ध।
स्वाभाविक आनन्द स्वाद पाय, फिर परिणति निज में ही रमाय।।

नाशे पर की झूठी ममता, सब में समता निज में रमता।
परिणाम सहज अविकारी हो, मंगलमय मंगलकारी हो।।
लक्ष्मी चरणों की दासी हो, फिर भी प्रभु सहज उदासी हो।
इन्द्रादिक पद की चाह न हो, उपसर्गों की परवाह न हो।।

अन्तर्पुरुषार्थ बढ़े स्वामी, हो साधु दशा त्रिभुवननामी।
वृद्धिंगत होवे रत्नत्रय, कर्मों का होता जावे क्षय।।
रागादि दोष निःशेष होंय, प्रभु आत्मीक गुण प्रकट होंय।
यों मोक्षमार्ग का निमित्त देख, जागी उर में भक्ति विशेष।।

भक्तिवश ही गुणगान किया, पूजन करते हरषाय हिया।
तुम शासन पा परमार्थ ध्याय, पाऊँ पद अक्षय सौख्यदाय।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

कुमति विनाशक सुमति जिन, पायो सुखद सहाय।
निश्चय निज प्रभुता लहूँ, आवागमन नशाय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

6. श्री पद्मप्रभ जिनपूजन

स्थापना

छंद-अडिल्ल

जय जय पद्म जिनेश, परम सुख रूप हो,
स्वानुभूति के निमित्त शुद्ध चिद्रूप हो।
दर्शन पाकर हुआ सहज आनन्दमय,
करूँ अर्चना रागादिक पर हो विजय।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-गीतिका

इन्द्रादि से पूजित दरश कर, परम ज्ञान प्रकाशिया।
पान कर समता सुधा, जन्मादि का भय नाशिया।।
भव भोग तन वैराग्य धार, सु शुद्ध परिणति विस्तरूँ।
श्री पद्मप्रभ जिनराज की पूजा करूँ भव से तिरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवचन सुन निजभाव लखि, परिणाम अति शीतल भया।
चन्दन नहीं भवताप नाशक, जान तुम आगे तज्या।।भव.।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अखण्ड सुगुण करण्ड, चिदात्म देव महान है।
सो प्रभु प्रसादहिं पाइयो, जागा सहज बहुमान है।।भव.।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु ज्ञानमय ब्रह्मचर्य ही है परम औषधि काम की।
तातैं जिनेश्वर शरण आया, कामना तजि वाम की।।भव.।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज हेतु निज में ही निरन्तर, झरे अमृत ज्ञानमय।
ताके आस्वादत तृप्ति हो, नाशें क्षुधादिक दुःखमय।।भव.।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञान-तम में भटकते जो, दुख सहे कैसे कहूँ?
प्रभु भेदज्ञान प्रकाश करि, निर्मोह निज आतम लहूँ।।भव.।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्यानाग्नि में नाशे करम मल, आत्म शुद्ध कहाय है।
निष्कर्म अविनाशी स्वपद हो, भव-भ्रमण नशि जाय है।।भव.।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्त्व जिसका मूल है, चारित्र धर्म धरूँ सही।
ताके प्रभाव लहूँ सहज, ध्रुव अचल अनुपम शिव मही।।
भव भोग तन वैराग्य धार, सु शुद्ध परिणति विस्तरूँ।
श्री पद्मप्रभ जिनराज की पूजा करूँ भव से तिरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि आत्मधर्म अनर्घ्य स्वामी, अर्घ्य से पूजूँ अहो।
इन्द्रादि पद के विभव भी, निस्सार भिन्न लगें प्रभो।।भव.।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-होली

श्री पद्मप्रभ जिनराजजी, जयवन्तो सुखकार।
माघ कृष्ण षष्ठी दिन आये, स्वामी गर्भ मँझार।
करें देवियाँ सेवा माँ की, वर्षे रत्न अपार।।श्री पद्मप्रभ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णषष्ठ्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को, जन्मे जग दुखहार।
जन्म महोत्सव सुरगण कीनो, घर-घर मंगलाचार।।श्री पद्मप्रभ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जातिस्मरण निमित्त हुआ प्रभु, लख संसार असार।
कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को, दीक्षा ली अविकार।। श्री पद्मप्रभ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कौशाम्बी वन शुक्लध्यान धर, केवललक्ष्मी सार।
पाई चैत सुदी पूनम को, त्रेसठ प्रकृति निवार।।श्री पद्मप्रभ।।

ॐ ह्रीं चैत्रपूर्णिमायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहन कूट शिखर से प्रभुवर, सर्व कर्ममल टार।
फाल्गुन कृष्णा चौथ के दिन, पायो शिवपद सार।।
श्री पद्मप्रभ जिनराजजी, जयवन्तो सुखकार।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्थ्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

जयमाला जिनराज की, गाऊँ भवि सुखदाय।
पाऊँ ज्ञान-विरागता, सकल उपाधि नशाय।।

छंद-नाराच

पद्म के समान कान्तिमान पद्मप्रभ जिनेन्द्र,
वन्दते सु भक्ति से तीन लोक के शतेन्द्र।
दिखावते असार पुण्य का विभव मनो प्रभो,
सारभूत आत्मीक ज्ञान सुख अहो अहो।।1।।

द्रव्यदृष्टि धारिके, मिथ्यात्व भाव नाशिके,
विषय कषाय त्यागि के निर्ग्रन्थ पद सु धारिके।
सार्थक किया प्रभो! सुनाम अपराजितं,
भावना हृदय जगी सहज सोलहकारणं।।2।।

तीर्थंकर प्रकृति बँधी आप ग्रैवेयक गये,
गर्भ समय मात को सोल स्वप्ने भये।
जन्म समय इन्द्र ने सुमेरु पर न्हवन किया,
पद्म चिह्न पद्मप्रभ नाम को प्रसिद्ध किया।।3।।

राज्यकाल में भी प्रभु-अंतरंग उदास था,
चित्त में स्व-चित्स्वरूप का ही मात्र वास था।

एक दिवस देख द्वार पर बँधे सु हस्ति को,
हुआ सु जाति-स्मरण सहज प्रभो विरक्त हो।।4।।

त्याग सर्व परिग्रह साधु दीक्षा धरी,
ध्यान ऐसा किया कर्म प्रकृति हरी।
छठवें तीर्थनाथ वर्तमान के हुए,
वज्र चामर आदि शतक गणधर हुए।।5।।

समवशरण माहिं अंतरीक्ष मन मोहते,
अष्ट प्रातिहार्य सह अनेक विभव सोहते।
ओंकार ध्वनि खिरी तत्त्व दर्शित हुए,
आत्मबोध प्राप्त कर भव्य हर्षित हुए।।6।।

सिद्ध-सम शुद्ध बुद्ध आत्मा दिखा दिया,
गुणस्थान आदि से भिन्न दर्शा दिया।।
मोह आदि दु:खरूप बन्ध हेतू कहे,
ज्ञानमय संवरादि मुक्ति-हेतू कहे।।7।।

मुक्तिदशा साध्य ध्येय शुद्ध आत्मा कहा,
आत्मदृष्टि धारि पूजते प्रभो! तुम्हें कहा।
साधु-संग होय प्रभु! असंग रूप ध्याऊँ मैं,
आपके प्रसाद सहज सिद्ध स्व-पद पाऊँ मैं।8।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद-सोरठा

पद्मप्रभ भगवान, लोक शिखर पर राजते।
पाऊँ आतमज्ञान, भाव सहित पूजूँ नमूँ।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

7. श्री सुपार्श्वनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-रोला

जिनवर पूजा भविजन को मंगलकारी है,
भाव विशुद्धि का निमित्त सब दुखहारी है।
पार्श्ववर्ति लख देह शुद्ध चेतन पद ध्यावें,
श्री सुपार्श्व भगवान भाव से पूज रचावें।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वननाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-दिग्पाल

मुनि मन-समान जल ले, जिनराज चरण पूजें।
आवागमन मिटे मम, जन्मादि दोष धूजें।।
पूजा सुपार्श्व स्वामी, ऐसी करूँ तुम्हारी।
हो तुम समान जिनवर, भावी दशा हमारी।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भवताप रहित प्रभु क्या? चन्दन तुम्हें चढ़ायें।
सुनकर वचन जिनेश्वर, नाशें सभी कषायें।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत अखण्ड लेकर, जिननाथ गुण विचारें।
अक्षय सुगुणमयी प्रभु, निज आत्मा निहारें।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ले पुष्प शीलमय जिन, होवें परम जितेन्द्रिय।
है उपादेय भासा, हमको भी सुख अतीन्द्रिय।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य सरस पाया, प्रभुता स्वयं स्वयं में।
क्षुत् वेदना नशायें, रम जायें हम स्वयं में।।
पूजा सुपार्श्व स्वामी, ऐसी करूँ तुम्हारी।
हो तुम समान जिनवर, भावी दशा हमारी।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार नाशे, पावें प्रकाश अनुपम।
हे पूर्ण ज्ञानमय प्रभु, चरणों में आए हैं हम।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हों भस्म कर्म सब ही, ऐसा हो ध्यान जिनवर।
हो धर्म से सुवासित, जीवन हमारा प्रभुवर।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्त्व मूल संयुक्त चारित्र तरु लगावें।
अक्षय अनन्त रसमय, मुक्ति के फल सु पावें।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

दुर्लभ सु अर्घ्य लेकर, हम भावना सँवारें।
अविचल अनर्घ्य प्रभुता, निज में ही प्रभु निहारें।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-सोरठा

गर्भागम सुखकार, भादों सुदि छठि को हुआ।
बरसे रतन अपार, सोलह सपने माँ लखे।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लषष्ठ्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश सुदी सु ज्येष्ठ, जन्मे त्रिभुवन नाथ जी।
इन्द्र कियो अभिषेक, पाण्डुक शिला सुमेरु पे।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मीक सुखसार, लखि प्रभुवर दीक्षा धरी।
गूँजा जय-जयकार, जेठ सुदी बारस दिना।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन कृष्णा षष्ठि, हुए स्वयंभू नाथ जी।
हर्षमयी हुई सृष्टि, दिव्य बोध को पाय के।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णषष्ठ्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखर सम्मेद महान, फाल्गुन कृष्णा सप्तमी।
प्रभु पायो निर्वाण, पूजें अति आनन्द सों।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

हुए विरक्त सु जगत से, पतझड़ लख जिनदेव।
निर्ग्रन्थ पथ अपनाय के, मुक्त हुए स्वयमेव।।

तर्ज : चित्स्वरूप महावीर.....

श्री सुपार्श्व जिनराज, मुक्ति पथ दरशाया।
परमानन्द स्वरूप, जिनेश्वर दरशाया।।टेक।।

द्रव्येन्द्रिय, भावेन्द्रिय, इन्द्रिय विषयों से प्रभु भिन्न कहा।
परम अतीन्द्रिय ज्ञानानन्दमय, सिद्धसमान स्वरूप कहा।।
स्वानुभूत जिनमार्ग, जिनेश्वर दरशाया।। श्री सुपार्श्व.।।

द्रव्यकर्म-नोकर्म-भावकर्मों से न्यारा देव कहा।
नित्य निरंजन निष्क्रिय-ध्रुव, निर्मुक्त चिदानन्द रूप अहा।।
नयातीत पक्षातिक्रान्त, प्रभु दरशाया।। श्री सुपार्श्व.।।

जीवसमास मार्गणा-गुणथानों से, ज्ञायक भिन्न अहा।
टंकोत्कीर्ण सु-अलिंगग्रहण, अव्यक्त स्वानुभवगम्य कहा।।
आश्रय करने योग्य, निजातम दरशाया।। श्री सुपार्श्व.।।

नव तत्त्वों के स्वांगों से, निरपेक्ष निरामय रूप कहा।
जिनने समझा भव-दुख नाशा, नित्यानन्द स्वरूप लहा।।
हेय-उपादेय भेद महेश्वर दरशाया।। श्री सुपार्श्व.।।

रागादिक दुख रूप बताये, वीतराग शिवपंथ कहा।
परम अहिंसा से ही होता, भव-भ्रमणा का अन्त अहा।।
रत्नत्रय अविकार तुम्हीं ने दरशाया।। श्री सुपार्श्व.।।

बहिरातमता हेय जान तज, अन्तर आतम हों स्वामी।
ध्रुव परमातम पद को साधें, तुम-सम ही अन्तर्यामी।।
धन्य-धन्य शिवरूप आपने दरशाया।। श्री सुपार्श्व.।।

जब तक आराधन पूरा हो, जिनशासन का योग मिले।
निर्मल आत्मभावना वर्ते, निज गुणमय उद्यान खिले।।
पाया स्वाश्रित मार्ग चरण में सिर नाया।। श्री सुपार्श्व.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

श्री सुपार्श्व जिनराज की, भक्ति करे जो कोय।
इन्द्रादिक पद पाय के, निश्चय मुक्त सु होय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

8. श्री चन्द्रप्रभ जिनपूजन

स्थापना

छंद-जोगीरासा

तज गृह-जाल महादुख कारण, चरण शरण में आया।
चन्द्र समान शान्त निर्मल छवि, लखि आनन्द उपजाया।।

तन-मन-धन है सर्व समर्पण, करूँ अर्चना स्वामी।
चंचल परिणति थिर हो निज में, तुम सम त्रिभुवननामी।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-भुजंगप्रयात

चढ़ाऊँ क्षमा भावमय नीर सुखकर,
नशें जन्म-मरणादि कारण सु-दुखकर।।
अहो! चन्द्रप्रभ जी की पूजा रचाऊँ,
सहज ज्ञानमय भावना सहज भाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन चढ़ाऊँ परम शान्तिमय प्रभु,
भवाताप नाशे जजूँ आपको विभु।। अहो...।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत अमल भावमय देव लाऊँ,
विनाशीक जग के अपद नाहिं चाहूँ।। अहो...।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

अतीन्द्रिय निजानन्द निज माहिं सरसे,
सतावे नहीं काम जिनवर शरण से।। अहो...।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चिदानन्द-सुधारस प्रभो पान करके,
क्षुधादिक महादोष क्षणमाहिं हरके।।अहो...।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रकाशित सहज ज्ञान में नाथ ज्ञायक,
झलकते नशे मोह तम दुःखदायक।।अहो...।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जलें कर्म सब आत्म-ध्यानाग्नि माहीं,
सुविकसित हो निजगुण नहीं अन्त पाहीं।।अहो...।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

न लौकिक फलों की प्रभो! कामना है,
महा मोक्षफल पाऊँ यह भावना है।।अहो...।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

धरूँ भक्तिमय देव प्रासुक सु अर्घ्यम्,
लहूँ आत्मप्रभुता सु-अविचल अनर्घ्यम्।।अहो...।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-दोहा

चन्द्रप्रभ जिनराज का, गर्भागम सुखकार।
चैत कृष्ण पंचमी दिवस, पूजों भाव सम्हार।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपंचम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष कृष्ण एकादशी, जन्मे श्री जगदीश।
इन्द्रादिक उत्सव कियो, न्हवन कियो गिरि शीश।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-तन-भोगविरक्त हो, जिनदीक्षा अविकार।
धरी पौष वदि ग्यारसी, पूजों करि जयकार।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन श्यामा सप्तमी, प्रकट्यो केवलज्ञान।
आतम महिमा मुक्तिपथ, दर्शायो भगवान।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सित फाल्गुन सप्तमि गये, मुक्तिमाहिं परमेश।
पूजत पाप विनष्ट हों, धन्य-धन्य सर्वेश।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-सोरठा

जयवन्तो शिवभूत, अचिन्त्य महिमा के धनी।
परमानन्द स्वरूप, गाऊँ जयमाला प्रभो।।

तर्ज : हे दीनबन्धु....

हे चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र! सत्य शरण हो तुम्हीं।
हे वीतराग देव! तारण-तरण हो तुम्हीं।।

कर दर्श नाथ सहज ही कृतकृत्य हो गया।
प्रभु! स्वयं स्वयं में ही सहज तृप्त हो गया।।

विभु! तेज-पुंज आत्मा को आप जान के।
होकर उदास लोक से दीक्षा सु-धार के।।

ध्यानाग्नि में चहुँ घाति कर्म सहज जलाए।
अनन्त दर्श-ज्ञान-सुख-वीर्य तब पाए।।

अष्टम हुए तीर्थेश धर्मतीर्थ बताया।
ध्रुव तीर्थरूप आत्मा प्रत्यक्ष दिखाया।।

आत्मानुभूतिमय अहो परमार्थ तीर्थ है।
जिससे तिरें भवसिन्धु वह सत्यार्थ तीर्थ है।।

निजभाव में रमते सदा तुम ही सु राम हो।
निष्काम परम ब्रह्म हो आनन्द धाम हो।।

परमार्थ मुक्तिमार्ग के हो आप विधाता।
विश्वेश विष्णु रूप हो सब विश्व के ज्ञाता।।

अतिशय तुम्हें जो देखते वे दर्शनीय हों।
जो भावसहित पूजते वे पूजनीय हों।।

वांछा ही मिटे देव तुम्हारे सु ध्यान से।
हो प्रकट आत्मीक भाव आत्म-ध्यान से।।

प्रभु! ध्यानमय मुद्रा सहज वैराग्य जगाती।
रागांश हों निश्शेष ज्ञान ज्योति जगाती।।

चैतन्यमय परमार्थ भावना सहज रहे।
भवनाश हो शिववास हो, दुर्भावना दहे।।

गद्गद हुआ बहुमान से, बस मौन ही रहूँ।
नाथ! हो निर्ग्रन्थ तेरा पंथ मैं गहूँ।।

तेरे प्रसाद से सहज समाधि पाऊँगा।
ज्ञाता हूँ मुक्त ज्ञातारूप ही रहाऊँगा।।

छंद-घत्ता

श्री चन्द्र जिनेशं, जय जगतेशं, धर्मेशं भवसर-तारी।
अद्भुत प्रभुतामय, हुआ सु निर्भय, पूजत पद मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

समयसारमय आपकी, प्रभुता तिहुँ जग सार।
विस्मय उपजावे प्रभो, भुक्ति मुक्ति दातार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

9. श्री पुष्पदन्त जिनपूजन

स्थापना

छंद-गीतिका

अक्षय सु आतम निधि बताई, प्राप्ति की भी विधि प्रभो।
है सार्थक यह नाम भी जिन, सुविधिनाथ कहा अहो।।

सौभाग्य से अवसर मिला, पूजा करूँ अति चाव से।
हे पुष्पदन्त जिनेन्द्र! मैं छूटूँ विकारी भाव से।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-अडिल्ल

निर्मल जल ले, पूजूँ प्रभु हरषाय के,
जन्म जरा मृत नाशूँ निज पद ध्याय के।
पुष्पदन्त जिनराज करूँ गुणगान मैं,
होय प्रतिष्ठित सहज ज्ञान ही ज्ञान में।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भावमय चन्दन ले पूजा करूँ।
नाशे ताप कषायों का समता धरूँ।।पुष्पदन्त...।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजूँ निर्मल अक्षत से जिननाथ जी।
पाऊँ उत्तम धर्मी जन का साथ जी।।पुष्पदन्त...।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य पुष्प ले भाऊँ जिनवर भावना।
विषयों की हो स्वप्न माहिं भी चाह ना।।पुष्पदन्त...।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

झूठे नैवेद्य लख, निस्सार तजूँ प्रभो।
पीऊँ सन्तोषामृत तुम सम ही विभो।।पुष्पदन्त...।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज रतन रुचि दीप उजालूँ देव जी।
मोह महातम नशे सहज स्वयमेव जी।।पुष्पदन्त...।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्त-रौद्र तज आत्मध्यान धारूँ अहो।
जरें कर्ममल निजगुण विस्तारूँ प्रभो।।पुष्पदन्त...।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्य-पाप फल सकल जिनेश्वर त्यागकर।
पाऊँ जिनवर मुक्ति-फल आनन्दकर।।पुष्पदन्त...।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध भावमय अर्घ्य धरूँ आनन्द से।
पद अनर्घ्य हो बचूँ कर्म के फन्द से।।पुष्पदन्त...।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-चौपाई

नवमी फागुन वदी सुहाई, गर्भ कल्याण भयो सुखदाई।
सेवे मात देवि सुखकारी, पूजूँ जिनवर मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णनवम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मगसिर सुदि एकम दिन आया, इन्द्र जन्मकल्याण मनाया।
उत्सव नाना भाँति रचाई, मैं भी पूजूँ त्रिभुवन राई।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लप्रतिपदायां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक दिन उल्कापात हुआ था, अन्तर में वैराग्य हुआ था।
भाय भावना दीक्षा धारी, मगसिर सुदि एकम् सुखकारी।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लप्रतिपदायां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मध्यान प्रभु ऐसा धारा, नाशे घाति कर्म दुखकारा।
कार्तिक कृष्णा द्वितीया स्वामी, धर्मतीर्थ प्रकटा अभिरामी।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुप्रभ टोंक सम्मेद महाना, आप पधारे अविचल थाना।
भादों सुदि अष्टमि सुखकारा, पूजत होवे हर्ष अपारा।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्ल-अष्टम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

तीर्थंकर नववें प्रभो! अद्भुत महिमावन्त।
शाश्वत धर्म बताइया, रहे सदा जयवन्त।।

छंद-पद्धरि

हे पुष्पदन्त! हे सुविधिनाथ!! दर्शन पाकर हुआ सनाथ।
जिनराज भजूँ निजभाव सजूँ, परमानन्दमय चिद्रूप भजूँ।।
हे तेज-पुंज! हे धर्म-मूर्ति! हे ज्ञान-पुंज! चैतन्य-मूर्ति।
मंगलमय लोकोत्तम स्वरूप, भविजन को तुम ही शरणरूप।।
नाशे कर्माश्रित सब विभाव, प्रकटे स्वाश्रित आतम स्वभाव।
तुम दिव्यध्वनि सुन जगे ज्ञान, आतम-अनात्म की हो पिछान।।
पर्यायदृष्टि छूटे जिनन्द, प्रकटे अनुभव रस दुख निकन्द।
दुख कारण रागादिक दिखाय, पुरुषार्थ तिन्हें नाशन जगाय।।
वैराग्य भावना सहज होय, क्षण-क्षण में निज शुद्धात्म जोय।
निर्ग्रन्थ मार्ग में बढ़े जाय, तुम-सम अक्षय पदवी सु पाय।।
यों मुक्तिमार्ग के निमित्त आप, भव्यों के नाशो प्रभु सन्ताप।
हे परम धरम दातार देव, चरणों में शीश नमें स्वयमेव।।
जो पूजे सो जगपूज्य होय, आपद ताको आवे न कोय।
तुमढिंग वांछा ही प्रभु नशाय, निज में ही अद्भुत तृप्ति पाय।।
इन्द्रादिक पूजें चरण आन, अद्भुत अतिशय जिनवर महान।
ऐसी प्रभुता मैं भी सु पाय, तिष्ठूँ जिनेश तुम पास आय।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-सोरठा

पुष्पदंत भगवान, तीन लोक चूड़ामणि।
होय सकल कल्याण, जिन पूजा परसादतैं।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

10. श्री शीतलनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-अडिल्ल

कल्पवृक्ष शुभ चिह्न सुदेव मनोज्ञ है।
कल्पवृक्ष नहिं तुम उपमा के योग्य है।।
अविचल सुख दातार सहज ज्ञातार हो।
हृदय विराजो प्रभो! परम उपकार हो।।

छंद-दोहा

जय जय शीतलनाथ जिन, मिथ्या तपन नशाय।
परम जितेन्द्रिय भाव सों, पूजें मंगल-दाय।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-द्रुतविलम्बित

सहज समकित जल प्रभु धारिके, जन्म मरण कुरोग निवारिके।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भावनामय चन्दन लायके, दुःखमय भवताप नशायिके।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज संयम धारे सुखकरं, अखय पद को पावें जिनवरं।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पंच इन्द्रिय भोग विडारिके, भजें नित निष्काम विचारिके।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृप्त होवें निजरस लीन हो, क्षुधा तृष्णा सहजहिं क्षीण हो।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह नाशा सम्यग्ज्ञान से, क्या प्रयोजन दीपक भानु से।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

परम आतम-ध्यान लगायि के, लहें निज पद कर्म नशायि के।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मार्ग प्रभुवर का अहो! हम अनुसरें, पाप-पुण्य नशें शिवफल लहें।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

धरें अर्घ्य जिनेश्वर चरण में, तज प्रपंच सु आये शरण में।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-चौपाई

चैत्र कृष्ण अष्टमि दिन देव, अच्युत से च्युत हो स्वयमेव।
मात सुनन्दा उर अवतरे, गर्भकल्याणक सुख विस्तरे।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण-अष्टम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माघ कृष्ण द्वादश जिनराय, अन्तिम जन्म भयो सुखदाय।
जन्मकल्याणक पूजा करें, यही भाव फिर जन्म न धरें।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैभव यौवन इन्द्रिय-भोग, इन्द्रधनुष-सम लखे मनोग।
माघ कृष्ण द्वादशि दिन नाथ, धारी दीक्षा नावें माथ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वामी पौष चतुर्दशि श्याम, केवलज्ञान लह्यो अभिराम।
शोभें समवसरण के माहिं, दर्शन से भवि पाप नशाहिं।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टमि सित असौज भगवान, पायो अविचल पद निर्वाण।
भाव सहित हम शीश नमांय, ज्ञाता दृष्टा रह शिव पांय।।

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्ल-अष्टम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीशीतलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

सहज शान्त शीतल रहें, शीतल चरण प्रसाद।
गावें जयमाला सुखद, नाशें सर्व विषाद।।

छंद-त्रोटक

श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र नमूँ, जिन-तत्त्व समझ दुर्मोह वमूँ।
ज्ञायक हूँ सहज प्रतीति हो, आनन्दमय निज अनुभूति हो।।
पर में एकत्व ममत्व न हो, सपने में भी कर्तृत्व न हो।
परिणमन सहज होता भासे, ज्ञातृत्व सहज ही प्रतिभासे।।

कुछ इष्ट-अनिष्ट विकल्प न हो, दुखमय मिथ्या संकल्प न हो।
दुख कारण आस्रव बन्ध नशें, संवर निर्जर सुखमय विलसें।।
यों तत्त्व-प्रतीति नाथ धरें, प्रभु साक्षी हों भव-सिन्धु तरें।
निर्ग्रंथ भावना भावत हैं, अविनाशी निज पद चाहत हैं।।
विनशत मुक्ता-सम ओस-बिन्दु, निरखी प्रातः तुमने जिनेन्द्र।
तत्क्षण संसार असार तजा, आनन्दमय आतम रूप सजा।।
वस्त्राभूषण सब फेंक दिये, निर्मम होकर कचलोंच किये।
जिन योग अपूर्व लगाया था, दुष्कर्म समूह नशाया था।।
अद्भुत जिन-वैभव प्रकटाया, सुर समवसरण था रचवाया।
हुई दिव्य देशना सारभूत, भविजन को शुभ कल्याणभूत।।
लाखों प्राणी प्रतिबुद्ध हुए, तद्भव से भी बहु मुक्त हुए।
यों दसवें तीर्थंकर सु होय, सब कर्म नाशि गये सिद्ध लोय।।
ज्यों सिद्धालय में आप बसे, त्यों देहालय शुद्धात्म लसे।
हम ध्यावें मंगलकार प्रभो! वर्तें नित जाननहार विभो।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-सोरठा

पूजा श्री जिनराज, भक्ति-युक्तियुत जो करें।
पावें सिद्ध समाज, सब संक्लेश निवारिकें।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

11. श्री श्रेयांसनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-रोला

श्रेय रूप ग्यारहवें तीर्थंकर पहचाने।
अहो! अकर्ता दृष्टा ज्ञाता सहज प्रमाने।।

जागा भाग्य हमारा, प्रभुवर पूज रचावें।
निजानन्द निजमाहिं, आप-सम हम भी पावें।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-त्रिभंगी

प्रभु देह उपजती देह विनशती, अविनाशी है शुद्धातम।
यह भेद जानकर निज अनुभव कर, पूजें ध्यावें परमातम।।
श्रेयांस जिनेन्द्रं इन्द्र नरेन्द्रं, पूजत अन्तर्दृष्टि धरें।
तिहुँ जग ज्ञातारं शिवदातारं, प्रभु चरणों में नमन करें।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

प्रभु चन्दन बावन ताप मिटावन, भवाताप नहिं दूर करें।
या-सम नहिं दूजा श्री जिन पूजा, सहज सर्व संताप हरें।।श्रेयांस...।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत भाव दुखारी हे त्रिपुरारी, त्याग अखण्डित भाव धरें।
अक्षय सुखरूपं मुक्त स्वरूपं, अक्षत ले प्रभु पूज करें।।श्रेयांस...।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भोगों को भोगा, इच्छा रोगा त्यों-त्यों अधिक बढ़ा स्वामी।
प्रभु शील बढ़ावें काम नशावें, शिवपद पावें जगनामी।।श्रेयांस...।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज सुध-बुध खोकर जिस वश होकर, खाद्य-अखाद्य सभी खाया।
सो क्षुधा नशावें तृप्त रहावें, निज में प्रभु-सम मन भाया।।श्रेयांस...।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु भ्रम-तम नाशे ज्ञान प्रकाशे, तातैं प्रभुवर चरण जजें।
निर्मोह रहावें ज्ञान बढ़ावें, सहज परम निजभाव भजें।।श्रेयांस...।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु कर्म महावन भूलि रहे हम, शिव मारग है नहिं भाया।
निज ध्येय सु ध्यावें कर्म नशावें, परम धरम प्रभु से पाया।।
श्रेयांस जिनेन्द्रं इन्द्र नरेन्द्रं, पूजत अन्तर्दृष्टि धरें।
तिहुँ जग ज्ञातारं शिवदातारं, प्रभु चरणों में नमन करें।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन कर्मों के फल हुए सु-व्याकुल, सो फल प्रभुवर नहिं चाहें।
सब सिद्धि प्रदाता शिवफलदाता, धर्म कल्पतरु प्रकटाएँ।।श्रेयांस...।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले द्रव्य सु अर्घ्यं भाव अनर्घ्यं, आनन्द सों जिनवर पूजें।
श्रद्धान जगाया भाव बढ़ाया, भव-भव के पातक धूजें।।श्रेयांस...।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-चौपाई

विमला माँ को स्वप्न दिखाये, पुष्पोत्तर तजकर प्रभु आये।
जेठ श्याम षष्ठी सुखकारी, जिनपद पूजें मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णषष्ठ्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन कृष्ण एकादशि आई, जन्मे अनुपम मंगलदायी।
क्षीरोदधि तें जल भर लावें, सुरपति प्रभु अभिषेक करावें।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विषय-कषाय असार विचारे, हो निर्ग्रन्थ परम तप धारे।
फाल्गुन श्याम-एकादशि स्वामी, भावसहित हम शीश नमामी।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्लध्यान धरि घाति नशाये, अनन्त चतुष्टय प्रभु प्रकटाये।
माघ अमावस आनन्दकारी, पूजत होवें शिवमगचारी।।

ॐ ह्रीं माघ-अमावस्यायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावण शुक्ल पूर्णिमा जिनवर, मुक्ति पधारे सकल कर्म-हर।
इन्द्र मोक्षकल्याण मनावें, भक्ति सहित प्रभु पूज रचावें।।

ॐ ह्रीं श्रावणपूर्णिमायां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

श्रेय रूप श्रेयांस जिन, परम श्रेय दर्शाय।
आप बसे शिवलोक में, भक्ति करूँ सुखदाय।।

छंद-सरसी

नलिनप्रभ राजा के भव में रत्नत्रय प्रकटा कर।
तीर्थंकर प्रकृति बाँधी थी, सोलहकारण भाकर।।
आयु पूर्ण कर साधु समाधि पूर्वक छोड़ी देह।
स्वर्ग सोलवें इन्द्र हुए थे भावें सदा विदेह।।
तहँतैं चय कर सिंहपुरी में लिया प्रभु अवतार।
दिव्योत्सव करते इन्द्रादिक देखत दृष्टि हजार।।
मति-श्रुत-अवधिज्ञान के धारक जन्म समय से आप।
अतिशय रूप निरखते नाशें भव-भव के सन्ताप।।
पुण्योदय के भोग भोगते अन्तर रहे उदास।
पतझड़ के तरु देखे इक दिन काल लगा गृहवास।।
भायी प्रभु वैराग्य भावना, लौकान्तिक सुर आय।
अनुमोदन करते प्रभुवर का, चरणों में सिर नाय।।
सहज भाव से दीक्षा लीनी, हुए नाथ निर्ग्रन्थ।
तप कल्याणक देव मनावें, आप बढ़े शिवपन्थ।।

आत्मध्यान से अल्प काल में प्रकटा केवलज्ञान।
समवसरण में दिव्यध्वनि से दिया तत्त्व का ज्ञान।।
धर्मतीर्थ की कर प्रभावना, गये नाथ निर्वाण।
धर्मतीर्थ जिनवर का पाकर किया स्व-पर कल्याण।।
भाव सहित प्रभु पूजन करके, उपजा उर आनन्द।
सहज भावना होवे स्वामी, रहूँ परम निर्द्वन्द्व।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-सोरठा

सर्व सिद्धि दातार, वीतराग सर्वज्ञ जिन।
सहज लहें भव-पार, अनुगामी हो आपके।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

12. श्री वासुपूज्य जिनपूजन

स्थापना

छंद-सवैया तेईसा

बालयती वसुपूज्य तनय, प्रभु वासव सेवित त्रिभुवन नामी।
बारहवें तीर्थंकर हो, संयुक्त सुगुण छियालिस अभिरामी।।
मुक्तिमार्ग मिला भविजन को, दिव्यध्वनि द्वारा हे स्वामी।
भाव भये शुभ पूजन के, तिष्ठो उर में हे अन्तर्यामी।।

छंद-दोहा

हर्षित हो पूजूँ चरण, चिन्तूँ गुण अभिराम।
आराधूँ परमात्म पद, पाऊँ शाश्वत धाम।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक

छंद-गीतिका

निज आत्मतीर्थ सु पाइया, समतामयी जल जहाँ भरा।
मिथ्यात्व मल छूट्यो प्रभो! स्नान करि निर्मल भया।।
श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र की, पूजा करूँ अति चाव सों।
आनन्दमय ब्रह्मचर्य वर्ते नाथ! सहज स्वभाव सों।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-ताप नाशा देव! शीतलता स्वयं में ही मिली।
आराधना की युक्ति पाई, सहज निज परिणति खिली।।श्री...।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अबाधित ज्ञानमय, चैतन्य प्रभु पाया अहो।
तुष बिना तन्दुल-सम अमल, अक्षय स्व-पद आधार हो।।श्री...।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु! तुम गुणों की पुष्पमाला, कंठ में धारण करूँ।
निष्काम ब्रह्मस्वरूप ध्याऊँ, अब्रह्म परिणति परिहरूँ।।श्री...।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म अनुभव के समान, न रस दिखे तिहुँ लोक में।
ताके आस्वादी क्षुधादिक, नाशे बसे शिवलोक में।।श्री...।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैतन्य ज्योति सु जगमगे, मोहान्धकार नहीं रहे।
फिर बाह्य दीपक भी सहज निस्सार मुझको भी लगे।।श्री...।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आनन्दमय आराधना से, ध्यान की अगनी जले।
निज सुगुण विलसें सर्व वैभाविक करम ईंधन जले।।श्री...।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुँ लोक पूजित सिद्धपद, आराधना का फल महा।
यह जानकर लौकिक फलों का भाव नहिं किंचित् रहा।।श्री...।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्भेद निरघ सु अर्घ्य लेकर, ज्ञानमय आनन्दमय।
मैं अर्चना करता प्रभु, निर्द्वन्द्व पद पाऊँ अभय।।
श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र की, पूजा करूँ अति चाव सों।
आनन्दमय ब्रह्मचर्य वर्ते नाथ! सहज स्वभाव सों।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-द्रुतविलम्बित

होय च्युत महाशुक्र विमान से, आये विजया माता गर्भ में।
षाढ़ कृष्णा षष्टमी थी सही, धनि हुई चम्पापुर की मही।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णषष्ठ्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्दशि फागुन की श्याम है, जन्म अन्तिम प्रभु अभिराम है।
किया था अभिषेक सुमेरु पर, पुण्यशाली इन्द्रों ने आनन्द कर।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ब्याह अवसर पर प्रभु वैराग्य धरि, भव शरीर कुभोग असार लखि।
चतुर्दशि फागुन कलि शुभ घड़ी, अहो मुनिपद की सहज दीक्षा धरी।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ल ध्यान महान लगाइया, ज्ञान केवल जिनवर पाइया।
दिव्यध्वनि भई मंगलकार है, दूज भादव कृष्ण की सुखकार है।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्दशी सित भादों की सही, लही प्रभुवर ने अहो! अष्टम मही।
तीर्थ चम्पापुर महासुखदाय है, अर्घ्य ले जजिहौं सहज शिवदाय है।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

इन्द्रादिक पूजैं चरण, महाभक्ति उर धार।
गावें जयमाला प्रभो! आतमनिधि दातार।।

छंद-चौपाई

जय-जय वासुपूज्य भगवान, गुण अनन्त मंगलमय जान।
भरि यौवन में सहज विराग, भोगों प्रति उपज्या नहिं राग।।
निज में प्रमुदित बाह्य उदास, आत्मसाधना का उल्लास।
जगत विभव किंचित् न सुहाय, तत्त्व विचार करें सुखदाय।।
शुद्धातम ही जग में सार, अविनाशी सुख का आधार।
इन्द्रिय सुख तो दुख के मूल, फल में उपजें भव-भव शूल।।
संसारी निज ज्ञान विहीन, इन्द्रिय मद मेटन बलहीन।
विषय चाह उपजावे दाह, भोगन में भूले शिव-राह।।
आत्मज्ञान बिन शरण न कोय, व्यर्थ मोह में क्लेशित होय।
अब विलम्ब करना नहिं जोग, धरूँ शीघ्र शिवदाता योग।।
सब विधि अवसर मिलो महान, जीतूँ कर्म लहूँ निर्वान।
दृढ़ विराग उपज्या सुखदाय, तत्क्षण लौकान्तिक सुर आय।।
अनुमोदन कर शीश नवाय, धन्य विचार कियो जिनराय।
दीक्षा धरो प्रभो! अविकार, भायें भावना हम हू सार।।
इन्द्रादिक आये हर्षाय, प्रभु को तपकल्याण मनाय।
उत्सव सों प्रभु वन में गये, वस्त्राभूषण सब तजि दये।।
पंच मुष्टि कचलोंच कराय, निर्ग्रन्थ रूप धर्‌यो सुखदाय।
आत्मध्यान की धुनी लगाय, एक वर्ष छद्मस्थ रहाय।।
चढ़े क्षपक श्रेणी सुखकार, प्रकट्यो अर्हत् पद अविकार।
भविजन को शिवराह दिखाय, सिद्धालय में तिष्ठे जाय।।

ज्ञान माहिं हे देव! निहार, करें अर्चना मंगलकार।
प्रभु चरणों में शीश नवाय, अद्भुत परमानन्द विलसाय।।

छंद-घत्ता

प्रभु अमल अनूपं, शुद्ध चिद्रूपं, सहजानन्दमय राजत हो।
निष्काम जिनेश्वर, जजूँ महेश्वर, शिव मारग विस्तारत हो।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य जिनराज।
करि सम्यक् आराधना, पाऊँ निजपद राज।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

13. श्री विमलनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-चौपाई

जय-जय विमलनाथ भगवान, भक्ति सहित करता आह्वान।
मेरे हृदय विराजो देव! आराधूँ निज-पद स्वयमेव।।

छंद-दोहा

कम्पिल नगरी जन्म से, हुई जगत विख्यात।
कृतवर्मा प्रभु के पिता, जय-जय श्यामा मात।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-चाल होली

प्रभु पूजों भाव सों, श्री विमलनाथ जिनरायजी, पूजों भाव सों।
प्रासुक समतामय जल लीनों, अन्तर्दृष्टि लाय।

यही भावना प्रभु प्रसाद से, जन्म-मरण मिट जाय।।
प्रभु पूजों भाव सों, श्री विमलनाथ जिनरायजी, पूजों भाव सो।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम क्षमा भाव मय चन्दन, भव आताप मिटाय।
प्रभु चरणों में मैंने पाया, आनन्द उर न समाय।।प्रभु...।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में भोग संयोग विभव सब, विनाशीक दुखदाय।
अक्षय पद का आराधन कर, अक्षय प्रभुता पाय।।प्रभु...।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम-दाह अति ही दुखदायक, महा अनर्थ कराय।
ताको नाशि लहूँ तुम सम ही, ब्रह्मचर्य सुखदाय।। प्रभु...।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृष्णा भाव मिटे हे स्वामी, भव-भव में दुखदाय।
सन्तोषामृत पियूँ निरन्तर, तुम समान जिनराय।।प्रभु...।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदज्ञान का हुआ उजाला, मिथ्या तिमिर नशाय।
अविरल ज्ञान भावना भाऊँ, केवलि पद प्रकटाय।।प्रभु...।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज तत्त्व का सहज ध्यान हो, कर्म समूह नशाय।
जगत पूज्य निष्कर्म निरंजन, सिद्ध स्वपद प्रकटाय।।प्रभु...।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पाप-पुण्य के फल में प्राणी, भव-भव में भरमाय।
शुद्ध भाव से अहो! जिनेश्वर, सहज मोक्ष फल पाय।।प्रभु...।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

विमल अर्घ्य ले प्रभु चरणन में, आऊँ अति हर्षाय।
ज्ञानानन्दमय निज अनर्घ्य पद, पाऊँ हे शिवराय।।प्रभु...।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-सखी

गर्भागम मंगल गाये, नभ से सु-रतन बरसाये।
कलि जेठ सु-दशमी जानो, प्रभु पूजत चित हुलसानो।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णदशम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदि माघ चतुर्थी आई, जन्मे जिन आनन्ददायी।
भयो मेरु न्हवन सुखकारी, पूजत प्रभु पद अविकारी।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदि माघ चतुर्थी प्यारी, मुनिपद की दीक्षा धारी।
इन्द्रादिक उत्सव कीनो, सुनि आनन्द होय नवीनो।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदि माघ छठी दिन आयो, अरहन्त परम पद पायो।
कैवल्य-लक्ष्मी पाई, हमको शिव-राह दिखाई।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लषष्ठ्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कलि षाढ़ अष्टमी पावन, कर आवागमन निवारण।
निर्वाण महाफल पाया, हम पूजत शीश नवाया।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णाष्टम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-सोरठा

तेरहवें तीर्थेश, विमल विमल पद देत हैं।
परम पूज्य सर्वेश, अनन्त चतुष्टय रूप जिन।।

छंद-कामिनीमोहन

गाऊँ जयमाल जिनराज आनंद सौं, छूटि हौं दुःखमय कर्म के फन्द सौं।
मोहवश मैं अनादि से भ्रमता रहा, नाथ! कैसे कहूँ जो महादुःख सहा।।
परम सौभाग्य से नाथ दर्शन हुआ, जैनवाणी सुनी तत्त्व निर्णय हुआ।
है त्रिविध कर्ममल शून्य शुद्धात्मा, ज्ञान-आनन्दमय सहज परमात्मा।।
नित्य निरपेक्ष निर्द्वन्द्व निर्मल अहो, सहज स्वाधीन निर्लेप ज्ञायक प्रभो।
जानकर नाथ आदेय आनंद हुआ, मोहतम मिट गया आत्म-अनुभव हुआ।।
जागा बहुमान उर में अहो आपका, भेद जाना धर्म-कर्म पुण्य-पाप का।
आपकी स्तुति देव कैसे करूँ? गुण अनन्ते विभो! चित्त माहीं धरूँ।।
आप ही लोक में सत्य परमेश्वरम्, वीतरागी सु सर्वज्ञ तीर्थंकरम्।
आपको जग से वैराग्य जब था हुआ, देव लौकान्तिकों ने सुमोदन किया।।
परम उल्लास से नाथ संयम धरा, घातिया घात कर ज्ञान केवल वरा।
जग को दर्शाय ध्रुव शुद्ध परमात्मा, हो गये आप निष्कर्म सिद्धात्मा।।
भाव पंचम परम पारिणामिक महा, करके आराधना आप शिवपद लहा।
धन्य हो धन्य हो! परम उपकारी हो, भावमय वंदना देव! अविकारी हो।।
ध्याऊँ निजदेव को पाऊँ जिनदेव पद, इंद्र चक्री के पद जिसके सन्मुख अपद।
कामना वासना अन्य कुछ ना रही, सहज कृत-कृत्य ज्ञायक रहूँगा सही।।

छंद-घत्ता

जय विमल जिनेशं, हरत कलेशं, नमत सुरेशं सुखकारी।
जो पूजें ध्यावें, मोह नशावें, पावें पद मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-अडिल्ल

जयवन्तो जिनराज, जगत में नित्य ही।
तुम प्रसाद भवि पावें, बोधि समाधि ही।।
वीतराग जिन-धर्म सु, मंगलकार है।
भाव सहित जे धरे, लहे भव पार है।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

14. श्री अनन्तनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-वीर

जय अनन्त भगवन्त संत प्रभु, तारण-तरण जिहाज हो।
विषय-कषाय इन्द्रियाँ जीतीं, भावरूप जिनराज हो।।
निज प्रभुता अनन्त दरशाई, मोह-अँधेरा दूर भगा।
अनन्त चतुष्टय रूप महेश्वर, पूजन का उल्लास जगा।।

छंद-दोहा

प्रभुवर की पूजा करें, रोम-रोम हुलसाय।
निज प्रभुता पावें प्रभो, यही भाव उमगाय।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-चौपाई आँचलीबद्ध

समता भाव सहज सुखकार, जन्म मरण दुख नाशनहार।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।
जय जय अनन्तनाथ भगवंत, गुण-अनंत अनुपम शोभंत।। महासुख....।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित शीतलता का मूल, सहज नशे भव-भव की शूल।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।। जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के पद क्षत रूप लखाय, अक्षय पद निज में विलसाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

जीते काम सुभट जिनराय, धारें ब्रह्मचर्य हुलसाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुभव रस में तृप्त रहाय, क्षुधा तृषा सहजहिं विनशाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज-स्वभाव उद्योत कराय, सम्यग्ज्ञान प्रकाश लहाय।
महासुख होय, प्रभु पद के पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मध्यान की अग्नि जलाय, सर्व विभाव सहज नशि जाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

साधन शुद्ध उपयोग बनाय, साध्य रूप शिवफल प्रकटाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु को पाकर हुए सनाथ, पावें निज अनर्घ्यपद नाथ।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-चौपाई

कार्तिक कृष्णा एकम् के दिन, गरभ माहिं आये तुम हे जिन।
पन्द्रह मास रत्न थे बरसे, मात-पिता नर-नारी हरषे।।
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णप्रतिपदायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीअनन्तनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल सृष्टि अति ही हरषाई, सिंहसेन गृह बजी बधाई।
ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशि दिन जन्मे, मेरु न्हवन कीनो सुरपति ने।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उल्कापात देखकर स्वामी, धरि वैराग्य हुए शिवगामी।
ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशि सुखकार, वन में गूँजा जय-जयकार।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक मास धरि प्रतिमा योग, जये कर्म धरि ध्यान मनोज्ञ।
चैत अमावस केवल पाय, भाव सहित हम अर्घ्य चढ़ाय।।

ॐ ह्रीं चैत्र-अमावस्यायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीअनन्तनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत अमावस लह्यो निर्वाण, जय-जय अनन्तनाथ भगवान।
अचल सिद्धपद वन्दें सार, ध्यावें समयसार अविकार।।

ॐ ह्रीं चैत्र-अमावस्यायां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-सोरठा

अनन्तनाथ भगवान, जयवन्तो मम हृदय में।
करूँ प्रभो! गुणगान, भावविशुद्धि के लिए।।

छंद-पद्धरि

भव-भ्रमण मूल मिथ्यात्व नाश, पाया प्रभुवर आतम प्रकाश।
जग विभव-विभाव असार त्याग, निर्ग्रन्थ मार्ग में चित्त पाग।।
साधा जिनवर शुद्धोपयोग, मुनि मुद्रा मन मोहे मनोग।
प्रभु मौन निजानन्द लीन हुए, निर्द्वन्द्व सहज स्वाधीन हुए।।
बिन काम-दाह नहिं अक्ष भोग, नहिं राग द्वेष नहिं रोग शोक।
पर परिणति सों अत्यन्त भिन्न, निज रस में तृप्त रहें अखिन्न।।
धरि ध्यान क्षपकश्रेणी चढ़ाय, प्रभु घातिकर्म सहजहिं नशाय।
तब केवलज्ञान हुआ सुखकर, किय समवसरण धनपति आकर।।
भवि भागन वश खिरी दिव्यध्वनि, हरषे सब ज्ञानी और मुनि।
शुद्धात्म तत्त्व ही कहा सार, ध्रुव एक शुद्ध वर्जित विकार।।

हम अनुभव करि कीना प्रमान, पाया प्रभुवर सत्यार्थ ज्ञान।
जीते रागादिक सकल क्लेश, आरम्भ परिग्रह तजि अशेष।।
धारें निर्ग्रन्थ स्वरूप देव, यह भाव भयो स्वामी स्वयमेव।
वृद्धिंगत हो पुरुषार्थ नाथ, पामरता का होवे विनाश।।
जग में तुम ही हो सत्य शरण, प्रभु परम हितैषी मोह हरण।
हो परम धरम आराध्य सार, निज-सम करि कारण दुर्निवार।।
प्रभु-पद वन्दूँ मैं बार-बार, अविकारी आनन्दरूप धार।
तुम चरण प्रसाद लहूँ अनन्त, अपनी अक्षय प्रभुता महन्त।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

अहो! अनन्त जिनेश को, नित पूजें मन लाय।
इन्द्रादिक से पूज्य हो, निश्चय शिवपद पाय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

15. श्री धर्मनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-गीतिका

हे प्रभो! शिवमार्ग पाया, भविजनों ने आप से।
आपका दर्शन हुआ, प्रभुवर परम सौभाग्य से।।
भक्ति से पूरित हृदय, गुणगान को उद्यम हुआ।
बहुमान से पूजा करूँ, निजनाथ के सन्मुख हुआ।।

छंद-दोहा

पूजूँ धर्म जिनेश को, भाव विशुद्धि धार।
प्रभु सम प्रभु अन्तर निरख, भक्ति करूँ अविकार।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-वीर

सहज शुद्ध आतम नहिं जाना, मोह मलिनता नहिं जानी।
बाह्य मलिनता जल से धोई, धर्म रीति नहिं पहचानी।।
मोह-मलिनता को हरने अब, शुद्ध आत्मा को ध्याऊँ।
धर्मनाथ प्रभु की पूजा कर, परम धर्म निज में पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दनादि से शीतलता की, आशा में भरमाया था।
प्रभु गुण चिन्तन रूपी चन्दन, नहीं क्रोधवश पाया था।।
अब भवाताप विनशाने को, भव रहित आत्मा को ध्याऊँ।।धर्मनाथ....।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षयपद नहिं पहचाना, अक्षय वैभव नहिं पाया था।
अपदभूत इन्द्रादि पदों में, सुख समझा ललचाया था।।
अक्षय अविकारी सुख पाने, ध्रुव रूप आत्मा को ध्याऊँ।।धर्मनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम निजानन्द नहिं जाना, भोगों में चित्त लुभाया था।
अनुकूल भोग सामग्री पा, इतराया शील नशाया था।।
अब परम शील सुख पाने को, चिद्रूप आत्मा को ध्याऊँ।।धर्मनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञायकस्वभाव की दृष्टि बिना, स्वाभाविक तृप्ति न पाई थी।
रे! क्षुधारोग से पीड़ित हो, जो वस्तु मिली सब खाई थी।।
अविनाशी आनन्द पाने को, परिपूर्ण आत्मा को ध्याऊँ।। धर्मनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार में भटकाया, भव-भव में स्वामिन् दुखी हुआ।
निज निधि अवलोकन कर न सका, भव-भव में जन्मा और मुआ।।
अब सम्यग्ज्ञान प्रकाश मिला, चैतन्य आत्मा को ध्याऊँ।।धर्मनाथ..।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि में खेय दशांग धूप, जग में जो धुआँ उड़ाते हैं।
नहिं इससे कर्म नष्ट होते, बहुते प्राणी मर जाते हैं।।
अब कर्म नशाऊँ ध्यानानल में, ध्येय आत्मा को ध्याऊँ।।धर्मनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु पुण्य-पाप के फल पाकर, रति-अरति करें प्राणी जग के।
पर पुण्य-पाप को सहज त्याग, ज्ञानी साधक हों शिवमग के।।
अविनाशी शिवफल पाने को, निर्मुक्त आत्मा को ध्याऊँ।।धर्मनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुबार चढ़ाया द्रव्य अर्घ्य, पर प्रभु स्वरूप से रहा विमुख।
कुछ नहीं मूल्य है द्रव्य अर्घ्य का, निज अनर्घ्यपद के सन्मुख।।
अविचल अनर्घ्यपद पाने को, अब अनुपम शुद्धातम ध्याऊँ।।धर्मनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-रोला

गर्भागम जिनराज आपका मंगलकारी,
पन्द्रह माह रत्न-वर्षा होवे सुखकारी।
अष्टम सित वैशाख गर्भ कल्याण मनाया,
पूजत तुम्हें जिनेश महा आनन्द उपजाया।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्ल-अष्टम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माघ शुक्ल तेरस के दिन जन्मे अविकारी,
मेरु शिखर अभिषेक और उत्सव सुखकारी।
इन्द्रादिक ने किये, भक्ति कर मैं हर्षाऊँ,
जनम-मरण की सन्तति नाशे यह वर पाऊँ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उल्कापात निहार विरागी हुए जिनेश्वर,
हुए माघ सित तेरस को निर्ग्रन्थ मुनीश्वर।
धन्यसेन नृप धन्य प्रथम आहार कराया,
हुए पंच-आश्चर्य हर्ष जन-जन में छाया।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लगभग एक वर्ष मुनिपद में निजपद भाया,
रत्नपुरी दीक्षा वन आकर ध्यान लगाया।
पौष शुक्ल पूनम दिन घाति कर्म नशाये,
समवसरण अरु अतिशय अन्य सहज प्रकटाये।।

ॐ ह्रीं पौषपूर्णिमायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सम्मेदशिखर पर कर्म-कलंक निवारे,
प्रभो! चतुर्थी जेठ सुदी निर्वाण पधारे।
मुक्त स्वरूप विचार आपकी पूज रचाऊँ,
सम्यक् आराधन द्वारा निर्वाण सु-पाऊँ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लचतुर्थ्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-सोरठा

जयमाला सुखकार, गाऊँ अति आनन्द सों।
भाव रहे अविकार, भव-भव के बन्धन नशें।।

तर्ज : अहो जगत गुरुदेव...

धर्मनाथ जिनराज परम धरम दर्शाया,
रत्नत्रय अविकार, शिवपुर पंथ दिखाया।

प्रभो! प्रयोजनभूत सप्त तत्त्व प्रकटाये,
उपादेय निज भाव हेय अन्य सब गाये।।
निज-दृष्टि निज-ज्ञान अहो! लीनता निज में,
निज-आश्रय से नाथ सहज बढ़े शिवमग में।
निज अनुभव रस-कूप शिवपुर मूल जिनेश्वर,
तुमरे चरण प्रसाद जाना हे परमेश्वर।।
त्रिभुवन मंगलकार प्रभुवर! धर्म तुम्हारा,
मिले हमें अविकार जागा भाग्य हमारा।
पंचकल्याणक देव सुर-गण आय मनावें,
तीन लोक के जीव सहजहिं साता पावें।।
निकट भव्य तो नाथ लख सम्यक् प्रकटावें,
निर्मोही हो नाथ शिव-मारग में धावें।
दर्शन कर मुनिनाथ मुक्त-स्वरूप दिखावे,
पूजत तुम्हें जिनेश मुक्ति समीप सु आवे।।
स्व-पर विवेक जगाय देव! गुणों का चिन्तन,
चाह-दाह विनशाय होय धर्म आकिंचन।
धूल समान दिखाँय, जग के वैभव सारे,
पद पद आपद रूप, भोग भुजंग-से कारे।।
भक्ति कर जिनदेव यही भावना भाऊँ,
प्रभो! आप-सम होय अपनी प्रभुता पाऊँ।
तव पद मम उर माहिं, मम उर तुम चरणन में,
तब लौं लीन रहाय, थिरता होवे निज में।।

छंद-घत्ता

श्री धर्म जिनेश्वर, हे परमेश्वर, जजत मुनीश्वर सुखकारी।
मैं भी प्रभु ध्याऊँ, कर्म नशाऊँ, शिवपद पाऊँ अविकारी।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

पूजत धर्म जिनेश को, सर्व क्लेश विनशाय।
अक्षय निज सम्पत्ति मिले सिद्ध स्वपद प्रकटाय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

16. श्री शान्तिनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-गीतिका

चक्रवर्ती पाँचवें अरु कामदेव सु बारहवें।
इन्द्रादि से पूजित हुए, तीर्थेश जिनवर सोलहवें।।
तिहुँलोक में कल्याणमय, निर्ग्रन्थ मारग आपका।
बहुमान से पूजन निमित्त, स्वरूप चिन्तें आपका।।

छंद-सोरठा

चरणों शीश नवाय, भक्तिभाव से पूजते।
प्रासुक द्रव्य सुहाय, उपजे परमानन्द प्रभु।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-वसंततिलका

प्रभु के प्रसाद अपना ध्रुव रूप जाना,
जन्मादि दोष नाशें हो आत्मध्याना।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माहिं पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जाना स्वरूप शीतल उद्योत माना,
भव-ताप सर्व नाशे हो आत्मध्याना।। श्री शान्ति...।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय विभव प्रभु-सम निज माहिं जाना,
अक्षय स्वपद सु पाऊँ हो आत्मध्याना।।श्री शान्ति...।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम ब्रह्मरूपं निज आत्म जाना,
दुर्दान्त काम नाशे हो आत्मध्याना।।श्री शान्ति...।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परिपूर्ण तृप्त ज्ञाता निजभाव जाना,
नाशें क्षुधादि क्षण में हो आत्मध्याना।।श्री शान्ति...।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मोह ज्ञानमय ज्ञायक रूप जाना,
कैवल्य सहज प्रकटे हो आत्मध्याना।।श्री शान्ति...।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्कर्म निर्विकारी चिद्रूप जाना,
भव-हेतु-कर्म नाशें हो आत्मध्याना।।श्री शान्ति...।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्बन्ध मुक्त अपना शुद्धात्म जाना,
प्रकटे सु मोक्ष सुखमय हो आत्मध्याना।।श्री शान्ति...।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अविचल अनर्घ्य प्रभुतामय रूप जाना,
विलसे अनर्घ्य आनन्द हो आत्मध्याना।।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माहिं पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-दोहा

भादौं कृष्णा सप्तमी, तजि सर्वार्थ विमान।
ऐरा माँ के गर्भ में, आए श्री भगवान।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णा जेठ चतुर्दशी, गजपुर जन्मे ईश।
करि अभिषेक सुमेरु पर, इन्द्र झुकावें शीश।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सारभूत निर्ग्रन्थ पद, जगत असार विचार।
कृष्णा जेठ चतुर्दशी, दीक्षा ली हितकार।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मध्यान में नशि गये, घातिकर्म दुखदान।
पौष शुक्ल दशमी दिना, प्रकटो केवलज्ञान।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जेठ कृष्ण चौदशि दिना, भये सिद्ध भगवान।
भाव सहित प्रभु पूजते, होवे सुख अम्लान।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-चौपाई

जय जय शान्तिनाथ जिनराजा, गाऊँ जयमाला सुखकाजा।
जिनवर धर्म सु मंगलकारी, आनन्दकारी भवदधितारी।।

छंद-लावनी

प्रभु! शान्तिनाथ लख शान्त स्वरूप तुम्हारा।
चित् शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा।। टेक।।

हे वीतराग सर्वज्ञ परम उपकारी,
अद्भुत महिमा मैंने प्रत्यक्ष निहारी।
जो द्रव्य और गुण पर्यय से प्रभु जाने,
वे जानें आत्मस्वरूप मोह को हानें।।
विनशें भवबन्धन हो सुख अपरम्पारा।। चित् शांत हुआ मैं ...।।1।।

हे देव! क्रोध बिन कर्म शत्रु किम मारा?
बिन राग भव्य जीवों को कैसे तारा?
निर्ग्रन्थ अकिंचन हो त्रिलोक के स्वामी,
हो निजानन्द-रस भोगी योगी नामी।।
अद्भुत, निर्मल है सहज चरित्र तुम्हारा।। चित् शान्त हुआ मैं...।।2।।

सर्वार्थसिद्धि से आ परमार्थ सु साधा,
हो कामदेव निष्काम तत्त्व आराधा।
तजि चक्र सुदर्शन, धर्मचक्र को पाया,
कल्याणमयी जिन धर्मतीर्थ प्रकटाया।।
अनुपम प्रभुता माहात्म्य विश्व से न्यारा।।चित् शान्त हुआ मैं...।।3।।

गुणगान करूँ हे नाथ! आपका कैसे?
हे ज्ञानमूर्ति! हो आप आप ही जैसे।
हो निर्विकल्प निर्ग्रन्थ निजातम ध्याऊँ,
परभावशून्य शिवरूप परम पद पाऊँ।।
अद्वैत नमन हो प्रभो सहज अविकारा।।चित् शान्त हुआ मैं...।।4।।

कुछ रहा न भेद विकल्प पूज्य पूजक का,
उपजे न द्वन्द्व दुखरूप साध्य-साधक का।

ज्ञाता हूँ ज्ञातारूप असंग रहूँगा,
पर की न आस निज में ही तृप्त रहूँगा।
स्वभाव स्वयं को होवे मंगलकारा।।चित् शान्त हुआ मैं...।।5।।

छंद-घत्ता

जय शान्ति जिनेन्द्रं, आनन्दकन्दं, नाथ निरंजन कुमतिहरा।
जो प्रभु गुण गावें, पाप मिटावें, पावें आतमज्ञान वरा।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

भक्तिभाव से जो जजें, जिनवर चरण पुनीत।
वे रत्नत्रय प्रकट कर, लहें मुक्ति नवनीत।।

17. श्री कुन्थुनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-दोहा

कामदेव होकर प्रभो! किया काम निर्मूल।
चक्रवर्ती पद सम्पदा, समझी तुमने धूल।।
निर्ग्रन्थ पद आराध कर, धर्मतीर्थ प्रकटाय।
हुए मुक्त श्री कुन्थु प्रभु, पूजूँ प्रीति बढ़ाय।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-वीर

अन्तर साम्यभाव धारण कर, जल जिन-चरणों में लाऊँ।
जन्म-जरा-मृत दोष नाशने, अविनाशी निजपद ध्याऊँ।।

कुन्थुनाथ की पूजा करते, हृदय हर्षित होता है।
भक्तिभाव से प्रभु गुण गाते, आनन्द विलसित होता है।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज भाव से शान्त भाव से, चन्दन नाथ चढ़ाता हूँ।
क्रोधादिक सन्ताप मेटने, आत्मभावना भाता हूँ।।कुन्थुनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल अक्षत जिनवर सन्मुख, सविनय आज चढ़ाता हूँ।
क्षत भावों से उदासीन हो, अक्षय पद को ध्याता हूँ।।कुन्थुनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

तुम्हें नाथ निष्काम निरखकर, प्रासुक पुष्प चढ़ाता हूँ।
कामभाव को निष्फल करने, ब्रह्म भावना भाता हूँ।।कुन्थुनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

देव! स्वयं में तृप्त तुम्हें लख, यह नैवेद्य चढ़ाता हूँ।
क्षुधा वेदना हरने को, परिपूर्ण भावना भाता हूँ।।कुन्थुनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकालोक प्रकाशक हो प्रभु फिर भी दीप चढ़ाता हूँ।
मोह-अँधेरा दूर भगाने, ज्ञान भावना भाता हूँ।।कुन्थुनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धन्य प्रभो! निष्कर्म अवस्था, मेरे मन को भाई है।
वैभाविक दुष्कर्म जलाने, ध्यान अग्नि प्रकटाई है।।कुन्थुनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम जैसा अविनाशी फल, पाने को चित् ललचाया है।
प्रासुक फल ले भक्तहृदय प्रभु, चरण-शरण में आया है।।कुन्थुनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु अनर्घ्य वैभव लख मेरा, रोम-रोम पुलकाया है।
ऐसा पद प्रकटाने स्वामी, सविनय अर्घ्य चढ़ाया है।।कुन्थुनाथ...।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-वीर

तजि विमान सर्वार्थसिद्धि प्रभु, गर्भ विषैं आये सुखकार।
श्रावण कृष्णा दशमी के दिन, पूजूँ जिनवर मंगलकार।।

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णदशम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकम् सुदि वैशाख सु पावन, हुई बधाई मंगलकार।
अन्तिम जन्म हुआ हे स्वामी, पूजें हरि करि उत्सव सार।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगरी की शोभा को लखते, जागा उर वैराग्य महान।
धनि एकम् वैशाख सुदी को, पद निर्ग्रन्थ लिया अम्लान।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवल पायो चैत सुदी तृतीया को घातिकर्म चकचूर।
अद्भुत समवसरण की शोभा, धर्म प्रभाव हुआ भरपूर।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लतृतीयायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

टोंक ज्ञानधर से शिव पायो, सुदि एकम वैशाख दिना।
हरि निर्वाण महोत्सव कीनो, पूजूँ मन-वच-काय बिना।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

परम अहिंसा धर्म का, दिया सत्य उपदेश।
निजानन्द में मग्न हो, गाऊँ सुयश जिनेश।।

तर्ज : दिन-रात मेरे स्वामी...

आया शरण तुम्हारी, हे कुन्थुनाथ जिनवर।
आतम निधि सु-पाऊँ, पुरुषार्थ जागे प्रभुवर।।टेक।।

जब से स्वरूप देखा, नहीं और कुछ सुहावे।
ज्यों मीन जल बिना त्यों, मम चित्त छटपटावे।।
निजपद की भावना है, तुम सम ही होऊँ सत्वर।।आतम...।।

प्रभु चक्रवर्ती पद को तृण के समान छोड़ा।
होकर परम जितेन्द्रिय, विषयों से मुख को मोड़ा।।
भव-जाल से विरत हो, हुए सहज दिगम्बर।।आतम...।।

धनि धर्म मित्र श्रावक, आहार प्रथम दीना।
निज आत्म भावना से, मुक्ति का मार्ग लीना।।
सुर हर्ष प्रकट कीना, पंचाश्चर्य प्रकट कर।।आतम...।।

एकाग्र हुए स्वामी, निज भाव थे निहारे।
फिर क्षपक श्रेणि चढ़कर, घाती करम संहारे।।
प्रकटा अनन्त चतुष्टय, हुए अरहन्त सुखकर।।आतम...।।

दस जन्म के थे अतिशय, कैवल्य के हुए दस।
देवों ने कीने चौदह, थे प्रातिहार्य भी अठ।।
धनपति ने भक्ति कीनी विभु समवसरण रचकर।।आतम...।।

प्रभु दिव्य-ध्वनि के द्वारा, सन्मार्ग था बताया।
तत्त्वों का मार्ग सुनकर, भव्यों ने बोध पाया।।
जिनमार्ग पर चलूँ मैं, निर्भय निःशंक होकर।।आतम...।।

अनुपम है प्रभुता प्रभु की, अद्भुत है महिमा प्रभु की।
वचनों से कैसे गावें, हम स्तुति सु प्रभु की।।
हो ज्ञान में प्रतिष्ठित बस ज्ञान ही जिनेश्वर।।आतम...।।

चिन्मूर्ति हो विराजे, ज्यों मुक्ति में हे स्वामी।
ध्रुव अचल ऋद्धि पाई, विश्वेश त्रिजग नामी।।
सो भावना मैं भाऊँ, चरणों में शीश धरकर।।आतम...।।

छंद-घत्ता

प्रभु के गुण गावें, मुनिजन ध्यावें, शुद्धातम में लीन भये।
रागादि विनाशे, ज्ञान प्रकाशे, कर्म महारिपु सहज जये।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

पूजा कुन्थु जिनेश की, नित नव मंगलकार।
जग प्रपंच से काढ़ि कै, रत्नत्रय दातार।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

18. श्री अरनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-लावनी

अरनाथ जिनेश्वर, दुर्लभ दर्शन पाया।
हे जगतपूज्य! पूजा का भाव जगाया।।
मदनेश्वर, चक्री, तीर्थंकर पद धारी।
मम हृदय पधारो, भाव रहें अविकारी।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-दोहा

जन्म-जरा-मृत नाश के, हुए प्रकट भगवान।
प्रभु समान शुद्धात्मा, अविनाशी पहचान।।

सहज भक्ति उर धारि के, पूजूँ अर जिनराय।
ध्याऊँ ध्रुव परमात्मा, परमानन्द विलसाय।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवाताप नाशक सुतप, कियो जिनेश्वर देव।
मिटती भक्ति प्रसाद से, चाह दाह स्वयमेव।। सहज..।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत के कारण घातिया, आत्मध्यान से नाश।
अक्षय गुणमय आत्मा, किया विभो परकाश।। सहज...।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

आर्त ध्यान के हेतु हैं, रौद्र ध्यानमय भोग।
उत्तम शील प्रकाश कर, कीनो पूरण योग।। सहज...।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज रस में संतुष्ट हो, क्षुधा वेदनी टाल।
सो रस निज में ही झरे, पीवत होय निहाल।। सहज...।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज ज्ञानमय आत्मा, भासा तत्त्व महान।
मोहादिक विध्वंस कर, पाया केवलज्ञान।।सहज...।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मेन्धन को भस्म कर, धर्म सुगन्ध सुदेय।
तीन लोक पूजित हुए, दिव्य धूप मैं लेय।।सहज...।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म प्रकृति त्रेसठ तजी, पच्चीसी फिर नाशि।
महामोक्षफल प्रभु लहो, गुण अनन्त की राशि।।सहज...।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अनर्घ्य प्रभुता अहो! प्रकटाई जिननाथ।
सो प्रभुता अन्तर लखी, अर्घ्य लेय हे नाथ।।सहज...।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

तर्ज : भावना रथ पर चढ़ जाऊँ...

पंचकल्याणक मनहारी-2
भव्यों के कल्याण निमित्त यह उत्सव सुखकारी।।टेक।।
पन्द्रह मास रतन शुभ बरसे, आनन्द भयो भारी।
फाल्गुन शुक्ला तीज हुआ, गर्भागम सुखकारी।। पंचकल्याणक...।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लतृतीयायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मगसिर सुदी चतुर्दशि गजपुर, जन्मे जगतारी।
मेरु शिखर पर इन्द्रादिक, अभिषेक कियो भारी।।पंचकल्याणक...।।

ॐ ह्रीं मगसिरशुक्लचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मगसिर शुक्ला दशमी को निर्ग्रन्थ दशा धारी।
समता रस की धार बहाई, नित्यानन्दकारी।।पंचकल्याणक...।।

ॐ ह्रीं मगसिरशुक्लचतुर्दश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक शुक्ला द्वादशि को लहि, केवल अविकारी।
धर्मतीर्थ का किया प्रवर्तन, सबको हितकारी।।पंचकल्याणक...।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णा चैत अमावस्या को, बन्ध दशा टारी।
नित्य निरंजन शिवपद पायो, अक्षय अविकारी।।पंचकल्याणक...।।

ॐ ह्रीं चैत्र-अमावस्यायां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

धर्म-शस्य हित मेघ-सम, श्री अरनाथ महान।
गाऊँ जयमाला प्रभो, परमानन्द की खान।।

तर्ज : प्रभो! आपने एक ज्ञायक दिखाया...

प्रभु! आपको पूजते हर्ष भारी,
स्वयं की विभूति स्वयं में निहारी।
अहो नाथ! तुमसे तुम्हीं हो दिखाते
महानन्दमय पद तुम्हीं तो बताते।।

महामोहतम प्रभु तुम्हीं तो नशाते,
सहज ज्ञानमय ज्योति तुम ही जलाते।
सुगम मोक्षमारग तुम्हीं प्रभु दिखाते,
सरस ज्ञान गंगा तुम्हीं हो बहाते।।

विषयों के फन्दे से तुम ही छुड़ाते,
चतुर्गति दुःखों से तुम्हीं तो बचाते।
परम ज्ञान वैराग्य तुम ही जगाते,
निर्ग्रन्थ पथ में तुम्हीं प्रभु बढ़ाते।।

हो निरपेक्ष बांधव तुम्हीं साँचे जग में,
तुम्हीं मार्गदर्शक अहो मोक्षमग में।
हुआ मैं निःशंकित तुम्हारे वचन से,
परम सौख्य पाया स्वयं अनुभवन से।।

कहाँ तक कहूँ नाथ महिमा तुम्हारी,
न शब्दों में शक्ति प्रभो! इतनी धारी।।
चिन्तन तुम्हारा नहीं पार पावे,
अहो स्वानुभव में न आनन्द समावे।।

खिला पुण्य मेरा, मिला दर्श तेरा,
यही भावना होय वन माहिं डेरा।
हो निर्ग्रन्थ मुद्रा महा सुखकारी,
सहज ध्यान में कर्म नाशे विकारी।।

नहीं कामना कोई निष्काम वर्तूं,
परम समरसी भाव निर्मान वर्तूं।
नहीं क्षोभ आवे परम शान्त वर्तूं,
निर्द्वन्द्व निर्मूढ़ निर्भ्रान्त वर्तूं।।
विशुद्धि जिनेश्वर सु बढ़ती ही जावे,
परम-भाव में वृत्ति रमती ही जावे।
प्रभो आप-सम ही परम लीनता हो,
परम मुक्तता हो, परम पूर्णता हो।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-सोरठा

निज कल्याण स्वरूप, धर्मचक्र के अर प्रभो।
पूजूँ हे शिवभूप! होवें मंगल नित नये।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

19. श्री मल्लिनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-अडिल्ल

मल्लिनाथ जिनराज, परम आदर्श हो।
भविजन को सुखदाय, आपका दर्श हो।।
देव आप-सम ब्रह्मचर्य वर्ते सदा।
पूजूँ तुम्हें जिनेश, हर्ष उर में महा।।

छंद-दोहा

परम जितेन्द्रिय जिन हुए, काम-सुभट को जीत।
स्वाभाविक आनंद की, जागी सहज प्रतीति।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-अवतार

जल जाना प्रभु निस्सार, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराय, अव्यय भाव सजूँ।।
हे बालयती तीर्थेश, नित प्रति सिर नाऊँ।
हे मल्लिनाथ जिनराज, शाश्वत पद पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु चन्दनादि निस्सार, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराज, शीतल शांत रहूँ।। हे बालयती...।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत रूप विभाव असार, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराज, अक्षय सौख्य लहूँ।। हे बालयती...।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु काम भोग निस्सार, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराज, ब्रह्म विलास भजूँ।। हे बालयती...।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निस्सार बाह्य नैवेद्य, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराज, तृप्त सदैव रहूँ।। हे बालयती...।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीप प्रभु निस्सार, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराज, नित निर्मोह रहूँ।।हे बालयती...।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखरूप नहीं जड़ धूप, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराज, नित निष्कर्म रहूँ।।हे बालयती...।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लौकिक फल सर्व असार, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराज! मुक्त सदैव रहूँ।।हे बालयती...।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु बाह्य विभव निस्सार, चरणन माहिं तजूँ।
तुम-सम ही हे जिनराज, विभव अनर्घ्य लहूँ।।हे बालयती...।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-सोरठा

करे जगत कल्याण, गर्भागम भी आपका।
हो भवभय से त्राण, भाव सहित पूजूँ प्रभो।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लप्रतिपदायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म समय इन्द्रादि, कीना न्ह्वन सुमेरु पर।
जन्मोत्सव कर याद, आनन्द धरि पूजूँ प्रभो।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्ल-एकादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ब्याह समय वैराग्य, धारि हृदय दीक्षा लही।
निज स्वरूप में पाग, कर्म नाश उद्यम किया।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्ल-एकादश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान सुपाय, धर्म तीर्थ प्रकटाइयो।
निश्चय शिवसुखदाय, पूजों अति उत्साह सों।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व कर्ममल जारि, अविनाशी शिवपद लह्यो।
मुक्त स्वरूप निहार, प्रभु निश्चय पूजा करूँ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लपंचम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

जयमाला जिनराज की, गाऊँ मंगल रूप।
कर स्मरण चरित्र प्रभु, ध्याऊँ शुद्ध चिद्रूप।।

छंद-आँचलीबद्ध चौपाई

जय-जय मल्लिनाथ भगवान, जिनमुद्रा लखकर अम्लान।
आनन्द मेरे उर न समाय, तन का रोम-रोम पुलकाय।।

महिमा प्रभु की कही न जाय, प्रभु भक्ति वाचाल कराय।
परम ब्रह्म परमात्म स्वरूप, तुम गुण तिहुँ जगमाहिं अनूप।।

जम्बूद्वीप विदेह मँझार, नृपति वैश्रवण चित्त उदार।
मुनि सुगुप्ति के दर्शन किये, रत्नत्रय व्रत सहजहिं लिये।।

इक दिन वनविहार के काल, देखा वट का वृक्ष विशाल।
किन्तु लौटते समय विनष्ट, देख हुआ था चित्त विरक्त।।

दीक्षा ले भायी सुखकार, भावना सोलहकारण सार।
किया प्रकृति तीर्थंकर बन्ध, कर समाधि हुए अहमिन्द्र।।

मिथिलानगरी राजा कुम्भ, प्रजावती रानी अति रम्य।
अपराजित विमान तैं सार, आये ताके गर्भ मँझार।।

नाना उत्सव देव सु किये, धन्य घड़ी प्रभु जन्मत भये।
हुआ सुमेरु पर अभिषेक, दर्शन से प्रभु जगे विवेक।।

अद्भुत क्रीड़ाएँ सुखकार, करते बढ़ते भये कुमार।
शादी की जब चली बरात, लख शोभा प्रभु हुए उदास।।

हुआ जातिस्मरण सु ज्ञान, दीक्षा हेतु किया प्रस्थान।
धिक् धिक् कह त्यागे जड़ भोग, आराधा निज रूप मनोग।।

छह दिन में लहि केवलज्ञान, धर्मतीर्थ प्रकटा अम्लान।
समवसरण में शोभें आप, भविजन के नाशें सन्ताप।।

एक मास पहले जिनराज, संबल कूट सु आये विराज।
करके योगनिरोध महान, पायो अविचल पद निर्वाण।।

भाव सहित पूजत जिनदेव, तत्त्वज्ञान जागे स्वयमेव।
विचरूँ मैं भी प्रभु के पंथ, पाऊँ दशा परम निर्ग्रन्थ।।

छंद-घत्ता

जय मल्लि जिनेन्द्रं, आनन्दकन्दं, चिदानन्द मय चित्त धरूँ।
तज जग जंजालं, सुगुण विशालं प्रभु समान ही प्रकट करूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-सोरठा

प्रभु पूजा सुखकार, हर्षित हो नित प्रति करूँ।
पाऊँ निज पद सार, अन्य न कोई कामना।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

20. श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-गीतिका

मुनिनाथ त्रिभुवननाथ पूजित, मुनिसुव्रत प्रभु को नमूँ।
जिनभक्तिमय धरि भाव निर्मल, मोह मायादिक वमूँ।।
मम हृदय में आओ विराजो, हर्ष से पूजन करूँ।
निर्भेद हो, निरखेद हो, निर्मुक्त प्रभुता विस्तरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-चौपाई

आत्मतीर्थ जल से अविकारी, भावसहित पूजूँ त्रिपुरारी।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भव-आताप विनाशन हारी, चन्दन से पूजूँ उपकारी।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षय आबाधित पद धारी, अक्षत से पूजें अविकारी।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

परम ब्रह्ममय रूप सु-ध्याऊँ, काम-वासना दूर भगाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

निज रस आस्वादी हो स्वामी, नाशूँ क्षुधा महादुखदानी।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

स्व-पर ज्ञानमय ज्योति जगाऊँ, मोह महातम सहज मिटाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

ध्यान-अग्नि में कर्म जलाऊँ, ऊर्ध्व-गमन से शिवपुर जाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सभी पुण्य-फल हेय लखाऊँ, निर्वांछक हो शिव-फल पाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-भाव मय अर्घ्य चढ़ाऊँ, पद अनर्घ्य प्रभु-सम प्रकटाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-अडिल्ल

श्रावण कृष्णा दूज गर्भ आये प्रभो,
सोलह सपने माँ को दिखलाए विभो।
करें देवियाँ सेव मात की चाव सों,
हम हू पूजें जिनवर भक्ति भाव सों।।

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिथि वैशाख वदी दशमी अति पावनी,
जन्मकल्याणक की थी छटा सुहावनी।
मेरु शिखर पर इन्द्र प्रभु को ले गयो,
किया महा अभिषेक जगत आनन्द भयो।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लख गजराज प्रसंग विरक्ति मन धरी,
ली हरिवंश शिरोमणि! दीक्षा शिवकरी।
तिथि वैशाख वदी दशमी सुखकार थी,
मुनिसुव्रत की गूँजी जय-जयकार थी।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिथि वैशाख वदी नवमी चित थिर कियो,
क्षपक श्रेणी चढ़ घाति नाशि केवल लियो।
दिव्यध्वनि सुन भव्य अनेक सु तिर गये,
पूजत अहो जिनेश! भाव सम्यक् भये।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्जर टोंक शिखर सम्मेद तें शिव गये,
फाल्गुन कृष्णा बारस सिद्धालय ठये।
परम मुक्त शुद्धात्म स्वरूप दिखाइया,
हे प्रभु! हमहूँ पावें भाव जगाइया।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णद्वादश्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

जीते अंतर-शत्रु प्रभु, इन्द्रिय विषय-कषाय।
मुनिव्रत धरि शिवपद लह्यो, मुनिसुव्रत जिनराय।।

छंद-वीर

पूजा करके भक्ति करते, मुनिसुव्रत भगवान की।
यही भावना प्रभु सम पावें, पदवी हम निर्वाण की।।
देखो प्रभु ने सहज भाव से, दुर्लभ रत्नत्रय धारा।
जगत प्रपंच तजे दुखकारी, मुनि दीक्षा को स्वीकारा।।
सभी जीव दुःखों से छूटें, पावें आतमज्ञान को।
पाप-पुण्य की बेड़ी टूटें, धारें आतम ध्यान को।।
जब ही ऐसे भाव जगे थे, प्रकृति बँधी तीर्थंकर की।
हुए पंचकल्याणक मंडित, जय हो जगत हितंकर की।।
सोमा-नंदन कर्म-निकंदन, धर्मतीर्थ जो प्रकटाया।
महाभाग्य हमने भी पाया, महानन्द उर में छाया।।
मोह-अँधेरा दूर हुआ है, वस्तु स्वभाव धर्म भासा।
जीव-अजीव भिन्न दिखलावें, दुखकारण आस्रव नाशा।।
संवर पूर्वक होय निर्जरा, कर्मबन्ध तड़-तड़ टूटें।
धन्य परम निर्मुक्त दशा हो, पर-सम्बन्ध सभी छूटें।।
तृप्त स्वयं में मग्न स्वयं में, काल अनन्त रहें अविकार।
यही भावना सहज पूर्ण हो, और चाह नहीं रही लगार।।
करें अनुसरण प्रभो आपका, आराधन निज आतम का।
हुआ सहज विश्वास मुनीश्वर, पद पाऊँ परमातम का।।

छंद-घत्ता

अनुपम गुणधारी, हे अविकारी, मुनिसुव्रत जिन शरण लही।
रत्नत्रय पाऊँ, मंगल गाऊँ, जाऊँ अष्टम मुक्ति मही।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद-सोरठा

पूजा श्री जिनराज, महाभाग भविजन करें।
पावें सिद्ध समाज, तीन लोक में पूज्य हों।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

21. श्री नमिनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-ताटंक

नमिनाथ जजूँ जिननाथ भजूँ, मिथ्या संकल्प-विकल्प तजूँ।
ये ही शिवसुख का कारण है, निजभाव सजूँ निजभाव भजूँ।।
अति पुण्योदय जागा स्वामिन्! बहुमान आपका आया है।
पूजन करते ज्ञानानन्द सागर, अन्तर में उछलाया है।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-चाल

सम्यक् जल ले अविकारी, पूजूँ चैतन्य विहारी।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, जन्मादिक दोष नशाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्वांछक चन्दन पाऊँ, प्रभु चाह दाह विनशाऊँ।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, धर्मामृत धार बहाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत अक्षत भेद विचारूँ, विचिकित्सा दोष विडारूँ।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, अक्षत से पूज रचाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु प्रासुक पुष्प चढ़ाऊँ, परिणति निजमाहिं लगाऊँ।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, निष्काम भावना भाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म परम रस स्वादी, नाशो मम क्षुधा कुव्याधी।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, प्रासुक नैवेद्य चढ़ाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार नहीं भावे, ताको प्रभु ज्ञान नशावे।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, प्रभुसम केवल प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु ध्यान अग्नि प्रजलाई, कर्मों की धूल उड़ाई।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, वात्सल्य भाव प्रकटाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

वैभाविक फल विनशाया, प्रभु धर्म प्रभाव बढ़ाया।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, जिनमुक्ति महाफल पाऊँ।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टांग अर्घ्य ले स्वामी पूजूँ मैं अन्तर्यामी।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, अविचल अनर्घ्यपद पाऊँ।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-वीर

आश्विन कृष्णा द्वितीया के दिन, शुभ गर्भ विषैं प्रभुवर आए।
अभिनन्दन मात-पिता का कर, देवों ने रत्न सु बरसाए।।

ॐ ह्रीं अश्विनकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दसवीं अषाढ़ श्यामा के दिन, मंगलमय अन्तिम जन्म लिया।
नरकों में भी साता आई, देवों ने उत्सव आन किया।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णदशम्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दो देवों ने आ नमन किया, अपराजित प्रभु वृत्तान्त कहा।
तब जातिस्मरण हुआ सुखमय, कलिषाढ़ दशैं तप आप लहा।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णदशम्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धातम रस में लीन हुए, तब चार घाति चकचूर किए।
मगसिर सित एकादशि स्वामी, केवलज्ञानी अरहन्त हुए।।

ॐ ह्रीं मगसिरशुक्ल-एकादश्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीनमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है टोंक मित्रधर सुखकारी, सम्मेदशिखर से सिद्ध हुए।
वैशाख कृष्ण चौदस के दिन, प्रभु आवागमन विमुक्त हुए।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

भावसहित पूजा करी, गाऊँ अब जयमाल।
परिणति अन्तर में ढले, होऊँ सहज निहाल।।

छंद-रोला

जयवन्तो नमिनाथ विश्व के जाननहारे।
जयवन्तो नमिनाथ दोष रागादि निवारे।।
जयवन्तो नमिनाथ मोहतम नाशन हारे।
जयवन्तो नमिनाथ भवोदधि तारण हारे।।

चरण परस से भूमि जगत में तीर्थ कहाई।
भाव विशुद्धि की निमित्त सबको सुखदायी।।
ध्यान द्वार से मम परिणति में निवसो स्वामी।
रत्नत्रयमय भाव-तीर्थ प्रकटे जगनामी।।

परमानन्दमय नाथ भाग्य से तुमको पाया।
भव-भव का सन्ताप सर्व ही सहज पलाया।।
भेदज्ञान की ज्योति जगी गुण चिन्तत प्रभुजी।
आत्मज्ञान की कला खिली, अन्तर में जिनजी।।

निज प्रभुता में मग्न नाथ जग प्रभुता पाई।
भई विभूति समवसरण की मंगलदायी।।
दिव्यध्वनि से दिव्य-तत्त्व प्रभुवर दर्शाया।
सम्यक् सरल सरल शिवपथ जिनवर दर्शाया।।

निर्मोही हो नाथ आपका मारग पाऊँ।
आप रहो आदर्श मुक्तिमारग मैं धाऊँ।।
राग-द्वेष मय वैभाविक परिणति मिट जावे।
रहूँ परम निर्मुक्त स्वपद प्रभु-सम प्रकटावे।।

वचनातीत स्वरूप वचन में कैसे आवे।
चिन्तन भी प्रभु महिमा का कुछ पार न पावे।।
अहो! स्वानुभवगम्य नाथ को निज में ध्याऊँ।
प्रभु पूजा के निमित्त सहज पुरुषार्थ बढ़ाऊँ।।

छंद-घत्ता

धनि-धनि नमिनाथा, नावें माथा, इन्द्रादिक तव चरणों में।
भव दुःख नशाऊँ, ध्यान बढ़ाऊँ, शिवसुख पाऊँ चरणों में।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

करें करावें मोद धर, पूजा श्री जिनराज।
स्वर्गादिक सुख पायके, पावें शिवपद राज।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

22. श्री नेमिनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-रोला

नेमिनाथ जिनराज, दर्श कर चित हुलसाया,
ज्ञानानन्दमय देव! सहज निज पद दरशाया।

लख अनुपम वैराग्य आपका त्रिभुवन नामी,
जगा सहज बहुमान विराजो हृदय स्वामी।।

छंद-दोहा

बाल ब्रह्मचारी प्रभो, अद्भुत प्रभुतावान।
पूजें हर्ष विभोर हो, भाव सहित भगवान।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-वीर

ज्ञान-सरोवर का सम्यक् जल, लेकर श्री जिनचरण चढ़ाय।
जन्म-जरा-मृत नाश करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाया।।
धन्य-धन्य नेमीश्वर स्वामी, बालयती हो शिवपद पाय।
आतमनिधि दातार जिनेश्वर, भाव यही निजपद प्रकटाय।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

दाह निकंदन शीतल चन्दन, लेकर श्री जिनचरण चढ़ाय।
सहज भाव शीतल नित वर्ते, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय।। धन्य.।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंडित अनुपम अक्षत, लेकर श्री जिनचरण चढ़ाय।
निज अक्षय पद प्राप्त करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय।। धन्य.।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म-वृक्ष के पुष्प शीलमय, लेकर श्री जिनचरण चढ़ाय।
काम व्यथा निर्मूल करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय।।
धन्य-धन्य नेमीश्वर स्वामी, बालयती हो शिवपद पाय।
आतमनिधि दातार जिनेश्वर, भाव यही निजपद प्रकटाय।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज रस पूरित नैवेद्य सुखमय, लेकर श्री जिनचरण चढ़ाय।
नाश करन को दोष क्षुधादि, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय।। धन्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्न दीप सुन्दर सुज्ञानमय, लेकर श्री जिनचरण चढ़ाय।
मोह तिमिर के नाश करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय।। धन्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो गंध दशधर्ममयी मैं, लेकर श्री जिनचरण चढ़ाय।
अष्ट कर्म निर्मूल करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय।। धन्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक फल मैं सहज भावमय, लेकर श्री जिनचरण चढ़ाय।
महामोक्ष फल प्राप्त करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय।। धन्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य अनूपम जिनभक्तिमय, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
अविनाशी अनर्घ्य पद पाऊँ, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय।। धन्य.।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य : (उपेन्द्रवज्रा - तर्ज : मैं हूँ पूर्ण ज्ञायक)

कार्तिक सुदी षष्ठमि गर्भ माहीं, आए प्रभो सर्व जन सुखपाहीं।
बरसे रतन-राशि महिमा अपारी, करें देवियाँ मातु सेवा सुखारी।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णषष्ठ्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावण सुदी षष्ठमि सुखकारी, जन्में जिनेश्वर जग दुःखहारी।
इन्द्रादि ने जन्म अभिषेक कीना, करें भावना जन्म हो ना नवीना।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तजा ब्याह का स्वांग दीक्षा सु धारी, अभयरूप निर्ग्रन्थ वृत्ति सम्भारी।
छठें श्रावणी सित जजों नाथ चरणं, दिखे विश्व में धर्म ही सत्य शरणं।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरो ध्यान जिनवर अचल अविकारी, नशे घातिया कर्म सब दुखकारी।
आश्विन सुदी प्रतिपदा सुखरूपं, जजूँ नेमि पायो सु अर्हत् स्वरूपं।।
ॐ ह्रीं आषाढशुक्लप्रतिपदायां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सित षाढ़ अष्टमि सु निर्वाण पायो, गिरनार पर्वत सु तीरथ कहायो।
अहो हम स्वयंसिद्ध निजपद निहारें, करें अर्चना भाव अपना सुधारें।।
ॐ ह्रीं आषाढशुक्ल-अष्टम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-दोहा

शंख चिह्न चरणों लसे, शोभे श्याम शरीर।
निरावरण विज्ञानमय, निश्चय से अशरीर।।

(तर्ज-अहो जगत गुरुदेव...)

नेमिनाथ जिनराज तिहुँ जग मंगलकारी।
अनन्त चतुष्टय रूप, देव परम अविकारी।।टेक।।
प्रभु पंचम भव पूर्व शुद्धातम पहचाना,
धरि जिनदीक्षा आप पायो स्वर्ग विमाना।
फिर तीजे भव माहिं सोलहकारण भाई,
धर्म-तीर्थ कर्तार प्रकृति पुण्य बँधाई।।
फेर हुए अहमिन्द्र तहँ तैं आप पधारे,
समुद्रविजय के लाल तुम ही शरण हमारे।
दीन पशु लख आप ब्याह तजो दुखकारी,
हो विरक्त शिव-हेतु निर्ग्रन्थ दीक्षा धारी।
कियो काम चकचूर निज बल से ही स्वामी,
तिहूँ जग पूज्य ललाम हुए जितेन्द्रिय नामी।

क्षपक श्रेणि चढ़ देव परमातम पद पायो,
धनपति ने तब आय समवसरण सु रचायो।।
झलकें लोकालोक युगपत् परिणति माहीं,
तदपि विकल्प न लेश रमे सहज निज माहीं।
नशे अठारह दोष आत्मीक गुण सोहे,
आयुध अम्बर नाहिं सौम्य दशा मन मोहे।।
खिरी दिव्यध्वनि देव दिव्य-तत्त्व दर्शायो,
समयसार अविकार सार-भूत प्रकटायो।
परलक्ष्यी सब भाव दुखकारण बतलाये,
रत्नत्रय सुखरूप सुख-कारण दर्शाये।।
जगत विभव निस्सार हमको भी प्रभु लागे,
मिटा मोह दुखकार तुम चरणों के आगे।
त्यागूँ जगत प्रपंच पुण्य-पाप दुखकारी,
भाव यही जिनराज पाऊँ पर अविकारी।।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-घत्ता

जय नेमि जिनेश्वर, साँचे ईश्वर, शील शिरोमणि जितमारम्।
भव-भय हर्तारं, धर्माधारं, जयवन्तो शिव-दातारम्।।
पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

23. श्री पार्श्वनाथ जिनपूजन

स्थापना

छंद-ताटंक

हे पार्श्वनाथ! हे पार्श्वनाथ, तुमने हमको यह बतलाया।
निज पार्श्वनाथ में थिरता से, निश्चय सुख होता सिखलाया।।
तुमको पाकर मैं तृप्त हुआ, ठुकराऊँ जग की निधि नामी।
हे रविसम स्व-पर प्रकाशक प्रभु, मम हृदय विराजो हे स्वामी।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

जड़ जल से प्यास न शान्त हुई, अतएव इसे मैं यहीं तजूँ।
निर्मल जल-सा प्रभु निजस्वभाव, पहचान उसी में लीन रहूँ।।
तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
चन्दन से शान्ति नहीं होगी, यह अन्तर्दहन जलाता है।
निज अमल भावरूपी चन्दन ही, रागाताप मिटाता है।।तन..।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।
प्रभु उज्ज्वल अनुपम निजस्वभाव ही, एकमात्र जग में अक्षत।
जितने संयोग वियोग तथा, संयोगी भाव सभी विक्षत।।तन..।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
ये पुष्प काम-उत्तेजक हैं, इनसे तो शान्ति नहीं होती।
निज समयसार की सुमन माल ही कामव्यथा सारी खोती।।तन..।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
जड़ व्यंजन क्षुधा न नाश करें, खाने से बन्ध अशुभ होता।
अरु उदय में होवे भूख अतः, निजज्ञान अशन अब मैं करता।। तन..।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
जड़ दीपक से तो दूर रहो, रवि से नहिं आत्म दिखाई दे।
निज सम्यग्ज्ञानमयी दीपक ही, मोहतिमिर को दूर करे।। तन..।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
जब ध्यान-अग्नि प्रज्वलित होय, कर्मों का ईंधन जले सभी।
दश धर्ममयी अतिशय सुगंध, त्रिभुवन में फैलेगी तब ही।।तन..।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो जैसी करनी करता है, वह फल भी वैसा पाता है।
जो हो कर्तृत्व-प्रमाद रहित, वह महा मोक्षफल पाता है।।तन..।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
निज आत्मस्वभाव अनुपम है, स्वाभाविक सुख भी अनुपम है।
अनुपम सुखमय शिवपद पाऊँ, अतएव यह अर्घ्य समर्पित है।।तन..।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-दोहा

दूज कृष्ण वैशाख को, प्राणत स्वर्ग विहाय।
वामा माता उर वसे, पूजूँ शिव सुखदाय।।
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
पौष कृष्ण एकादशी, सुतिथि महा सुखकार।
अन्तिम जन्म लियो प्रभु, इन्द्र कियो जयकार।।
ॐ ह्रीं पौषकृष्ण-एकादश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
पौष कृष्ण एकादशी, बारह भावन भाय।
केशलोंच करके प्रभु, धरो योग शिवदाय।।
ॐ ह्रीं पौषकृष्ण-एकादश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शुक्लध्यान में होय थिर, जीत उपसर्ग महान।
चैत्र कृष्ण शुभ चौथ को, पाया केवलज्ञान।।
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
श्रावण शुक्ल सु सप्तमी, पायो पद निर्वाण।
सम्मेदाचल विदित है, तव निर्वाण सुथान।।
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-गीतिका

हे पार्श्व प्रभु! मैं शरण आयो तीर्थंकर अति सुख लियो।
चिन्ता सभी मिट गयी मेरी कार्य सब पूरण भयो।।
चिन्तामणि चिन्तत मिले तरु कल्प माँगे देत हैं।
तुम पूजते सब पाप भागैं सहज सब सुख हेत हैं।।

हे वीतरागी नाथ ! तुमको भी सरागी मान कर।
माँगे अज्ञानी भोग वैभव जगत में सुख जान कर।।
तव भक्त वांछा और शंका आदि दोषों रहित हैं।
वे पुण्य को भी होम करते भोग फिर क्यों चहत हैं।।

जब नाग और नागिन तुम्हारे वचन उर धर सुर भये।
जो आपकी भक्ति करें वे दास उनके भी भये।।
वे पुण्यशाली भक्त जन की सहज बाधा को हरें।
आनन्द से पूजा करें वांछा न पूजा की करें।।

हे प्रभो! तब नासाग्र दृष्टि यह बताती है हमें।
सुख आत्मा में प्राप्त कर लें व्यर्थ बाहर में भ्रमें।।
मैं आप सम निज आत्म लखकर आत्म में थिरता धरूँ।
अरु आशा-तृष्णा से रहित अनुपम अतीन्द्रिय सुख भरूँ।।

जब तक नहीं यह दशा होती आपकी मुद्रा लखूँ।
जिनवचन का चिन्तन करूँ व्रत शील संयम रस चखूँ।।
सम्यक्त्व को नित दृढ़ करूँ पापादि को नित परिहरूँ।
शुभराग ज्ञायक का सदा विस्मरण पुद्गल का करूँ।।

स्मरण ज्ञायक का सदा विस्मरण पुद्गल का करूँ।
मैं निराकुल निजपद लहूँ प्रभु! अन्य कुछ भी नहिं चहूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-दोहा

पूज्य ज्ञान वैराग्य है, पूजक श्रद्धावान।
पूजा गुण अनुराग अरु, फल है सुख अम्लान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

24. श्री महावीर जिनपूजन

स्थापना

छंद-दोहा

अद्भुत प्रभुता शोभती, झलके शान्ति अपार।
महावीर भगवान के, गुण गाऊँ अविकार।।
निज बल से जीत्यो प्रभो, महा क्लेशमय काम।
पूजन करते भावना, वर्तूं नित निष्काम।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वानम्)
ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनम्)
ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

छंद-त्रिभंगी

भव-भव भटकायो, अतिदुख पायो, तृष्णाकुल तुम ढिंग आयो।
उत्तम समता जल, शुचि अति शीतल, पायो उर आनन्द छायो।।
इन्द्रादि नमन्ता, ध्यावत संता, सुगुण अनन्ता, अविकारी।
श्री वीर जिनन्दा, पाप निकन्दा, पूजों नित मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवताप निकन्दन, चन्दनसम गुण, हरष-हरष गाऊँ ध्याऊँ।
नाशूँ दुर्मोहं, दुखमय क्षोभं, सहज शान्ति प्रभु सम पाऊँ।। इन्द्रादि..।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय गुणमंडित, अमल अखंडित, चिदानन्द पद प्रीति धरूँ।
क्षत विभव न चाहूँ, तोष बढ़ाऊँ, अक्षय प्रभुता प्राप्त करूँ।। इन्द्रादि..।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु-सम आनन्दमय, नित्यानन्दमय, परम ब्रह्मचर्य चाहत हों।
नव बाढ़ लगाऊँ, काम नशाऊँ, सहज ब्रह्मपद ध्यावत हों।।
इन्द्रादि नमन्ता, ध्यावत संता, सुगुण अनन्ता, अविकारी।
श्री वीर जिनन्दा, पाप निकन्दा, पूजों नित मंगलकारी।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

दुख क्षुधा नशावन, पायो पावन, निज अनुभव रस नैवैद्यं।
नित तृप्त रहाऊँ, तुष्ट रहाऊँ, निज में ही हूँ निर्भेदं।। इन्द्रादि..।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उद्योत-स्वरूपं, शुद्ध चिद्रूपं, प्रभु प्रसाद प्रत्यक्ष भयो।
अज्ञान नशायो, समसुख पायो, जाननहार जनाय रह्यो।। इन्द्रादि..।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

बिच कर्ममहावन, भटक्यो भगवन्, शिवमारग तुमढिंग पायो।
तप अग्नि जलाऊँ, कर्म नशाऊँ, स्वर्णिम अवसर अब आयो।। इन्द्रादि..।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रागादि विकारं, दुखदातारं, त्याग सहज निजपद ध्याऊँ।
साधूँ हो निर्भय, शुद्ध रत्नत्रय, अविनाशी शिवफल पाऊँ।। इन्द्रादि..।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

करि अर्घ्य अनूपं, हे शिवभूपं, द्रव्य-भावमय भक्ति करूँ।
तज सर्व-उपाधि,बोधि-समाधि पाऊँ निज में केलि करूँ।। इन्द्रादि..।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

छंद-सरसी

नगरी सजी रत्न बरसाये, सोलह स्वप्ने देखे मात।
षष्ठमि सुदी आषाढ़ प्रभू का, गर्भ कल्याणक हुआ विख्यात।।
भावसहित प्रभु करूँ अर्चना, शुद्धातम कल्याणस्वरूप।
आनन्द सहित आप-सम ध्यावें, पावें अविचल बोध अनूप।।

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठ्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नरकों में भी कुछ क्षण को तो, साता का संचार हुआ।
चैत सुदी तेरस को प्रभुवर, जन्म जगत सुखकार हुआ।। भाव..।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीरण तृण-सम विषयभोग तज, बाल ब्रह्मचारी हो नाथ।
दशमी मगसिर कृष्णा के दिन जिनदीक्षा धारी जिननाथ।। भाव..।।

ॐ ह्रीं मगसिरकृष्णदशम्यां तपःकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशमी सुदि बैशाख तिथी को, आत्मलीन हो घाति विनाश।
धन्य-धन्य महावीर प्रभु को, हुआ सु केवलज्ञान प्रकाश।। भाव..।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तिम शुक्लध्यान प्रकटाया, शेष अघाति विमुक्त हुए।
कार्तिक कृष्ण अमावस के दिन, वीर जिनेश्वर सिद्ध हुए।। भाव..।।

ॐ ह्रीं कार्तिक-अमावस्यायां मोक्षकल्याणकमण्डिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-सोरठा

वर्धमान श्री वीर, सन्मति अरु महावीर जी।
जयवन्तो अतिवीर, पंच नाम जग में प्रसिद्ध।।

छंद-जोगीरासा

चित्स्वरूप प्रकटाया प्रभुवर, चित्स्वरूप प्रकटाया।
स्वयं स्वयंभू होय जिनेश्वर, चित्स्वरूप प्रकटाया।।टेक।।
हो सबसे निरपेक्ष सिंह के, भव में सम्यक् पाया।
स्वाश्रित आत्माराधन का ही, सत्य मार्ग अपनाया।।1।।

बढ़ती गई सु भाव-विशुद्धि, दसवें भव में स्वामी।
आप हुए अन्तिम तीर्थंकर, भरतक्षेत्र में नामी।।2।।
इन्द्रादिक से पूजित जिनवर, सम्यग्ज्ञानि विरागी।
इन्द्रिय भोगों की सामग्री, दुख निमित्त लख त्यागी।।3।।
जब विवाह प्रस्ताव आपके, सन्मुख जिनवर आया।
आत्मवंचना लगी हृदय में, दृढ़ वैराग्य समाया।।4।।
अज्ञानी-सम भव में फँसना, 'क्या इसमें चतुराई?'।
भव-भव में भोगों में फँसकर, भारी विपदा पाई।।5।।
उपादेय निज शुद्धातम ही, अब तो भाऊँ ध्याऊँ।
धरूँ सहज मुनिधर्म परम साधक हो शिवपद पाऊँ।।6।।
इस विचार का अनुमोदन कर, लौकान्तिक हर्षाये।
आप हुए निर्ग्रन्थ ध्यान से, घाति कर्म भगाये।।7।।
हुए सु गौतम गणधर पहले, दिव्यध्वनि सुखकारी।
खिरी श्रावणी वदि एकम को, त्रिभुवन मंगलकारी।।8।।
धर्मतीर्थ का हुआ प्रवर्तन, आत्मबोध जग पाया।
प्रभो! आपका शासन पाकर, रोम-रोम हुलसाया।।9।।
वर्ष बहत्तर आयु पूर्ण कर, सिद्धालय तिष्ठाये।
तुम गुण चिन्तन मोह नशावे, भेदज्ञान प्रकटावे।।10।।
सहज नमनकर पूजन का फल और न कुछ भी चाहूँ।
सहज प्रवर्ते तत्त्व भावना आवागमन मिटाऊँ।।11।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

छंद-वसंततिलका

सत्तीर्थ वीर प्रभु का जग में प्रवर्ते, निज तत्त्वबोध पाकर सब लोक हर्षे।
दुर्भावना न आवे मन में कदापि, निर्विघ्न निर्विकारी आराधना प्रवर्ते।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

समुच्चय जयमाला

छंद-दोहा

मोहादिक रिपु जीतकर, जय पाई अविकार।
जयमाला गाऊँ सुखद, गुण चिन्तन के द्वार।।

छंद-त्रोटक

जय मंगलमय जय लोकोत्तम, जय अनन्य शरण जय पुरुषोत्तम।
जय महावीर जय महाधीर, अवबोध-सिन्धु अति ही गम्भीर।।
जय तेजपुंज जय दिव्य-रूप, हे प्रशममूर्ति अति शान्त रूप।
जय वचन अगोचर हे महेश, जय स्वानुभूति गोचर जिनेश।
जय ज्ञानमात्र परभाव शून्य, जय गुण अनन्त से सदा पूर्ण।
जय वीत-मोह जय वीत-क्रोध, जय वीत-मान जय वीत-लोभ।।
जय वीत-क्षोभ जय वीत-काम, निर्दोष परम प्रभुता ललाम।
दृग् ज्ञान सुक्ख वीरज अनन्त, जय गुण अनन्त महिमा अनन्त।।
ध्रुव धर्म तीर्थ पाकर जिनेश, आनन्द हुआ उर में विशेष।
प्रभु दूर हुए सब पाप ताप, सन्तुष्ट आप में हुआ आप।।
देखत प्रभु को निज रूप दिखे, दुर्मोह मिटे दुष्कर्म नशे।
विभु धन्य अलौकिक गुणनिधान, करते भक्तों को निज समान।।
जिन आराधन की लगी लगन, मैं द्रव्य-भाव से बनूँ नगन।
भाऊँ ध्याऊँ ज्ञायक स्वरूप, देहादि दिखें अति भिन्न रूप।।
उपसर्ग परीषह सहज जीत, अपनाऊँ मैं परमार्थ नीति।
ऐसा पुरुषार्थ जगे स्वयमेव, साम्राज्य मुक्ति का लहूँ देव।।
भव-भव का दुखमय भ्रमण नाश, तिष्ठूँ सिद्धालय आप पास।
सब जीव लहें निज तत्त्वज्ञान, पावें सम्यग्दर्शन महान।।
मैत्री प्रमोद कारुण्य भाव, माध्यस्थ धार साधें स्वभाव।
विपरीत विकल्पों को सु त्याग, सब लगें लगावें मुक्तिमार्ग।।

दिन दूना धर्म प्रभाव बढ़े, दुर्व्यसन उपद्रव दूर रहें।
चित् शान्त रहे सन्तुष्ट रहे, नित आनन्द मंगल सहज बढ़े।।
भक्ति वश निज हित के निमित्त, पूजन विधान कीना पवित्र।
प्रभु भूल-चूक सब क्षमा होय, मम परिणति पूर्ण पवित्र होय।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद-दोहा

जिस विधि से जिनवर लहा, परमानन्द अम्लान।
उस विधि से ही हे विभो! होऊँ आप समान।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

(इसके पश्चात् महार्घ्य-शान्तिपाठ पढ़ते हुए विधान का समापन करें।)

*****

... अर्घ्यावलि ...

श्री तीस चौबीसी का अर्घ्य

द्रव्य आठों जु लीना है, अर्घ्य कर में नवीना है।
पूजता पाप छीना है, भानमल जोरि कीना है।।
द्वीप ढाई सरस राजै, क्षेत्र दश ता विषै छाजें।
सात शत बीस जिन राजें, पूजते पाप सब भाजें।।

ॐ ह्रीं श्री पाँच भरत पाँच ऐरावत दश क्षेत्र के विषैं तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत्रिम व अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घ्य (हिन्दी)

भूत भविष्यत् वर्तमान की तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन लोक के मन लाऊँ।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धी तीस चौबीसी, त्रिलोकसम्बन्धी-कृत्रिमाकृत्रिम-चैत्याचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु कोटि छप्पन लाख ऊपर, सहस सत्याणव मानिये।
शतच्यार पै गिन ले इक्यासी, भवन जिनवर जानिये।।
तिहुँ लोक भीतर सासते, सुर-असुर-नर पूजा करें।
तिन भवन को हम अर्घ्य लेकै, पूजि हैं जग दुख हरें।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि-षट्पंचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिः अकृत्रिम-जिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्य भक्ति आलोचना चाहुँ, कायोत्सर्ग अघ-नासन हेत।
कृत्रिमाकृत्रिम तीन लोक में, राजत हैं जिनबिम्ब अनेक।।
चतुर्निकाय के देव जजैं, ले अष्ट द्रव्य निज कुटुम्ब समेत।
निज शक्ति अनुसार जजूँ मैं, कर समाधि पाऊँ शिव-खेत।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

पूर्व मध्य अपराह्न की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार।
देव वन्दना करूँ भाव से, सकल कर्म की नासनहार।।
पंच महा गुरु सुमिरन करके, कायोत्सर्ग करूँ सुखकार।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना, जाऊँगा मैं अब भव-पार।।

(कायोत्सर्ग पूर्वक नौ बार णमोकार मंत्र की जाप्य करें।)

चौबीस तीर्थंकर भगवन्तों के अर्घ्य-1

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(दोहा)

आदीश्वर भगवान का, लख स्वरूप अविकार।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भक्ति से, नमहुँ त्रियोग सँभार।।1।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह महारिपु जीत कर, पायो पद निर्वाण।
अर्घ्य चढ़ाऊँ नमन कर, अजितनाथ भगवान।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविनाशी सुख शान्ति पथ, दर्शायो सुखकार।
सम्भवनाथ जिनेश को, पूजों मंगलकार।।3।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनन्दन जिनराज का, दर्शन शिवसुख देय।
भाव सहित पूजूँ अहो, अष्ट द्रव्य शुभ लेय।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमति सुमतिदायक प्रभो, कुमति ध्वांत हर-भानु।
भाव सहित पूजूँ तुम्हें, पाऊँ ध्रुव कल्याण।।5।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्म समान अलिप्त श्री, पद्मप्रभ जिनराय।
समवशरण में राजते, पूजत सुख उपजाय।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो! सुपार्श्व जिनेन्द्र के, चरणन शीश नवाय।
अर्घ्य चढ़ाऊँ हर्ष से, सर्व क्लेश विनशाय।।7।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृतचन्द्र चिदात्मा, चन्द्रप्रभ भगवान।
दर्शायो आनन्दमय, पूजूँ धर उर ध्यान।।8।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत या सुविधिप्रभु, शिवपद सुविधि बताय।
आप बसे शिवलोक में, पूजूँ अति हरषाय।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल जिन पूजूँ चरण, मोह ताप विनशाय।
शीतलता प्रभु आप-सम, सहजरूप विलसाय।।10।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेयरूप श्रेयांस जिन, परम श्रेय शुद्धात्म।
दर्शायो पूजूँ चरण, पाऊँ पद परमात्म।।11।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम बालयति हो प्रभो, वासुपूज्य भगवान।
ब्रह्मचर्य का भाव धरि, पूजूँ पद अम्लान।।12।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजत विमल जिनेश को, समल भाव नशि जाय।
यही भाव धरि पूजहूँ, तीन लोक के राय।।13।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महिमा अनन्त जिनेश की, शब्दों में नहिं आय।
ज्ञान माहिं अवलोक कर, पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय।।14।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम धरम दर्शाइया, धर्मनाथ जिनराज।
आनन्द सों पूजूँ प्रभो, सफल होंय सब काज।।15।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मशान्ति का मूल है, निर्मल भेद-विज्ञान।
ज्ञान कराओ शान्ति प्रभु, पूजूँ नित धर ध्यान।।16।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणिमात्र के प्रति प्रभो, दया सिखाई आप।
पूजूँ कुन्थु जिनेश को, जीवन हो निष्पाप।।17।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजत श्री अरनाथ को, भविजन चित हुलसाय।
जैसे ऊगत भानु के, सहज जलज खिल जाय।।18।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह मल्ल को जीतकर, आप हुए शिवनाथ।
मल्लिनाथ पद पूजते, देखूँ चेतन नाथ।।19।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि-व्रत धारूँ चाव सौं, अपने हित के काज।
यही भाव धरि पूजहूँ, मुनिसुव्रत जिनराज।।20।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सविनय अर्घ्य चढ़ाय के, नमन करूँ नमिनाथ।
दर्शन पाकर आपका, भविजन होंय सनाथ।।21।।
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ब्याह समय दीक्षा धरी, नेमीश्वर महाराज।
परम ब्रह्मपद दृष्टि धरि, पूजूँ शिवपद काज।।22।।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अहो अहो श्री पार्श्वप्रभु, किया कमठ मद चूर।
भक्ति सहित प्रभु पूजते, विपद होय सब दूर।।23।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
निज बल से जीता प्रभो, महासुभट दुष्काम।
पूजूँ वीर जिनेश को, होऊँ मैं निष्काम।।24।।
ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीस तीर्थंकरों के अर्घ्य–2

1. श्री ऋषभनाथ भगवान का अर्घ्य

(ताटंक)

शुचि निरमल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ्य सु लेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय।।
श्रीआदिनाथ के चरणकमल पर, बलि–बलि जाऊँ मन–वच–काय।
हो करुणानिधि! भव–दुख मेटो, यातैं मैं पूजूँ प्रभु पाय।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

2. श्री अजितनाथ भगवान का अर्घ्य

(त्रिभंगी)

जल–फल सब सज्जै, बाजत बज्जै, गुनगन रज्जै मन मज्जै।
तुव पद जुगमज्जै, सज्जन जज्जै, ते भव भज्जै निजकज्जै।।

श्री अजित जिनेशं, नुत नक्रेशं, चक्र–धरेशं खग्गेशं।
मन–वांछित दाता, त्रिभुवन–त्राता, पूजों ख्याता जग्गेशं।।
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

3. श्री संभवनाथ भगवान का अर्घ्य

(चौबोला)

जल चंदन तंदुल प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ्य किया।
तुमको अरपों भाव–भगति धर, जै जै जै शिवरमनि पिया।।
संभव जिन के चरन चरचतैं, सब आकुलता मिट जावै।
निज निधि ज्ञान–दरश–सुख–वीरज, निराबाध भविजन पावै।।
ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

4. श्री अभिनन्दननाथ भगवान का अर्घ्य

(हरिगीतिका)

अष्ट द्रव्य सँवारि सुन्दर, सुजस गाय रसाल ही।
नचत रचत जजों चरन जुग, नाय नाय सुभाल ही।।
कलुष–ताप निकन्द श्री अभिनन्द, अनुपम चन्द हैं।
पद–वन्द वृन्द जजे प्रभु भवद्वन्द्व–फन्द निकन्द हैं।।
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

5. श्री सुमतिनाथ भगवान का अर्घ्य

(कवित्त)

जल चंदन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप फल सकल मिलाय।
नाचि राचि शिरनाय समरचों, जय जय जय जय जय जिनराय।।
हरिहर वंदित पाप–निकंदित, सुमतिनाथ त्रिभुवन के राय।
तुम पद–पद्म सद्मशिवदायक, जजत मुदित मन उदित सुभाय।।
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

6. श्री पद्मप्रभ भगवान का अर्घ्य

(चाल होली)

जल फल आदि मिलाय गाय गुन, भगति भाव उमगाय।
जजों तुमहिं शिवतियवर जिनवर, आवागमन मिटाय।।

मन-वच-तन त्रय धार देत ही, जनम जरा मृत जाय।
पूजों भावसों, श्री पदमनाथ पद सार, पूजों भावसों।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

7. श्री सुपार्श्वनाथ भगवान का अर्घ्य

(चौपाई आँचलीबद्ध)

आठों दरब साजि गुन गाय, नाचत राचत भगति बढ़ाय।
दयानिधि हो, जय जगबन्धु दयानिधि हो।।
तुम पद पूजों मन-वच-काय, देव सुपारस शिवपुरराय।
दयानिधि हो, जय जगबन्धु दयानिधि हो।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

8. श्री चन्द्रप्रभ भगवान का अर्घ्य

(अवतार)

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों।
पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों।।
श्री चन्दनाथ दुति चन्द, चरनन चन्द लगै,
मन-वच-तन जजत अमंद, आतमजोति जगै।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

9. श्री पुष्पदन्त भगवान का अर्घ्य

(चाल होली)

जल फल सकल मिलाय मनोहर, मन-वच-तन हुलसाय।
तुम पद पूजौं प्रीति लायकै, जय जय त्रिभुवनराय।।
मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

10. श्री शीतलनाथ भगवान का अर्घ्य

(वसंततिलका)

कंश्री फलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजै।
नाचे रचे मचत बज्जत सज्ज बाजै।।

रागादि दोष मल-मर्दन हेतु येवा।
चर्चों पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

11. श्री श्रेयांसनाथ भगवान का अर्घ्य

(हरिगीता)

जल मलय तंदुल सुमन चरु अरु दीप धूप फलावली।
करि अर्घ्य चरचों चरनजुग प्रभु मोहि तार उतावली।।
श्रेयांसनाथ जिनन्द त्रिभुवन-वन्द आनन्द-कन्द हैं।
दुख द्वन्द्व-फन्द निकन्द पूरन-चन्द जोति अमन्द हैं।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

12. श्री वासुपूज्य भगवान का अर्घ्य

(जोगीरासा)

जल-फल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरों यह लाई।।
वासुपूज वसुपूज तनुज पद, वासव सेवत आई।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिव-तिय सनमुख धाई।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

13. श्री विमलनाथ भगवान का अर्घ्य

(सोरठा)

आठों दरब सँवार, मन-सुखदायक पावने।
जजों अर्घ्य भर थार, विमल विमल शिवतिय रमन।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

14. श्री अनन्तनाथ भगवान का अर्घ्य

(हरिगीता)

शुचि नीर चन्दन शालिशंदन, सुमन चरु दीवा धरों।
अरु धूप फल जुत अरघ करि, कर जोर जुग विनती करों।।

जग-पूज परम पुनीत मीत, अनन्त संत सुहावनों।
शिव-कंत-वंत महंत ध्यावो, भ्रन्तवन्त नशावनों।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

15. श्री धर्मनाथ भगवान का अर्घ्य

(जोगीरासा)

आठों दरब साज शुचि चितहर, हरषि हरषि गुन गाई।
बाजत दृम दृम दृम मृदंग गत, नाचत ता थेई थाई।।
परम धरम-शम-रमन धरम-जिन, अशरन शरन निहारी।
पूजूँ पाय गाय गुन सुन्दर, नाचौं दै दै तारी।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

16. श्री शान्तिनाथ भगवान का अर्घ्य

(त्रिभंगी)

वसु द्रव्य सँवारी, तुम ढिंग धारी, आनंदकारी दृग प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातैं थारी शरनारी।
श्री शान्तिजिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं चक्रेशं।
हनि अरिचक्रेशं, हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

17. श्री कुन्थुनाथ भगवान का अर्घ्य

(चाल लावनी)

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप लेरी।
फलजुत जजन करों मन सुख धरि, हरो जगत फेरी।।
कुन्थु सुन अरज दास केरी, नाथ सुनि अरज दास केरी।
भव-सिन्धु पर्‍यो हों नाथ! निकारो, बाँह पकर मेरी।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

18. श्री अरनाथ भगवान का अर्घ्य

(त्रिभंगी)

सुचि स्वच्छ पटीरं, गंधगहीरं, तंदुलशीरं पुष्प चरूँ।
वर दीपं धूपं, आनन्दरूपं, लै फल भूपं अर्घ्य करूँ।।
प्रभु दीनदयालं, अरिकुलकालं, विरदविशालं सुकुमालम्।
हनि मम जंजालं, हे जगपालं, अनगुनमालं वरभालम्।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

19. श्री मल्लिनाथ भगवान का अर्घ्य

(जोगीरासा)

जल फल अरघ मिलाय गाय गुन पूजौं भगति बढ़ाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीधर, शरन गही मैं आई।।
राग-दोष मद मोह हरन को, तुम ही हौ वरवीरा।
यातैं शरन गही जगपतिजी, वेग हरो भवपीरा।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

20. श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान का अर्घ्य

(गीतिका)

जल गंध आदि मिलाय आठों, दरब अरघ सजों वरों।
पूजों चरन-रज भगत जुत, जातैं जगत सागर तरों।।
शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ मुनि गुनमाल है।
तसु चरन आनन्दभरन तारन, तरन विरद विशाल है।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

21. श्री नमिनाथ भगवान का अर्घ्य

जल फलादि मिलाय मनोहरं, अरघ धारत ही भय भौ हरं।
जजतु हौं नमि के गुन गायकें, जुग-पदांबुज प्रीति लगायकें।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

22. श्री नेमिनाथ भगवान का अर्घ्य

(चाल होली)

जल-फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय।
अष्टम थिति के राज करन कों, जजों अंग वसु नाय।।
दाता मोक्ष के, श्री नेमिनाथ जिनराय, दाता मोक्ष के।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

23. श्री पार्श्वनाथ भगवान का अर्घ्य

नीर गन्ध अक्षतान् पुष्प चरु लीजिए।
दीप-धूप-श्रीफलादि अर्घ्य तैं जजीजिये।।
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा।
दीजिए निवास मोक्ष, भूलिए नहीं कदा।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

24. श्री महावीर भगवान का अर्घ्य

(अवतार)

(1) जल-फल वसु सजि हिमथार, तन-मन मोद धरों।
गुण गाऊँ भवदधि तार, पूजत पाप हरों।।
श्री वीर महा अतिवीर, सन्मति-नायक हो।
जय वर्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(हरिगीत)

(2) इस अर्घ्य का क्या मूल्य है अन्-अर्घ्य पद के सामने।
उस परम पद को पा लिया, हे पतित-पावन! आपने।।
सन्तप्त मानस शान्त हों, जिनके गुणों के गान में।
वे वर्धमान महान जिन, विचरें हमारे ध्यान में।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पंच बालयति का अर्घ्य

सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ, अर्घ्य बनावत हैं।
वसु कर्म अनादि संयोग, ताहि नसावत हैं।।
श्री वासु पूज्य-मल्लि-नेमि, पारस वीर अति।
नमूँ मन-वच-तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर-पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चौबीस तीर्थंकरों का अर्घ्य

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ्य करों।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द-कन्द सही।
पद जजत हरत भव-फन्द, पावत मोक्ष-मही।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सीमन्धर भगवान का अर्घ्य

निर्मल जल-सा प्रभु निजस्वरूप, पहिचान उसी में लीन हुए।
भव-ताप उतरने लगा तभी, चंदन-सी उठी हिलोर हिये।।
अभिराम भवन प्रभु अक्षत का, सब शक्ति प्रसून लगे खिलने।
क्षुत् तृषा अठारह दोष क्षीण, कैवल्य प्रदीप लगा जलने।।
मिट चली चपलता योगों की, कर्मों के ईंधन ध्वस्त हुए।
फल हुआ प्रभो! ऐसा मधुरिम, तुम धवल निरंजन स्वस्थ हुए।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विद्यमान बीस तीर्थंकरों का अर्घ्य

जल फल आठों दरब अरघ कर प्रीति धरी है।
गणधर इन्द्रनि हूतैं थुति पूरी न करी है।।

'द्यानत' सेवक जानके (हो) जगतैं लेहु निकार।
सीमंधर जिन आदि दे (स्वामी) बीस विदेह मँझार।।
श्री जिनराज हो, भव तारणतरण जिहाज, श्री महाराज हो।।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री देव-शास्त्र-गुरु का अर्घ्य

क्षण भर निजरस को पी चेतन मिथ्यामल को धो देता है।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है।।
अनुपम सुख तब विलसित होता, केवल-रवि जग-मग करता है।
दर्शन-बल पूर्ण प्रकट होता, यह ही अरहंत अवस्था है।।
यह अर्घ्य समर्पण करके प्रभु, निज गुण का अर्घ्य बनाऊँगा।
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु, अरहन्त अवस्था पाऊँगा।।
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पंच परमेष्ठी का अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ।
अब तक के संचित कर्मों का, मैं पुंज जलाने आया हूँ।।
यह अर्घ्य समर्पित करता हूँ, अविचल अनर्घ्य पद दो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी।।
ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध परमेष्ठी का अर्घ्य

जल पिया और चन्दन चरचा, मालायें सुरभित सुमनों की।
पहनीं, तन्दुल सेये व्यंजन, दीपावलियाँ की रत्नों की।।
सुरभि धूपायन की फैली, शुभ कर्मों का सब फल पाया।
आकुलता फिर भी बनी रही, क्या कारण जान नहीं पाया।।
जब दृष्टि पड़ी प्रभुजी तुम पर, मुझको स्वभाव का भान हुआ।
सुख नहीं विषय-भोगों में है, तुमको लख यह सद्ज्ञान हुआ।।

जल से फल तक का वैभव यह, मैं आज त्यागने हूँ आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।
ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री बाहुबली भगवान का अर्घ्य

पुण्य भाव से स्वर्गादिक पद, बार-बार पा जाता हूँ।
निज अनर्घ्य पद मिला न अब तक, इससे अर्घ्य चढ़ाता हूँ।।
श्री बाहुबली स्वामी चरणों में सादर शीश झुकाता हूँ।
अविनश्वर शिवसुख पाने को, अब नाथ शरण में आता हूँ।।
ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सप्तर्षि मुनीश्वरों का अर्घ्य

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ्य कीजे पावना।।
मन्वादि चारण ऋद्धि धारक, मुनिन की पूजा करूँ।
ता करे पातक हरें सारे, सकल आनन्द विस्तरूँ।।
ॐ ह्रीं श्री मन्वादि-चारण-ऋद्धिधारी-सप्तर्षिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवाणी (सरस्वती) का अर्घ्य

जल चंदन अक्षत पुष्प चरु चत, दीप धूप अति फल लावैं।
पूजा को ठानत, जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत' सुख पावैं।।
तीर्थंकर की धुनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई।
सो जिनवर वानी शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी पूज्य भई।।
ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत-सरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पंचमेरु जिनालयों का अर्घ्य

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।

पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि-अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नन्दीश्वर जिनालयों का अर्घ्य

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों।।
नन्दीश्वर श्री जिन-धाम, बावन पुंज करों।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद-भाव धरों।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सोलहकारण भावनाओं का अर्घ्य

जल फल आठों दरब चढ़ाय, 'द्यानत' वरत करों मन लाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर-पद पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री दशलक्षण का अर्घ्य

आठों दरब सँवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसौं।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री रत्नत्रय का अर्घ्य

(सोरठा)

आठों दरव निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये।
जनम रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं सम्यक्-रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मानस्तम्भ में विराजित जिनेन्द्रदेव का अर्घ्य

देखत मान गले मानी का, मानस्तम्भ सार्थक नाम।
चतुर्मुखी जिनबिम्ब विराजे, भक्ति सहित मैं करूँ प्रणाम।।
द्रव्य-भावमय अर्घ्य चढ़ाकर, भाऊँ भावना मंगलकार।
ज्ञानमयी निर्मान अवस्था, हे जिनवर! पाऊँ अविकार।।

ॐ ह्रीं श्री मानस्तम्भस्थजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री समवशरण में स्थित जिनेन्द्रदेव का अर्घ्य

अद्भुत रचना समवसरण की, प्रभु स्वरूप अविकार है।
दिव्यध्वनि में ध्वनित हो रहा, अहो समय का सार है।।
वीतराग प्रभु के दर्शन से, खुला मुक्ति का द्वार है।
भक्तिभाव से अर्घ्य चढ़ाऊँ, आनन्द अपरम्पार है।।

ॐ ह्रीं श्री समवशरणस्थजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री निर्वाणक्षेत्र का अर्घ्य

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगत सों, जोर कर विनती करौं।।
सम्मेदगढ़ गिरनार चम्पा, पावापुरी कैलाश कों।
पूजौं सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास कों।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री तीर्थक्षेत्रों का अर्घ्य

तीर्थ तत्त्वमय है सदा, ज्ञायक शाश्वत तीर्थ।
अभेद ज्ञायक भावना, है व्यवहार सुतीर्थ।।
ज्ञायक भावना भावते, संत जहाँ तिष्ठाय।
ते ही क्षेत्र सु जगत में, तीर्थक्षेत्र कहलाय।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वतीर्थक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अष्टापद कैलाश पर्वत सिद्धक्षेत्र का अर्घ्य

शुद्धानन्द स्वरूप आत्मा है अनर्घ्य पद का स्वामी।
ध्रुव चैतन्य त्रिकाली के आश्रय से हो त्रिभुवन नामी।।

ऋषभदेव चरणाम्बुज पूजूँ वन्दूँ अष्टापद कैलाश।
नागकुमार बालि आदिक ने पाया चिन्मय मोक्ष प्रकाश।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टापदकैलाशतीर्थक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र का अर्घ्य

जल गन्धाक्षत पुष्प सु नेवज लीजिये,
दीप धूप फल लेकर अर्घ्य सु-दीजिये।
पूजों शिखर सम्मेद सु मन वच काय जू,
नरकादिक दुख टरैं अचल पद पाय जू।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकर-शाश्वतनिर्वाणक्षेत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र का अर्घ्य

परिणाम शुद्ध का अर्घ्य चरणों में लाया।
अष्टम वसुधा का राज्य पाने को आया।।
चम्पापुर क्षेत्र महान दर्शन सुखकारी।
जय वासुपूज्य भगवान प्रभु मंगलकारी।।

ॐ ह्री श्री चम्पापुरतीर्थक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री गिरनार सिद्धक्षेत्र का अर्घ्य

मैं पारिणामिक भाव का ले अर्घ्य निज आश्रय करूँ।
मैं शुद्ध सादि अनंत शाश्वत परम सिद्ध स्वपद वरूँ।।
मैं ऊर्जयन्त महान गिरि गिरनार की पूजा करूँ।
मैं नेमि प्रभु के चरण पंकज युगल निज मस्तक धरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री गिरनारतीर्थक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पावापुर सिद्धक्षेत्र का अर्घ्य

पावापुर तीर्थ महान भारत में नामी।
जय महावीर भगवान त्रिभुवन के स्वामी।।
निज अर्घ्य अनूठा देव! पावन लाया हूँ।
निज सिद्ध स्वपद स्वयमेव पाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री पावापुरतीर्थक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय महार्घ्य-1

(हरिगीतिका)

मैं देव श्री अरहंत पूजूँ, सिद्ध पूजूँ चाव सों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ, साधु पूजूँ भाव सों।।
अरहन्त भाषित बैन पूजूँ, द्वादशांग रची गनी।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरण, शिवहेत सब आशा हनी।।
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि, दयामय पूजूँ सदा।
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहिं कदा।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम-अकृत्रिम, चैत्य-चैत्यालय जजूँ।
पंचमेरु-नन्दीश्वर जिनालय, खचर सुर पूजित भजूँ।।
कैलाश श्री सम्मेदगिरि, गिरनार मैं पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि, और तीरथ शर्मदा।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ, बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस वसु जय, होय पति शिव गेह के।।

(दोहा)

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, बहु विधि भक्ति बढ़ाय।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्तसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो, द्वादशांग-जिनवाणीभ्यो उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय, दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो, सम्यग्दर्शन-ज्ञानचारित्रेभ्यः त्रिलोकसम्बन्धीकृत्रिमाकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो, पंचमेरौ अशीतिचैत्यालयेभ्यो, नन्दीश्वर-द्वीपस्थ-द्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो, श्रीसम्मेद-शिखर-गिरनारगिरि-कैलाशगिरि-चम्पापुर-पावापुर-आदिसिद्धक्षेत्रेभ्यो, अतिशयक्षेत्रेभ्यो, विदेहक्षेत्रस्थित-सीमन्धरादिविद्यमान-विंशतितीर्थंकरेभ्यो, ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो, भगवज्जिनसहस्राष्टनामभ्यश्च अनर्घ्यपद-प्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति-पाठ (भाषा)-1

(हरिगीतिका)

शास्त्रोक्त विधि पूजा महोत्सव, सुरपति चक्री करैं।
हम सारिखे लघु पुरुष कैसे, यथाविधि पूजा करैं।।
धन-क्रिया-ज्ञान रहित न जाने, रीत पूजन नाथजी।
हम भक्तिवश तुम चरण आगे, जोड़ लीने हाथजी।।1।।

दुख-हरन मंगलकरन, आशा-भरन जिन पूजा सही।
यह चित्त में श्रद्धान मेरे, शक्ति है स्वयमेव ही।।
तुम सारिखे दातार पाये, काज लघु जाचूँ कहा।
मुझ आप-सम कर लेहु स्वामी, यही इक वांछा महा।।2।।

संसार भीषण विपिन में, वसु कर्म मिल आतापियो।
तिस दाहतैं आकुलित चिरतैं, शांति-थल कहुँ ना लियो।।
तुम मिले शान्तिस्वरूप, शान्ति सुकरन समरथ जगपती।
वसु कर्म मेरे शान्ति कर दो, शान्तिमय पंचमगती।।3।।

जबलौं नहीं शिव लहूँ, तबलौं देह यह नर पावना।
सत्संग शुद्धाचरण श्रुत-अभ्यास आतम-भावना।।
तुम बिन अनंतानंत काल गयो रुलत जग-जाल में।
अब शरण आयो नाथ युग कर, जोर नावत भाल मैं।।4।।

(दोहा)

कर प्रमाण के मान तैं, गगन नपै किहि भंत।
त्यों तुम गुण वर्णन करत, कवि पावे नहिं अंत।।5।।

*****

समुच्चय महार्घ्य-2

पूजूँ मैं श्री पंच परम गुरु, उनमें प्रथम श्री अरहन्त।
अविनाशी अविकारी सुखमय, दूजे पूजूँ सिद्ध महन्त।।

तीजे श्री आचार्य तपस्वी, सर्व साधु नायक सुखधाम।
उपाध्याय अरु सर्वसाधु प्रति, करता हूँ मैं कोटि प्रणाम।।

करूँ अर्चना जिनवाणी की, वीतराग विज्ञान स्वरूप।
कृत्रिमाकृत्रिम सभी जिनालय, वन्दूँ अनुपम जिनका रूप।।

पंचमेरु नन्दीश्वर वन्दूँ, जहाँ मनोहर हैं जिनबिम्ब।
जिसमें झलक रहा है प्रतिपल, निज ज्ञायक का ही प्रतिबिम्ब।।

भूत भविष्यत् वर्तमान की, मैं पूजूँ चौबीसी तीस।
विदेह क्षेत्र के सर्व जिनेन्द्रों के चरणों में धरता शीश।।

तीर्थंकर कल्याणक वन्दूँ, कल्याणक अरु अतिशय क्षेत्र।
कल्याणक तिथियाँ मैं चाहूँ, और धार्मिक पर्व विशेष।।

सोलहकारण दशलक्षण अरु, रत्नत्रय वन्दूँ धर चाव।
दयामयी जिनधर्म अनूपम, अथवा वीतरागता भाव।।

परमेष्ठी का वाचक है जो, ओंकार वन्दूँ मैं आज।
सहस्रनाम की करूँ अर्चना, जिनके वाच्य मात्र जिनराज।।

जिसके आश्रय से ही प्रकटे, सभी पूज्य पद दिव्य ललाम।
ऐसे निज ज्ञायक स्वभाव की, करूँ अर्चना मैं अभिराम।।

छंद-दोहा

भक्तिमयी परिणाम का, अद्भुत अर्घ्य बनाय।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, ज्ञायक-दृष्टि लाय।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्तसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो, द्वादशांगजिनवाणीभ्यो उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय, दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो, सम्यग्दर्शन-ज्ञानचारित्र रत्नत्रयेभ्यः, त्रिलोकसम्बन्धीकृत्रिमाकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यः, पंचमेरौ अशीतिचैत्यालयेभ्यो, नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यः, श्री सम्मेदशिखर, गिरनारगिरि, कैलाशगिरि, चम्पापुर, पावापुरादिसिद्धक्षेत्रेभ्यो, अतिशयक्षेत्रेभ्यो, विदेहक्षेत्रस्थितसीमन्धरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो, ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो, भगवज्जिनसहस्राष्टनामेभ्यश्च अनर्घ्यपद-प्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति पाठ–2

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

हूँ शान्तिमय ध्रुव-ज्ञानमय, ऐसी प्रतीति जब जगे।
अनुभूति हो आनन्दमय, सारी विकलता तब भगे।।1।।

निज भाव ही है एक आश्रय शान्तिदाता सुखमयी।
भूल स्व दर-दर भटकते, शान्ति कब किसने लही।।2।।

निज घर बिना विश्राम नाहीं, आज यह निश्चय हुआ।
मोह की चट्टान टूटी, शान्ति-निर्झर बह रहा।।3।।

यह शान्ति धारा हो अखंडित, चिरकाल तक बहती रहे।
होवे निमग्न सुभव्यजन, सुख-शान्ति सब पाते रहें।।4।।

पूजोपरान्त प्रभो! यही, इक भावना है हो रही।
लीन निज में ही रहूँ प्रभु, और कुछ वांछा नहीं।।5।।

(दोहा)

सहज परम आनन्दमय, निज ज्ञायक अविकार।
स्व में लीन परिणति विषैं, बहती समरस धार।।

क्षमापना

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

छंद-वीर

थी धन्य घड़ी जब निज ज्ञायक की महिमा मैंने पहचानी।
हे वीतराग सर्वज्ञ महा-उपकारी, तव पूजन ठानी।।

सुख हेतु जगत में भ्रमता था, अन्तर में सुखसागर पाया।
प्रभु निजानन्द में लीन देख, मोहे यही भाव अब उमगाया।।

पूजा का भाव विसर्जन कर, तुम-सम ही निज में थिर होऊँ।
उपयोग नहीं बाहर जावे, भवक्लेश बीज अब नहिं बोऊँ।।

पूजा का किया विसर्जन प्रभु, और पाप भाव में पहुँच गया।
अब तक की मूरखता भारी, तज नीम, हलाहल हाय पिया।।

ये तो भारी कमजोरी है, उपयोग नहीं टिक पाता है।
तत्त्वादिक चिन्तन भक्ति से भी, दूर पाप में जाता है।।

हे बल अनन्त के धनी विभो! भावों में तब तक बस जाना।
निज से बाहर भटकी परिणति, निज ज्ञायक में ही पहुँचाना।।

पावन पुरुषार्थ प्रकट होवे, बस निजानन्द में मग्न रहूँ।
तुम आवागमन विमुक्त हुए, मैं पास आपके जा तिष्ठूँ।।

छंद-दोहा

अक्षर पद अरु विधि में, हुई चूक जो कोय।
प्रभु प्रसाद से हो क्षमा, भक्ति सहाई होय।।

पुष्पांजलिं क्षिपामि/क्षिपेत्।

*****

शान्ति-पाठ (भाषा)-3

(चौपाई)

शांतिनाथ मुख शशि-उनहारी, शील-गुण-व्रत-संयमधारी।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमलदल लाजैं।।

पंचम चक्रवर्ति पद धारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।
इन्द्र-नरेन्द्र पूज्य जिननायक, नमो शांति-हित शांति विधायक।।

दिव्य विटप बहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा।
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी।।

शांति-जिनेश शांति सुखदाई, जगत पूज्य पूजौं शिर नाई।
परम शांति दीजे हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार संघ को।।

(वसन्ततिलका)

पूजैं जिन्हें मुकुट-हार-किरीट लाके।
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके।।
सो शांतिनाथ वर-वंश जगत प्रदीप।
मेरे लिए करहिं शान्ति सदा अनूप।।

(इन्द्रवज्रा)

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीन को औ' यतिनायकों को।
राजा-प्रजा-राष्ट्र-सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन! शांति को दे॥

(स्रग्धरा)

होवे सारी प्रजा को, सुख बलयुत हो, धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समय पै, तिल भर न रहे, व्याधियों का अंदेशा।।
होवे चोरी न जारी, सुसमय वरते, हो न दुष्काल मारी।
सारे ही देश धारें जिनवर-वृष को, जो सदा सौख्यकारी।।

(दोहा)

घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शांति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज।।

(मन्दाक्रान्ता)

शास्त्रों का हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगति का।
सद्वृत्तों का सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का।।
बोलूँ प्यारे वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ।
तौ लौं सेऊँ चरण जिनके, मोक्ष जौ लौं न पाऊँ।।

(आर्या)

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तब लौं लीन रहौं प्रभु, जब लौं पाया न मुक्ति-पद मैंने।।
अक्षर पद मात्रा से दूषित, जो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भव-दुख से।
हे जगबन्धु जिनेश्वर! पाऊँ तव चरण-शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी।।

(नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

क्षमापना

(दोहा)

बिन जाने वा जान के, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसाद तैं परम गुरु, सो सब पूरन होय।।1।।
पूजन-विधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करहु भगवान।।2।।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव।।3।।
तुम चरणन ढिंग आयके, मैं पूजूँ अति चाव।
आवागमन रहित करो, मेटो सकल विभाव।।4।।

(अनुष्टुप्)

मङ्गलं भगवान् वीरो मङ्गलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम्।।
सर्वमङ्गल-माङ्गल्यं सर्वकल्याणकारकम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम्।।

*****

निर्वाणकाण्ड (भाषा)

(श्री भैया भगवतीदासजी कृत)

(दोहा)

वीतराग वन्दौं सदा, भावसहित सिर नाय।
कहूँ काण्ड निर्वाण की, भाषा सुगम बनाय।।

(चौपाई)

अष्टापद आदीश्वर स्वामि, वासुपूज्य चम्पापुरि नामि।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, बन्दौं भाव-भगति उर धार।।

चरम तीर्थंकर चरम-शरीर, पावापुरि स्वामी महावीर।
शिखर समेद जिनेसुर बीस, भावसहित बन्दौं निश-दीस।।

वरदत्तराय रु इन्द्र मुनिन्द, सायरदत्त आदि गुणवृन्द।
नगर तारवर मुनि उठकोड़ि[1], बन्दौं भावसहित कर जोड़ि।।

श्री गिरनार शिखर विख्यात, कोड़ि बहत्तर अरु सौ सात।
शम्भु प्रद्युम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूँ तसु पाय।।

रामचन्द के सुत द्वै वीर, लाडनरिन्द आदि गुणधीर।
पाँच कोड़ि मुनि मुक्ति मँझार, पावागिरि बन्दौं निरधार।।

पाण्डव तीन द्रविड़-राजान, आठ कोड़ि मुनि मुकति पयान।
श्री शत्रुंजयगिरि के सीस, भावसहित बन्दौं निश-दीस।।

जे बलभद्र मुकति में गये, आठ कोड़ि मुनि औरहु भये।
श्री गजपंथ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूँ तिहुँ काल।।

राम हणू सुग्रीव सुडील, गव गवाख्य नील महानील।
कोड़ि निन्याणव मुक्ति पयान, तुंगीगिरि वन्दौं धरि ध्यान।।

1. साढ़े तीन करोड़

नंग-अनंगकुमार सुजान, पाँच कोड़ि अरु अर्ध प्रमाण।
मुक्ति गये सोनागिरि शीश, ते बन्दौं त्रिभुवनपति ईस।।

रावण के सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवा-तट सार।
कोटि पंच अरु लाख पचास, ते बन्दौं धरि परम हुलास।।

रेवा नदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट।
द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठकोड़ि वन्दौं भव-पार।।

बड़वानी बड़नगर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग।
इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते बन्दौं भव-सागर-तर्ण।।

सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरि-वर शिखर मँझार।
चेलना नदी-तीर के पास, मुक्ति गये बन्दौं नित तास।।

फलहोड़ी बड़गाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिर रूप।
गुरुदत्तादि मुनीश्वर जहाँ, मुक्ति गये बन्दौं नित तहाँ।।

बालि महाबालि मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय।
श्री अष्टापद मुक्ति मँझार, ते बन्दौं नित सुरत सँभार।।

अचलापुर की दिश ईसान, तहाँ मेंढगिरि नाम प्रधान।
साढ़े तीन कोड़ि मुनिराय, तिनके चरण नमूँ चित लाय।।

वंशस्थल वन के ढिग होय, पश्चिम दिशा कुन्थुगिरि सोय।
कुलभूषण देशभूषण नाम, तिनके चरणनि करूँ प्रणाम।।

जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पाँच सौ लहे।
कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वन्दन करूँ जोरि जुग पान।।

समवसरण श्री पार्श्व-जिनन्द, रेसन्दीगिरि नयनानन्द।
वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते बन्दौं नित धरम-जिहाज।।

मथुरापुर पवित्र उद्यान, जम्बूस्वामी जी निर्वाण।
चरम केवली पंचम काल, ते बन्दौं नित दीनदयाल।।

तीन लोक के तीरथ जहाँ, नित प्रति वन्दन कीजै तहाँ।
मन-वच-काय सहित सिरनाय, वंदन करहिं भविक गुणगाय।।
संवत् सतरह सौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल।
'भैया' वन्दन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकाण्ड गुणमाल।।

****

देव-स्तुति

(पण्डित बुधजन कृत)

(हरिगीतिका)

प्रभु पतित पावन, मैं अपावन, चरन आयो सरन जी।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन-मरन जी।।
तुम ना पिछान्यो आन मान्यो, देव विविध प्रकार जी।
या बुद्धिसेती निज न जान्यो, भ्रम गिन्यो हितकार जी।।
भव विकट वन में करम वैरी, ज्ञान धन मेरो हस्यो।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिस्यो।।
धन घड़ी यो धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो।
अब भाग्य मेरो उदय आयो, दरश प्रभु को लख लयो।।
छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासा पै धरैं।
वसु प्रातिहार्य अनंत गुण जुत, कोटि रवि-छवि को हरैं।।
मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिंतामणि लयो।।
मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊँ तुव चरन जी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन-तरन जी।।
जाचूँ नहीं सुर-वास पुनि, नर-राज परिजन साथ जी।
'बुध' जाचहुँ तुव भक्ति भव-भव, दीजिए शिवनाथ जी।।

श्री कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, भिण्ड द्वारा प्रकाशित

सत्साहित्य की सूची

1. श्री वीतराग पूजा मंजरी
2. श्री जिनेन्द्र पूजन-पाठ संग्रह
3. वृहद् आध्यात्मिक पाठ संग्रह
4. चौबीस तीर्थंकर विधान (ब्र. रवीन्द्रजी आत्मन् कृत)
5. पंच बालयति तीर्थंकर विधान (ब्र. रवीन्द्रजी आत्मन् कृत)
6. पंच परमेष्ठी विधान (पंडित टेकचन्दजी कृत)
7. श्री सम्मेद शिखर विधान (कवि राजमलजी पवैया कृत)
8. टेबल कैलेण्डर (सद्वाक्यों सहित)
9. विभिन्न धार्मिक सूक्ति वाक्य के स्टीकर्स
10. आओ बनें अहिंसक
11. कर्तव्याष्टक, सान्त्वाष्टक आदि के पोस्टर्स
12. शिविर का पाठ्यक्रम - बालवर्ग 1-2, किशोर वर्ग, प्रौढ़ वर्ग
13. पद्यानुवाद सरोवर, भाग-3 (पंडित अभयकुमारजी कृत)

आगामी प्रकाशन

1. बारह भावना संग्रह
2. वृहद् आध्यात्मिक पाठ संग्रह (पुनः प्रकाशन)

सत्साहित्य प्रकाशन में आप भी अपना योगदान दे सकते हैं।
सहयोगी का नाम पुस्तक में प्रकाशित किया जाएगा।

भक्ति लहर एवं श्री महावीर वाणी के रूप में भजनों की रिकॉर्डिंग
(कुन्दकुन्द स्वाध्याय यूट्यूब चैनल पर उपलब्ध)

प्रस्तुत प्रकाशन के सहयोगी

15000/- श्रीमती जैनादेवी जैन, इटावा
11111/- गुप्तदान
11000/- गुप्तदान
8000/- श्रीमती अंकिता ध.प. श्री गुंजन बड़जात्या, इन्दौर
5100/- श्रीमती किरण जैन ध.प. श्री डॉ. सुरेश जैन, देव नगर-भिण्ड
5100/- श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री अरुण जैन, इन्दौर
5000/- श्रीमती तृप्ति जैन ध.प. श्री शुभम जैन, कम्पू-ग्वालियर
5000/- श्रीमती अलका जैन ध.प. श्री पंकज जैन, महावीर चौक-भिण्ड
5000/- श्रीमती मोनिका जैन ध.प. श्री पिंकन जैन, दिल्ली
5000/- श्रीमती आँचल जैन ध.प. श्री राजेश जैन, इन्दौर
3100/- श्री दीपक जैन, दिल्ली
2100/- श्रीमती मिथलेश जैन ध.प. श्री वीरेन्द्र जैन, ग्वालियर
2100/- श्रीमती समता जैन ध.प. श्री देवेन्द्रकुमार जैन, ग्वालियर
2100/- श्रीमती विनीता जैन ध.प. श्री राजेन्द्र जैन (मेहगाँव वाले), इन्दौर
2100/- श्रीमती अंकिता ध.प. श्री गुंजन बड़जात्या, इन्दौर
2100/- श्री पूरनचन्द जैन, गुना
2100/- श्री चक्रेश जैन (मौ वाले), खण्डा रोड-भिण्ड
2100/- श्री नरेन्द्र जैन, गुडलक वॉच कंपनी-भिण्ड
2000/- गुप्तदान
1100/- गुप्तदान
1100/- श्री आनन्द जैन शनी जैन, देव नगर-भिण्ड
1100/- श्रीमती रीना जैन, देव नगर-भिण्ड
1100/- श्रीमती कुसुम जैन ध.प. श्री भागचन्द जैन, अहमदाबाद
1100/- श्रीमती कुसुम जैन ध.प. श्री अरविंद रपरिया, देव नगर-भिण्ड

1100/- श्री राजीव जैन, चेतन जनरल स्टोर, भिण्ड
1100/- श्रीमती सीमा जैन ध.प. श्री प्रदीप जैन, गल्ला मण्डी-भिण्ड
1100/- श्रीमती मिथलेश जैन ध.प. श्री महेश जैन (अमायन वाले), भिण्ड
1100/- श्री अरविन्दकुमार जैन, मुरैना
1100/- श्री अरविन्द जैन-सविता जैन, मुरैना
1100/- श्रीमती जैयनादेवी जैन ध.प. श्री महावीरप्रसाद जैन
1100/- श्रीमती शारदा जैन ध.प. श्री अमरन्तकान्त रपरिया, भिण्ड
1100/- श्रीमती मोतीरानी जैन ध.प. श्री नरेश जैन, इन्दौर
1100/- डॉ. डी.के. जैन पुत्र डॉ. सौरभ जैन, भिण्ड
1100/- श्री ओमप्रकाश जैन, ओम नगर-फिरोजाबाद
1100/- श्रीमती ममता जैन ध.प. श्री शान्तिकुमार जैन, चेरकी
1100/- श्री स्वदेश मोहक जैन, भिण्ड
1100/- श्री संजय जैन-शिखा जैन, कालानी नगर-इन्दौर
1100/- श्रीमती सीमा-प्रदीप जैन, गल्ला मण्डी-भिण्ड
1100/- कान्ति जैन, इन्दौर
1000/- स्व. अमिता देवी ध.प. श्री इन्द्रसेन जैन, देवनगर-भिण्ड
600/- श्री मोहक जैन पुत्र श्री स्वदेश जैन, देव नगर-भिण्ड
500/- गुप्तदान
500/- श्री अंकित जैन पुत्र श्री पवनकुमार जैन
500/- श्रीमती रीना जैन, देव नगर-भिण्ड
500/- श्रीमती शशी जैन ध.प. श्री हरिश्चन्द्र जैन (पेट्रोलपंप वाले), भिण्ड
500/- ईशा-गौरव-मिष्टि जैन, बैंगलोर
500/- श्रीमती मंजू जैन ध.प. श्री अशोक जैन, देव नगर-भिण्ड
500/- श्री आनन्द कुमार अंशुल कुमार जैन, भिण्ड
500/- श्रीमती शिल्पा जैन ध.प. श्री वरुण जैन, ग्वालियर
500/- श्री सुभाषचन्द्र जैन, महावीर ऑप्टीकल-भिण्ड
500/- श्रीमती रेखा जैन बजाज, गल्ला मण्डी-भिण्ड

500/- श्रीमती चेतना जैन सुरभि जैन, पीपरी वाले
500/- पण्डित श्री सुरेन्द्रकुमार जैन, इन्दौर
500/- श्री प्रखर जैन पुत्र श्री प्रवीणकुमार जैन, ऊषा कॉलोनी-भिण्ड
500/- श्रीमती अलका जैन ध.प. श्री अखलेश जैन, देव नगर-भिण्ड
500/- श्रीमती अलका जैन ध.प. श्री आलोक जैन, गल्ला मण्डी-भिण्ड
500/- श्री सुनील जैन सर्राफ, आदर्श नगर-भिण्ड
500/- गुप्तदान
500/- श्रीमती संध्या जैन ध.प. श्री दिनेश जैन, देव नगर-भिण्ड
500/- श्रीमती मीरा जैन ध.प. श्री छोटेलाल जैन, महावीर गंज-भिण्ड
500/- श्री नित्यम जैन पुत्र श्री रजित जैन शास्त्री, सुभाष नगर-भिण्ड
500/- श्रीमती नीलम जैन ध.प. श्री राजीव जैन, रानीपुरा वाले-भिण्ड
500/- श्रीमती रश्मि जैन ध.प. श्री प्रवीण जैन, भिण्ड
250/- श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री अजीत जैन, रानीपुरा वाले-भिण्ड
250/- श्रीमती लाली जैन ध.प. श्री पदम जैन, रानीपुरा वाले-भिण्ड
200/- श्रीमती मोतीरानी जैन ध.प. श्री नरेशचन्द जैन, जसवन्तनगर
200/- श्री सतेन्द्र जैन पवन जैन, लश्कर रोड-भिण्ड
100/- श्रीमती मुन्नी देवी ध.प. श्री बुद्धसेन जैन पी. पी.

- **संस्कार बिना सुविधाएँ पतन का कारण हैं।**
- **आलस छोड़ो, क्रिया सुधारो, ज्ञानाभ्यास करो।**
- **हमारे जीवन के संस्कारों का प्रथम मंगलाचरण जिनमन्दिर है।**
- **पुण्य के उदय से प्राप्त वैभव में प्रसन्नता होना रौद्रध्यान है।**
- **भूल को छिपाने का नहीं, मिटाने का उपाय करना चाहिए।**
- **ऐसी चतुराई किस काम की, जो चतुर्गति में परिभ्रमाये।**

श्री बाहुबली पूजन

(श्री राजमलजी पवैया कृत)

(वीर छन्द)

जयति बाहुबलि स्वामी, जय जय करूँ वंदना बारम्बार।
निज स्वरूप का आश्रय लेकर, आप हुए भवसागर पार।।
हे त्रैलोक्यनाथ! त्रिभुवन में, छाई महिमा अपरम्पार।
सिद्धस्वपद की प्राप्ति हो गई, हुआ जगत में जय-जयकार।।
पूजन करने मैं आया हूँ, अष्ट द्रव्य का ले आधार।
यही विनय है चारों गति के, दुख से मेरा हो उद्धार।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

उज्ज्वल निर्मल जल प्रभु पद-पंकज में आज चढ़ाता हूँ।
जन्म-मरण का नाश करूँ, आनन्दकन्द गुण गाता हूँ।।
श्री बाहुबलि स्वामी प्रभुवर, चरणों में शीश झुकाता हूँ।
अविनश्वर शिवसुख पाने को, नाथ शरण में आता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

शीतल मलय सुगन्धित पावन, चन्दन भेंट चढ़ाता हूँ।
भव आताप नाश हो मेरा, ध्यान आपका ध्याता हूँ।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम शुभ्र अखण्डित तन्दुल, हर्षित चरण चढ़ाता हूँ।
अक्षयपद की सहज प्राप्ति हो, यही भावना भाता हूँ।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम-शत्रु के कारण अपना, शील स्वभाव न पाता हूँ।
काम-भाव का नाश करूँ मैं, सुन्दर पुष्प चढ़ाता हूँ।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृष्णा की भीषण ज्वाला में, प्रतिपल जलता जाता हूँ।
क्षुधा-रोग से रहित बनूँ मैं, शुभ नैवेद्य चढ़ाता हूँ।।
श्री बाहुबलि स्वामी प्रभुवर चरणों में शीश झुकाता हूँ।
अविनश्वर शिव सुख पाने को, नाथ शरण में आता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह ममत्व आदि के कारण, सम्यक् मार्ग न पाता हूँ।
यह मिथ्यात्व तिमिर मिट जाये, प्रभुवर दीप चढ़ाता हूँ।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

है अनादि से कर्मबन्ध दुखमय, न पृथक् कर पाता हूँ।
अष्टकर्म विध्वंस करूँ, अत एव सु-धूप चढ़ाता हूँ।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज भाव संपदा युक्त होकर, भी भव-दुख पाता हूँ।
परम मोक्षफल शीघ्र मिले, उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्य भाव से स्वर्गादिक पद, बार-बार पा जाता हूँ।
निज अनर्घ्य पद मिला न अब तक, इससे अर्घ्य चढ़ाता हूँ।।श्री.।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(वीरछन्द)

आदिनाथ सुत बाहुबलि प्रभु, मात सुनन्दा के नन्दन।
चरम शरीरी कामदेव तुम, पोदनपुर पति अभिनन्दन।।
छह खण्डों पर विजय प्राप्त कर, भरत चढ़े वृषभाचल पर।
अगणित चक्री हुए नाम लिखने को मिला न थल तिल भर।।
मैं ही चक्री हुआ, अहं का मान धूल हो गया तभी।
एक प्रशस्ति मिटाकर अपनी, लिखी प्रशस्ति स्व हस्त जभी।।

चले अयोध्या किन्तु नगर में, चक्र प्रवेश न कर पाया।
ज्ञात हुआ लघु भ्रात बाहुबलि सेवा में न अभी आया।।
भरत चक्रवर्ती ने चाहा, बाहुबलि आधीन रहे।
ठुकराया आदेश भरत का, तुम स्वतंत्र स्वाधीन रहे।।
भीषण युद्ध छिड़ा दोनों भाई के मन संताप हुए।
दृष्टि-मल्ल-जल युद्ध भरत से करके विजयी आप हुए।।
क्रोधित होकर भरत चक्रवर्ती, ने चक्र चलाया है।
तीन प्रदक्षिणा देकर कर में, चक्र आपके आया है।।
विजय चक्रवर्ती पर पाकर, उर वैराग्य जगा तत्क्षण।
राज्यपाट तज ऋषभदेव के, समवशरण को किया गमन।।
धिक्-धिक् यह संसार और, इसकी असारता को धिक्कार।
तृष्णा की अनन्त ज्वाला में, जलता आया है संसार।।
जग की नश्वरता का तुमने, किया चिंतवन बारम्बार।
देह भोग संसार आदि से, हुई विरक्ति पूर्ण साकार।।
आदिनाथ प्रभु से दीक्षा ले, व्रत संयम को किया ग्रहण।
चले तपस्या करने वन में, रत्नत्रय को कर धारण।।
एक वर्ष तक किया कठिन तप, कायोत्सर्ग मौन पावन।
किन्तु शल्य थी एक हृदय में, भरत-भूमि पर है आसन।।
केवलज्ञान नहीं हो पाया, एक शल्य ही के कारण।
परिषह शीत ग्रीष्म वर्षादिक, जय करके भी अटका मन।।
भरत चक्रवर्ती ने आकर, श्री चरणों में किया नमन।
कहा कि वसुधा नहीं किसी की, मान त्याग दो हे भगवन्।।
तत्क्षण शल्य विलीन हुई, तुम शुक्ल ध्यान में लीन हुए।
फिर अन्तर्मुहूर्त में स्वामी, मोह क्षीण स्वाधीन हुए।।
चार घातिया कर्म नष्ट कर, आप हुए केवलज्ञानी।
जय जयकार विश्व में गूँजा, सारी जगती मुसकानी।।

झलका लोकालोक ज्ञान में, सर्व द्रव्य गुण पर्यायें।
एक समय में भूत भविष्यत्, वर्तमान सब दर्शायें।।
फिर अघातिया कर्म विनाशे, सिद्ध लोक में गमन किया।
अष्टापद से मुक्ति हुई, तीनों लोकों ने नमन किया।।
महा मोक्ष फल पाया तुमने, ले स्वभाव का अवलंबन।
हे भगवान बाहुबलि स्वामी, कोटि-कोटि शत-शत वंदन।।
आज आपका दर्शन करने, चरण-शरण में आया हूँ।
शुद्ध स्वभाव प्राप्त हो मुझको, यही भाव भर लाया हूँ।।
भाव शुभाशुभ भव निर्माता, शुद्ध भाव का दो प्रभु दान।
निज परिणति में रमण करूँ प्रभु, हो जाऊँ मैं आप समान।।
समकित दीप जले अन्तर में, तो अनादि मिथ्यात्व गले।
राग-द्वेष परिणति हट जाये, पुण्य पाप सन्ताप टले।।
त्रैकालिक ज्ञायक स्वभाव का, आश्रय लेकर बढ़ जाऊँ।
शुद्धात्मानुभूति के द्वारा, मुक्ति शिखर पर चढ़ जाऊँ।।
मोक्ष-लक्ष्मी को पाकर भी, निजानन्द रस लीन रहूँ।
सादि अनन्त सिद्ध पद पाऊँ, सदा सुखी स्वाधीन रहूँ।।
आज आपका रूप निरख कर, निज स्वरूप का भान हुआ।
तुम-सम बने भविष्यत् मेरा, यह दृढ़ निश्चय ज्ञान हुआ।।
हर्ष विभोर भक्ति से पुलकित, होकर की है यह पूजन।
प्रभु पूजन का सम्यक् फल हो, कटें हमारे भव बंधन।।
चक्रवर्ति इन्द्रादिक पद की नहीं कामना है स्वामी।
शुद्ध बुद्ध चैतन्य परम पद पायें हे! अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

घर-घर मंगल छाये जग में वस्तु स्वभाव धर्म जानें।
वीतराग विज्ञान ज्ञान से, शुद्धातम को पहिचानें।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

।। श्री पंच बालयति पूजन ।।

(कवि श्री अरदासजी कृत)

(दोहा)

श्री जिन पंच अनंग-जित, वासुपूज्य मल्लि नेम।
पारसनाथ सु वीर अति, पूजूँ चित-धरि प्रेम।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति-तीर्थंकरा:! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्! (आह्वानम्)

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति-तीर्थंकरा:! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः! (स्थापनम्)

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति-तीर्थंकरा:! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्! (सन्निधिकरणम्)

शुचि शीतल सुरभि सुनीर, लायो भर झारी,
दुख जामन मरन गहीर, या कों परिहारी।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन केशर कर्पूर, जल में घसि आनो,
भव-तप-भंजन सुखपूर, तुमको मैं जानो।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

वर अक्षत विमल बनाय, सुवरण-थाल भरे,
बहु देश-देश के लाय, तुमरी भेंट धरे।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह काम सुभट अतिसूर, मन में क्षोभ करो,
मैं लायो सुमन हुजूर, या को वेग हरो।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् रस पूरित नैवेद्य, रसना-सुखकारी,
द्वय कर्म वेदनी छेद, आनंद ह्वै भारी।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि दीपक जगमग ज्योति, तुम चरणन आगे,
मम मोहतिमिर क्षय होत, आतम गुण जागे।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले दशविधि धूप अनूप, खेऊँ गंधमयी,
दश बंध दहन जिनभूप, तुम हो कर्मजयी।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-

तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता अरु दाख बदाम श्रीफल लेय घने,
तुम चरण जजूँ गुणधाम द्यो सुख मोक्ष तने।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ, अरघ बनावत हूँ,
वसुकर्म अनादि संयोग ताहि नशावत हूँ।
श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अति,
नमूँ मन वच तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

बाल ब्रह्मचारी भये, पाँचों श्री जिनराज।
तिनकी अब जयमालिका, कहूँ स्व-पर हितकाज।।

(पद्धरि छन्द)

जय जय जय जय श्री वासुपूज्य, तुम-सम जग में नहिं और दूज।
तुम महाशुक्र-सुरलोक छार, जब मात गर्भ-माहीं पधार।।
षोडश सपने देखे सुमात, बल अवधि जान तुम जन्म तात।
अति हर्ष धार दंपति सुजान, बहुदान दियो याचक-जनान।।
छप्पन कुमारिका तबै आन, तुम मात-सेव बहुभक्ति ठान।
छह मास अगाऊ गर्भ आय, धनपति सुवरन-नगरी रचाय।।

तुम तात महल आंगन मँझार, तिहुँ काल रतनधारा अपार।
वरषाये षट् नवमास सार, धनि जिन-पुरुषन नयनन निहार।।
जय 'मल्लिनाथ' देवन सुदेव, शत-इन्द्र करत तुम चरण-सेव।
तुम जन्मत ही त्रय ज्ञान धार, आनंद भयो तिहुँजग अपार।।
तब ही ले चहुँ विधि देव-संग, सौधर्म इन्द्र आयो उमंग।
सजि गज ले तुम हरि गोद आप, वन पांडुक शिल ऊपर सुथाप।।
क्षीरोदधि तैं बहु देव जाय, भरि जल घट हाथों हाथ लाय।
करि न्हवन वस्त्र-भूषण सजाय, दे मात नृत्य तांडव कराय।।
पुनि हर्ष धार हृदय अपार, सब निर्जर तब जय-जय उचार।
तिस अवसर आनंद हे जिनेश, हम कहिवे समरथ नहीं लेश।।
जय यादवपति श्री 'नेमिनाथ', हम नमत सदा जुगजोरि हाथ।
तुम ब्याह समय पशुअन पुकार, सुनि तुरत छुड़ाये दया धार।।
कर कंकण अरु सिर मोर बंद, सो तोड़ भये छिन में स्वच्छंद।
तब ही लौकान्तिक-देव आय, वैराग्य वर्धनी थुति कराय।।
तत्क्षण शिविका लायो सुरेन्द्र, आरूढ़ भये ता पर जिनेन्द्र।
सो शिविका निजकंधन उठाय, सुर नर खग मिल तपवन ठराय।।
कच लौंच वस्त्र भूषण उतार, भये जती नगन मुद्रा सुधार।
हरि केश लेय रतनन पिटार, सो क्षीर उदधि माहीं पधार।।
जय 'पारसनाथ' अनाथ नाथ, सुर-असुर नमत तुम चरण माथ।
जुग-नाग जरत कीनो सुरक्ष, यह बात सकल-जग में प्रत्यक्ष।।
तुम सुरधनु-सम लखि जग असार, तप तपत भये तन ममत छाँड़।
शठ कमठ कियो उपसर्ग आय, तुम मन-सुमेरु नहिं डगमगाय।।

तुम शुक्लध्यान गहि खड्ग हाथ, अरि च्यारि घातिया करे सुघात।
उपजायो केवलज्ञान भानु, आयो कुबेर हरि वच प्रमाण।।
की समवसरण रचना विचित्र, तहाँ खिरत भई वाणी पवित्र।
मुनि सुर नर खग तिर्यंच आय, सुनि निज निज भाषा बोध पाय।।
जय 'वर्धमान' अंतिम जिनेश, पायो न अंत तुम गुण गणेश।
तुम च्यारि अघाती कर महान, लियो मोक्ष स्वयं सुख अचल थान।।
तब ही सुरपति बल अवधि जान, सब देवन युत बहु हर्ष ठान।
सजि निजवाहन आयो सुतीर, जहँ परमौदारिक तुम शरीर।।
निर्वाण महोत्सव कियो भूर, ले मलयागिर चंदन कपूर।
बहुद्रव्य सुगंधित सरस सार, ता में श्री जिनवर वपु पधार।।
निज अगनि कुमारिन मुकुट नाय, तिहँ रतनन शुचि ज्वाला उठाय।
तस सर माहिं दीनी लगाय, सो भस्म सबन मस्तक चढ़ाय।।
अति हर्ष थकी रचि दीप माल, शुभ रतन मंइ दश-दिश उजाल।
पुनि गीत-नृत्य बाजे बजाय, गुण गाय-ध्याय सुरपति सिधाय।।
सो थान अबै जग में प्रत्यक्ष, नित होत दीपमाला सुलक्ष।
हे जिन तुम गुण महिमा अपार, वसु सम्यक् ज्ञानादिक सुसार।।
तुम ज्ञान माहिं तिहुँलोक दर्व, प्रतिबिम्बित हैं चर अचर सर्व।
लहि आतम अनुभव परम ऋद्धि, भये वीतराग जग में प्रसिद्ध।।
ह्वे बालयती तुम सबन एम, अचरज शिव कांता वरी केम।
तुम परम शांति मुद्रा सुधार, किया अष्ट कर्म रिपु को प्रहार।।
हम करत वीनती बार-बार, करजोर स्व-मस्तक धार-धार।
तुम भये भवोदधि पार-पार, मोको सुवेग ही तार-तार।।

अरदास दास ये पूर-पूर, वसु-कर्म-शैल चकचूर-चूर।
दुख-सहन दास अब शक्ति नाहिं, गहि चरण-शरण कीजे निवाह।।

(चौपाई)

पाँचों बालयती तीर्थेश, तिनकी यह जयमाल विशेष।
मन वच काय त्रियोग सम्हार, जे गावत पावत भव-पार।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति-तीर्थंकरजिनेन्द्रेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

ब्रह्मचर्य सों नेह धरि, रचियो पूजन ठाठ।
पाँचों बालयतीन का, कीजे नित प्रति पाठ।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

श्री पंच-परमेष्ठी पूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

(दोहा)

पंच परम पद ज्ञानमय, अंतर माहिं दिखाँय।
हुआ सहज विश्रान्त मन, चिद् विभूति विलसाँय।।
निज प्रभु की प्रभुता निरख, आनन्द भयो अपार।
भावमयी पूजन अहो, निश्चय शिव-दातार।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर-अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ, तिष्ठ, ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

(छन्द-चौपाई-आँचलीबद्ध)

ज्ञायकमय दृष्टि प्रकटाय, समता सों पूजों शिवदाय।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।।
ज्ञायक ही पाँचों पद माहिं, अंतर दृष्टि सहज दरशाय।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल भावमय चंदन पाय, भव आताप सहज विनशाय।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।। ज्ञायक ही..।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो अखण्ड स्वभाव सुहाय, अक्षय रूप भावना भाय।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।। ज्ञायक ही..।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञायक भाव परम निष्काम, होवे ब्रह्मचर्य अम्लान।

महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।। ज्ञायक ही..।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज तृप्त शुद्धातम जान, प्रगट भयो संतोष महान।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।।
ज्ञायक ही पाँचों पद माहिं, अंतर दृष्टि सहज दरशाय। महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज प्रकाशित ज्ञायक लोक, झलके जामें लोकालोक।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।। ज्ञायक ही..।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्येय रूप का ध्यान जगाय, धर्म सुगंध सहज महकाय।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।। ज्ञायक ही..।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञायक प्रभु परिपूर्ण दिखाय, शिववाँछा भी नहीं उपजाय।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।। ज्ञायक ही..।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उपादेय शुद्धातम भाय, स्थिरता मय अर्घ्य चढ़ाय।
महासुख होय, जय-जय नाथ परम सुख होय।। ज्ञायक ही..।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

शुद्धातम ही देव है, निश्चय गुरु पहिचान।
दर्शावें श्री पंच गुरु, करूँ सहज गुणगान।।

(छन्द-चौपाई)

निज ज्ञायक दृष्टि में आवे, ज्ञानी शिवसाधक कहलावे।

गृहस्थपना तज मुनि हो जावे, ध्येय रूप का ध्यान लगावे।।
निज स्वभाव साधन के द्वारा, नाशे घातिकर्म दुखकारा।
अनंत चतुष्टय रूप विराजें, लोकालोक ज्ञान में साजें।।
अरहंत रूप परम अविकारा, मुक्ति-मार्ग दरशावनहारा।
अन्तर्दृष्टि प्रभो प्रकटाई, हो अद्वैत नमन सुखदाई।।
सकल कर्म तज मुक्ति पधारे, सिद्ध प्रभु आदर्श हमारे।
अशरीरी भी ज्ञान शरीरा, त्रिविध कर्ममल वर्जित धीरा।।
करना कुछ भी शेष नहीं है, पूर्ण शुद्धता विलस रही है।
जिनके गुण चिंतन कर प्राणी, समझ स्वभाव वरे शिवरानी।।
सिद्ध प्रभु ज्यों जाननहार, त्यों मैं भी हूँ जाननहार।
पूर्ण अपूर्ण विकल्प नहीं है, अहो द्रव्य दृष्टि प्रकटी है।।
होय विरागी परिग्रह त्यागी, परिणति शुद्धातम में पागी।
प्रचुर स्वसंवेदनमय जीवन, मुनिसंघ के नायक पावन।।
भव्यों के निरपेक्ष सहाई, सम्यकब दीक्षा दें सुखदाई।
दोष लगे प्रायश्चित करावें, धर्म ध्वजा जग में फहरावें।।
हो भव क्लान्त शरण में आया, तुम ढिंग निजानंद प्रकटाया।
धर्ममूर्ति आचार्य नमामी, निर्ग्रन्थ दशा होय कब स्वामी।।
द्वादशांग का सार आत्मा, ध्येय रूप परमार्थ आत्मा।
स्वयं मग्न औरन समझावें, संघ माहिं जो पढ़ें पढ़ावें।।
उपाध्याय पदवी जिन पाई, ज्ञान माहिं जो होय सहाई।
वे गुरुवर सबको सुखदाता, आगम अध्यातम के ज्ञाता।।
विषय कषायारंभ नहीं है, ज्ञान ध्यान तप लीन सही है।
रत्नत्रय निधि परिग्रह हारी, ज्ञानसुधा भोजन व्रतधारी।।
लेश प्रपंच न जिनके अंदर, शुद्धातम आराधक मुनिवर।
देहादिक परद्रव्य मँझारा, इष्ट-अनिष्ट न होय विचारा।।
अद्भुत समता धारी संत, तिहुँ जग वंदनीय निर्ग्रन्थ।

जग में पंच परमपद सार, भविजीवों के तारणहार।।
सहज स्वभाव सु जाननहार, परिणति में भी जाननहार।
जाननहार हूँ सर्व प्रकार, पाया तीन भुवन में सार।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

तीन भुवन में सार, निज ज्ञायक प्रभु अविकार।
ध्येय रूप का ध्यान धर, निश्चय हो भवपार।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

दीपमालिका पर्व पूजन

(बाल ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' कृत)

नाम ग्रहण भी श्री जिनवर का दर्शन सर्व पाप हारी।
अहो! प्रवर्ते धर्म तीर्थ, जिनके वचनों से हितकारी।।
शासन नायक मुक्ति विधायक, अहो अलौकिक रूप लखा।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर लक्षण जगत प्रसिद्ध दिखा।।

(दोहा)

चरण कमल को पूजते, हृदय हर्ष अपार।
ज्ञान-दीप प्रकाश से, जगमग सब संसार।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलप्राप्त-श्रीवर्धमानजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलप्राप्त-श्रीवर्धमानजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलप्राप्त-श्रीवर्धमानजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

उपादेय निज आतम देव, निज प्रभुता निज में स्वयमेव।

शंका तत्त्व माहिं नहीं आय, श्रद्धा दृढ़तामय प्रकटाय।।
सम्यक् नीर परम सुखदाय, जन्म जरा मृत भय विनशाय।
प्रभु ने पाया पद निर्वाण, दीपमालिका पर्व महान।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जग प्रपंच से चित्त घबराय, शरण जिनेश्वर की ही पाय।
कांक्षा भोगों की विनशाय, दूजा गुण समकित प्रकटाय।।
परिणति में शीतलता आय, भव-आताप सहज विनशाय।।प्रभु.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में धर्म प्रवर्तन हो, मुक्ति मार्ग में वर्तन हो।
साधर्मी लखि परम हुलास, मलिन भाव हो जावें नाश।। भोगों
प्रति ग्लानि उपजाय, अक्षय परमातम पद पाय।।प्रभु.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान-ध्यान-मय मार्ग सुहाय, ध्रुव परमेश्वर निज में पाय।
साँचे-झूठे की पहिचान, नहीं मूढ़ता किंचित् आन।।
प्रभु ने पाया पद निर्वाण, दीपमालिका पर्व महान।।
काम भाव दुर्गति का भूप, उत्तम शील सहज सुख रूप।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

महाभाग्य मंगल जिनशासन, पाया श्री गुरुवर अनुशासन।
निज दोषों प्रति सहज विराग, उपगूहन गुण में अनुराग।।
तत्त्व प्रयोजनभूत पिछान, क्षुधा वेदना नहीं अभिमान।।प्रभु.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय

क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु पथ के अनुगामी हो, सहजपने शिवगामी हो।
पर दोषों में नहीं उलझाय, प्रायश्चित्त ले थिरता पाय।।
मोह-अँधेरा तुरत नशाय, ज्ञान दीप अंतर प्रज्वलाय।।प्रभु.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

साधर्मी प्रति गौ सम प्रीति, निज धर्मी में अतिशय प्रीति।
शुद्धातम की धुनि लगाय, अष्टकर्म धू-धू जल जाय।।
दुखमय आवागमन मिटाय, अनंत चतुष्टय गुण प्रकटाय।। प्रभु.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनशासन माहात्म दिखाय, हो प्रभावना मंगलदाय।
तिष्ठे मोक्ष महल के शीस, प्रभु चरणन में नाऊँ शीस।।
वीर प्रभु निर्वाण दिवस, गणधर केवलज्ञान दिवस।। प्रभु.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन-ज्ञान अनूप, निज आराधन ही सुख रूप।
सम्यक्चारित्र रतन कहाय, अशरीरी ध्रुव पद प्रकटाय।।
धर्म महोत्सव मंगलकार, जजूँ अर्घ्य ले शिवसुख कार।। प्रभु.।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्वाण महोत्सव अर्घ्य

कार्तिक कृष्ण अमावस्या पावन भई।
वीर जिनेश्वर पावापुर से शिव मही।।
सुरपति ने आ मोक्ष कल्याण मनाइयो।

हम भी प्रकटावें मिल भाव जगाइयो।।
गौतम गणधर केवलज्ञान लहो महा।
आत्मज्योति से रत्नदीप जगमगें सदा।।
प्रभुवर का निर्वाण दिवस सुखकार है।
हम सबके कल्याणक का आधार है।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

जयमाला

(दोहा)

शासन वीर जिनेश का, शाश्वत मंगलकार।
पूजन करके गावहूं, जयमाला सुखकार।।

(तर्ज – नाम तुम्हारा तारण हारा.....)

सारी जगती धन्य हुई जब, वसुधा पर अवतरण हुआ।
नरकों में भी साता छाई, अखिल विश्व को शरण मिला।।1।।
बाल ब्रह्मचारी जगतारी, भव भोगों से सहज विरक्त।
जग को मुक्ति पंथ सिखाया, रूप परम पावन निर्ग्रन्थ।।2।।
समवशरण रचकर इन्द्रों ने, निज वैभव को दरशाया।
अनंत चतुष्टय वैभव सन्मुख, था कुवेर भी विस्माया।।3।।
मान गला दर्शन से तत्क्षण, गौतम गणधर पद पाया।
खिरी दिव्य वाणी कल्याणी, धर्म तीर्थ तव प्रवर्ताया।।4।।
शंकायें विघटीं भविजन की, दीक्षा का उल्लास जगा।
पावापुर से सम श्रेणी में, सिद्ध शिला पर वास हुआ।।5।।
वीरनाथ तो मुक्ति पधारे, जगत आपकी ओर लखे।
ज्ञान-ज्ञान में हुआ प्रतिष्ठित, घाति कर्म प्रक्षीण हुए।।6।।
उसी दिवस गौतम स्वामी ने, पाया केवलज्ञान महान।
विरह मिटा प्रभुवर का तत्क्षण, गुरुवर आप स्वयं भगवान।।7।।

हम भी अन्तर्दीप जलावें, मोह-अँधेरा दूर भगे।
सम्यक्भाव विशुद्धि बढ़ावें, धर्म महोत्सव सहज फले।।8।।
फैले घर-घर प्रेम परस्पर, वात्सल्य के दीप जले।
समतामय आराधन होवे, बोधि समाधि उर प्रकटे।।9।।
शासन वीर प्रभु का पाया, मंगलमय मंगलकारी।
जियो और जीने दो सबको, धर्म अहिंसा सुखकारी।।10।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां निर्वाणकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्धमानजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

दर्शन-ज्ञान स्वभावमय, गुण अनंत की खान।
प्रभुवर-गणधर सम लखूँ, निज ज्ञायक भगवान।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)